२७१०

हिंदी भूषण परीक्षा की सहायक पुस्तकें

व्याकरण की प्रश्नोत्तरी

ले०—श्री भीष्मप्रताप शास्त्री, बी. ए. और कविराज रामलाल अग्रवाल,
हिन्दी-प्रभाकर, विशारद

संपादक—श्री धर्मचन्द्र विशारद

इस पुस्तक में हिन्दी का सारा व्याकरण बहुत आसान भाषा में प्रश्न और उत्तर के रूप में समझाया गया है। विद्वान संपादक ने इसे हर तरह से विद्यार्थियों के लिए उपयोगी बना दिया है। पुस्तक लेते समय संपादक का नाम अवश्य देख लें। मूल्य ।-)

व्याकरण का चार्ट

इस चार्ट की सहायता से हिन्दी का सारा व्याकरण १० मिनट में दोहराया जा सकता है। ठीक परीक्षा के समय काम आने वाली चीज़ है। मूल्य ≡)

हिंदी भवन, अनारकली, लाहौर

TO THE READER.

KINDLY use this book very carefully. If the book is disfigured or marked or written on while in your possession the book will have to be replaced by a new copy or paid for. In case the book be a volume of set which single volume is not available the price of the whole set will be realized.

SRI PRATAP COLLEGE,

SRINAGAR.

LIBRARY

Class No. 891.435

Book No. A 48 A

Accession No. 9874

हिन्दी भूषण परीक्षा की सहायक पुस्तकें

रस और अलंकार

(ले०—श्रीयुत रामबहोरी शुक्ल, एम. ए., साहित्यरत्न
प्रोफेसर, क्वींस कालेज, बनारस)

इस पुस्तक में रस और अलंकार का कठिन विषय बड़ी ही सरलता-पूर्वक समझाया गया है। प्रत्येक अलंकार का लक्षण, उदाहरण तथा अलंकारों के आपस के भेद समझाने में विद्वान् लेखक बहुत सफल हुए हैं। सभी उदाहरण आजकल की खड़ी बोली की कविता से दिए गए हैं, जिससे विद्यार्थी बड़ी आसानी से उन्हें समझ सकते हैं। इसको पढ़ कर हिन्दी-भूषण के विद्यार्थियों को और कोई पुस्तक पढ़ने की आवश्यकता नहीं रहती। मूल्य ।।।=) मात्र।

पिंगल परिचय

(ले —पं० रामबहोरी शुक्ल, एम. ए. साहित्यरत्न, क्वींस कालेज, बनारस)

इसमें "अलंकार प्रवेशिका" के सब छन्दों के लक्षण उसी छन्द में देकर उसके उदाहरण खूब समझाकर दिये गये हैं, जिससे विद्यार्थी बहुत आसानी से छन्दशास्त्र को समझ सकते हैं।
मू० ।=)

हिन्दी भवन, अनारकली, लाहौर

आज की दुनियां

लेखक—

अमरनाथ विद्यालंकार

सदस्य, लोक-सेवक मंडल, लाहौर

प्रथम संस्करण

सितम्बर १९३८

मूल्य २॥) अजिल्द
२।॥) सजिल्द

प्रकाशक—
श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार
विश्व साहित्य ग्रन्थमाला,
हस्पताल रोड, लाहौर।

Acc. No: 9874



मुद्रक—
श्रीकृष्ण दीक्षित
बाम्बे मैशीन प्रेस,
मोहनलाल रोड, लाहौर

अपने पाठकों से—

मुझसे जब भाई चन्द्रगुप्त जी ने 'आज की दुनियां' के सम्बन्ध में यह पुस्तक लिखने का आग्रह किया, तभी मैं झिझका। मुझे अपने पर भरोसा न था कि इस विस्तृत विषयके साथ मैं न्याय कर सकूंगा। फिर 'आज की लम्बी चौड़ी दुनियां' को, जिसमें जीवन के इतने पहलू हैं, तीन सौ पृष्ठों में बन्द करना तो मेरे बिरते से बिलकुल बाहर की बात थी! फिर भी भाई चन्द्रगुप्त जी के आग्रह को टालना असम्भव था।

यदि इस छोटी-सी पुस्तक से 'आज की दुनियां' की एक हलकी-सी झलक भी पाठकों को मिल जाय, तो बहुत है। मैं यह भी बतादूं कि यह पुस्तक मैंने उन लोगों को दृष्टि में रख कर लिखी है, जो 'आज की दुनियां' और इसकी समस्याओं के सम्बन्ध में बहुत कम जानते हैं। दुर्भाग्य से हमारे देश में ऐसे लोगों की संख्या बहुत अधिक है। वैसे ही हमारे यहां लोगों को 'आज की दुनियां' की अपेक्षा भूतकाल की दुनियां और इस दुनियां की अपेक्षा परलोक की दुनियां में अधिक दिलचस्पी है। वे-करीब करीब इस बात से बिलकुल बेख़बर हैं कि आज की दुनियां किस तीव्र गति के साथ बढ़ी

चली जा रही है। हममें अधिकांश व्यक्ति अपने पूर्वजों के ग्रन्थों की गठरी को तकिया बनाकर यह समझे सोये पड़े हैं, कि दुनियां का समस्त ज्ञान हमारी इसी गठरी में भरा रक्खा है, और दुनियां चाहे कितनी आगे बढ़ जाय, हमसे आगे नहीं बढ़ सकती। उस मूर्ख खरगोश की-सी हमारी दशा हुई है, जो अपनी दौड़ने की शक्ति पर गर्व करके सोया रहा और कछुए से भी दौड़ की बाज़ी हार गया। और आज तो हम पड़े-पड़े अपने दौड़ने की शक्ति भी खो बैठे हैं। हम अपने आपको पूर्ण तत्वज्ञानी मान बैठे हैं और संतुष्ट हैं। बुद्धिमान समझता है कि उसका ज्ञान बहुत थोड़ा है, परन्तु मूर्ख अपने ज्ञान को ज्ञान की पराकाष्ठा समझता है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक एडिंगटन कहता है—"विज्ञान की उन्नति की परख इस बात से नहीं कि हम कितने प्रश्नों का उत्तर बेखटके दे सकते हैं, बल्कि इस बात से होती है कि हम कितने नये प्रश्न पूछ सकते हैं।" तर्क और विज्ञान हमें बतलाता है कि मानव ज्ञान की सीमाएं अनन्त हैं।

इस 'वैज्ञानिक' दृष्टिकोण के साथ आज मानव समाज अपने वर्तमान और भविष्य को समझने और उनका निर्माण करने का प्रयत्न कर रहा है। इतिहास हमें बतलाता है कि किस प्रकार कुछ हज़ार साल के अर्से में मनुष्य लुढ़कता पुढ़कता ठोकरें खाता, गिरता और उठता निरन्तर बढ़ने का प्रयत्न करते करते पशु समाज में से निकल कर सभ्य मानव समाज के रूपमें आया है। यदि हम इतिहासके रहस्योंको समझनेका प्रयत्न करें

तो हमें सुदूर क्षितिज में मानवता के लक्ष्य की धुंधली-सी झलक दिखाई देगी, प्रभात का चमकता सितारा नज़र आयगा, जिसके प्रकाश में टटोलते टटोलते हम अपने मध्यान्ह के भविष्य की भी कल्पना कर सकेंगे।

यदि इस छोटी-सी पुस्तक से मेरे देशवासियों के हृदय "आज की दुनियां" और मानव जाति के सांझे भविष्य के सम्बन्ध में कुछ दिलचस्पी उत्पन्न हो सके और इसे समझने के लिये वे उपर्युक्त 'वैज्ञानिक दृष्टिकोण' को अपनाने के लिये उत्साहित हो सकें तो मैं अपने प्रयत्न को सफल समझूँगा।

जगजीत नगर
(शिमला हिल्स)
७ सितम्बर १९३८

अमरनाथ विद्यालंकार

विषय-सूची

आज की दुनियां

आज की दुनियां

प्रथम अध्याय

यह दुनियां

(१)

अनन्त की तलाश में

यह दुनियां कितनी विशाल है। जिस दिन से मनुष्य ने होश सम्हाली है, उसी दिन से वह इस जगत की विशालता का अन्दाज़ा लगाने और उसका प्रत्यक्ष अनुभव करने की चेष्टा कर रहा है। परन्तु उसका ज्ञान जितना बढ़ता जाता है, जगत की विशालता की सीमाएँ भी बढ़ती हुई नज़र आती हैं। अनन्तता का क्षितिज दूर ही दूर दिखाई देता है।

इस जगत के इतिहास की धारा अनन्त काल से बहती चली आ रही है । इस अनन्तता के मुकाबले में मनुष्य के पृथ्वी पर अवतरित होने की घटना अभी कल की घटना प्रतीत होती है । उस समय तो मनुष्य धरती पर इकला ही था । उससे पहले उससे बहुत भिन्न छोटे बड़े जानवरों का एकाधिपत्य था । उसने अपने आसपास देखा और इस विचित्र दुनिया के सम्बन्ध में नाना प्रकार के सवाल किये । परन्तु वहाँ उसे उत्तर देने वाला कौन था ? जिस प्रकृति ने उसे सवाल पूछने की शक्ति दी थी उसी प्रकृति से और उसी की दी हुई शक्ति के सहारे उसने स्वयं ही उन प्रश्नों का उत्तर देना आरम्भ किया । इस शक्ति का नाम उसने 'बुद्धि' रखा । धीरे-धीरे उसने अपने अनुभवों और तजुर्बों को इकट्ठा किया । इस जगत के सम्बन्ध में नाना प्रकार की धारणाएँ बनायीं और बाद में नये अनुभवों की सहायता से उन धारणाओं में तबदीलियाँ भी कीं । मनुष्य की खोज अभी तक जारी है । आज तक उसने बहुत सी बातें मालूम कर ली हैं, और उनसे बहुत ज्यादा अभी मालूम करने को बाकी हैं । अभी वह अपनी जिज्ञासा की चरम सीमा से बहुत दूर है । अभी संसार में उसकी ज्ञान-पिपासा को भस्म करने के लिए उसकी बुद्धि की भूख को मिटाने के लिए अनन्त सामग्री धरी है । जिस दिन उसकी इस भूख को मिटाने में सामग्री चुक जायगी, सम्भवतः उस दिन उस जीवन का भी अन्त हो जायगा । परन्तु अभी तो वह अपनी बुद्धि और ज्ञानकी शक्ति पर विश्वास करके इस असीम

जगत की सीमा को खोजने निकला है, और इस अनन्त की राह का राही बना है।

अपने इतिहास के प्रारम्भ में मनुष्य के पास न ज्ञान था, न ज्ञान प्राप्त करने के पर्याप्त साधन थे। अपने चर्म-चक्षुओं से वह इस जगत को देखता था। जंगल में नाना प्रकार के जानवरों के नाना प्रकार के शब्दों को सुनता था। इनमें से कोई कोई बहुत डरावने थे, और कोई कोई बहुत भले और सुन्दर थे। आसमान में सूरज, चाँद और तारागण-प्रभात और संध्या दिन और रात बादल, वर्षा और बिजली ये सब उसके लिये हर समय के अचरज और अचम्भे थे। इन्हें देख देखकर वह कभी अपनी पेट पूजा से निवृत्त होकर बैठा कुछ सोचा करता। कभी कभी आसमानपर रंगों की झिलमिल, खिली चांदनी की छटा और टिमटिमाते तारों की अनन्तता को देखकर उसका हृदय आनन्द से नाच उठता था—वे सब उसे इतने भले और सुन्दर प्रतीत होते थे। परन्तु कभी कभी काली रातों में मेघों की डरावनी आकृति देखकर और बिजली की कड़क सुन कर वह भय से कांप उठता था। परन्तु आनन्द हो या भय, दोनों ही अवस्थाओं में वह सोचा करता था कि आखिर यह सब क्या है ? क्यों है ? घने जंगलों से लुढ़कता पुढ़कता वह मैदानों में आया. हज़ारों सालों के परिश्रम से उसने जंगलों को साफ़ कर के लहलहाती खेतियों में तबदील किया। धीरे धीरे पृथ्वी का अन्त नापने की चेष्टा में वह उसके ओर छोर में फैल गया और जगह जगह अपनी वस्तियाँ बसाकर रहने लगा।

परन्तु इस सारे अर्से में वह निरन्तर इस 'क्या" और "क्यों" के प्रश्न को हल करने में लगा रहा। इसको हल करने के लिये उसने नाना प्रकार की कल्पनाएं कीं, नाना प्रकार के उत्तर सोचे, और जगत के सम्बन्ध में नाना प्रकार की धारणाएं कायम कीं।

(२)

दुनियां के सम्बन्ध में पुरानी धारणाएं

प्रारम्भिक युग के एक साधारण मनुष्य की समझ में इतना ही आ सकता था कि यह ज़मीन एक चपटे फ़र्श के समान है। इस पर आसमान की छत है, जिस पर रौशनी के लिये सूरज और चांद के दो कंडील लटकाये गये हैं जिनमें से एक दिन को जलाया जाता है, और दूसरा रात को। इस छत को अधिक सजाने के लिये नन्हे नन्हे तारे लगाये गये हैं। यह सब कुछ उसे इतना बड़ा अचम्भा लगता था कि वह, यह मान ही नहीं सकता था कि यह सब कुछ किसी कुशल कारीगर की रचना नहीं है। उसने देखा कि जगत की प्रत्येक वस्तु किसी आधार पर रखी हुई है। इतनी बड़ी पृथ्वी और आसमान बग़ैर किसी आधार पर लटके हुए होंगे, यह बात उस समय मनुष्य की कल्पना में समा न सकती थी। इसलिये उसने धरती का बोझ उठाने वाले की कल्पना की। कभी सोचा कि इसे किसी महादैत्य ने अपनी पीठ पर उठा रखा है। कभी किसी बैल के सींगों पर, कभी किसी कछुए की पीठ पर ज़मीन के आश्रित होने की कल्पना की गयी। तिब्बत के लामा लोगों के विचार के अनुसार ज़मीन एक बड़े

मेंढक की पीठ पर धरी है, जो कि एक महासमुद्र में तैर रहा है। इसी प्रकार की कल्पनाएं उसने सृष्टि की रचना के सम्बन्ध में भी कीं।

दक्षिणी अमेरिका की एक जाति का विश्वास है कि इस सृष्टि की रचना एक पहाड़ी कौए ने की। इस पहाड़ी के चारों ओर जल ही जल था। वह कौआ अपनी चोंच में पकड़ कर पृथ्वी को जल से बाहर निकाल लाया। उस कौए की आंखों से आग की लपटें निकलती थीं उनसे पृथ्वी पर अग्नि की उत्पत्ति हुई।

एक और कल्पना के अनुसार यह पृथ्वी एक दैत्य के शरीर से बनायी गई। वह दैत्य परमात्मा से दुश्मनी करता था इस लिए परमात्मा ने उसे मार दिया और उसके शरीर के दो टुकड़े किये। एक टुकड़े से ज़मीन बनी और दूसरे टुकड़े से आसमान।

ईसाइयों और मुसलमानों की कल्पना के अनुसार सृष्टि को बनाने में परमात्मा को छः दिन लगे। पहले दिन आसमान बनाया गया। फिर प्रति दिन उसने क्रमशः पानी, ज़मीन, सूरज, चाँद और तारागण पशु पक्षी बनाये और अन्तिम दिन मनुष्य को बना कर उसे सम्पूर्ण प्राणिजगत का राजा बना दिया।

मनुस्मृति के अनुसार सृष्टि से पहले सब अन्धकार था। परमात्मा ने इस अन्धकार को हटा कर जल की सृष्टि की। उस में से एक प्रकाशमान अण्डा निकला इस अंडे में से उसने ब्रह्मा

के रूप में जन्म लिया। अण्डे के टूटने से उस के दो टकड़े हुए जिन में से एक ज़मीन और दूसरा आसमान बना।

ये सब कल्पनाएँ देश और काल की दृष्टि से बहुत ही सीमित थीं। काल के सम्बन्ध में बाइबल की कल्पना कि पृथ्वी ईसा से ४००४ वर्ष पूर्व बनायी गयी थी यूरोप में १७ वीं और १८ वीं सदी तक कायम रही। वहाँ बहुत देर तक लोगों का यही विश्वास रहा कि पृथ्वी को बने हुए छः हज़ार वर्ष से ज्यादा नहीं हुए।

देश और काल के सम्बन्ध में हिन्दू दार्शनिकों की कल्पना अवश्य बहुत ऊंची थी। उन्होंने देश और काल (Space and time) की दृष्टि से जगत की विशालता की कल्पना की थी, परन्तु वह निरी दार्शनिक कल्पना ही थी। उस कल्पना को प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा सिद्ध करने या उन अनुभवों की सचाई को परखने के साधन उस समय न थे।

प्राचीन मिश्रवासी ज्योतिषियों की धारणा और कल्पना के अनुसार बहुत देर से लोगों का यह विश्वास था कि सूर्य पृथ्वी के चारों ओर घूमता है और २४ घण्टों में सारी पृथ्वी का पूरा चक्कर लगा लेता है। पन्द्रहवीं शताब्दि में जब कोपर्निकस ने यह सिद्धान्त दुनियां के सामने रखा कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है तो उस का तीव्र विरोध हुआ और पहले इसे मानने को कोई भी तैय्यार न हुआ। १७ वीं शताब्दि में गैलिलियो ने दूरबीन का निर्माण करके मनुष्य के विचारों में एक अभूतपूर्व क्रांति

पैदा कर दी। दूरबीन की सहायता से आज हम ज़मीन से लाखों करोड़ों मील की दूरी पर स्थित लोक लोकान्तरों के अपूर्व रहस्यों को अपनी आँख से देख सकते हैं। गैलिलियो ने जिस दूरबीन का आविष्कार किया था उसमें साधारण शीशे से सिर्फ़ ३० गुनी ज्यादा ताकत थी। उस समय अच्छा शीशा तैयार करना भी कोई मामूली बात न थी। आज संसार में जो सब से बड़ी दूरबीन है उसका शीशा १०० इंच मोटा है। इसका वज़न २६०० मन है। सिर्फ़ शीशे का वज़न १२२ मन के लगभग है।

दूरबीन के अलावा दूसरा यन्त्र जिसने हमारे विचारों में क्रान्ति करने में बहुत हिस्सा लिया है, वर्ण विभाजक यन्त्र (Spectroscope) है। एक त्रिपार्श्व को अगर हम रौशनी में रखें तो रौशनी कई रंगों में विभक्त होती हुई दिखाई देगी। वर्ण विभाजक यन्त्र की सहायता से सूरज, चाँद और सितारों की रोशनी को इकट्ठा करके नाना रंगों में फाड़ा जाता है और यह जाना जा सकता है कि जिस पदार्थ से वह रौशनी आ रही है वह पदार्थ किन किन रासायनिक द्रव्यों से बना हुआ है।

पहले ज़माने में न दूरबीनें थीं, और न रोशनी और हरारत को नापने के यन्त्र थे। विज्ञान की उन्नति के मार्ग में एक बड़ी बाधा यह थी कि विज्ञान को मनुष्य के पहले से बनाये हुए धार्मिक विश्वासों, धारणाओं और कल्पनाओं से भी युद्ध करना पड़ता था। जो कोई उनके खिलाफ़ कुछ कहता था उसे काफ़िर समझा जाता था और मज़हबी अदालतें (इन्कोज़ीशन) से सज़ा मिलती।

इटली के वैज्ञानिक ब्रूनो को (१६०० ईस्वी में) रोम में इसलिये ज़िन्दा जला दिया गया क्यों कि वह कहता था कि ज़मीन सूरज के चारों तरफ़ घूमती है जब कि धर्म-पुस्तकों में लिखा हुआ था कि सूरज ज़मीन के चारों तरफ़ घूमता है। गैलिलियो का भी अपने स्वतन्त्र विचारों की सज़ा भुगतनी पड़ी। उसे एक अर्सा जेल में रहना पड़ा—और अन्त में उसे मौत के डर से माफ़ी माँग कर यह कहने के लिये मज़बूर होना पड़ा कि पृथ्वी ही विश्व का केन्द्र है और सूरज उसकी परिक्रमा करता है। इस प्रकार की धार्मिक और दिमाग़ी कट्टरता के साथ युद्ध करते करते आज विज्ञान इन पर काफ़ी विजय प्राप्त कर चुका है—और प्रतिदिन विजय प्राप्त करता जा रहा है।

विज्ञान के यन्त्रों की सहायता से आज हम बहुत सी वस्तुओं को भी बहुत ही स्पष्ट देख सकते हैं, उनके चित्र खैंच सकते हैं। गणित शास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार उनके नाप और तोल जान सकते हैं—उनकी दूरी उनकी गति और उनकी आयु मालूम कर सकते हैं। यन्त्रों की सहायता से नये नये परीक्षण किये जा रहे हैं, नये नये सिद्धान्त स्थापित किये जा रहे हैं, इसके साथ साथ और नये यन्त्रों का आविष्कार हो रहा है। विज्ञान ने हमारी दृष्टि और हमारी कल्पना को बहुत ही विशाल बना दिया है, और इस कारण देश और काल के सम्बन्ध में हमारी धारणा भी बहुत बदल गयी है। हम एक अत्यन्त विशाल विश्व की कल्पना कर सकते हैं। आधुनिक विज्ञान के आधार पर हम इस विशाल

विश्व के सम्बन्ध में अब बहुत सी बातें जानते हैं। उसके आधार पर हम इस दुनियां का इस प्रकार वर्णन कर सकते हैं।

(३)

सृष्टि सम्बन्धी आधुनिक धारणा

पहले हम अपनी पृथ्वी से चलते हैं। हमारी पृथ्वी देखने में बहुत बड़ी है, और इसमें शक नहीं कि यह है भी बहुत बड़ी। यदि हम पृथ्वी की मध्य रेखा जिसे भूमध्य रेखा कहते हैं—उस पर से होकर पृथ्वी का चक्कर लगायें तो हमें २८, ८६० मील चलना पड़ेगा। भूमि का व्यास ८००० मील है। उसकी सतह का क्षेत्रफल १९, ६५, ५५, ००० वर्ग मील है। यह अपनी परिधि पर निरन्तर घूम रही है, और २४ घंटे में एक पूरा चक्कर लगा लेती है।

चांद और सूरज—पृथ्वी से उठ कर सबसे पहले हमारा ध्यान चाँद और सूरज पर जाता है। चाँद हमारी ज़मीन से बहुत ही छोटा है। लग भग ? है। चाँद का व्यास २१६० मील अर्थात ज़मीन के व्यास का एक चौथाई है। ज़मीन से छोटा होने के कारण चाँद का गुरुत्वाकर्षण या खैंचने की शक्ति भी ज़मीन से कम है। चीज़ों का वज़न गुरुत्वाकर्षण शक्ति का ही नाप है। जो चीज़ हमारी ज़मीन पर डेढ़ मन वज़न की है, चाँद पर पहुँचते ही उसका वज़न १० सेर रह जायगा। ज़मीन पर अगर हम ४ फ़ीट उछल सकते हैं तो चाँद पर २४ फुट ऊँची छलांग लगाएंगे: एक आठ गज़ ऊँची दीवार को आसानी से फाँद जायंगे। चाँद में १५ रोज़ का दिन और १५ रोज़ की रात होती है। जब चाँद के

किसी स्थान पर १५ रोज़ निरन्तर सूरज की धूप पड़ती है तो गर्मी लगभग २१२ दर्जे की हो जाती है जो पानी उबालने को काफ़ी है। पन्द्रह दिन की रात में सर्दी शून्य से २०० दर्जे नीचे तक चली जाती है। चांद की सतह ज्वालामुखी पहाड़ों की राख से ढकी हुई है। चांद में कभी ज्वालामुखी पहाड़ थे, परन्तु आज चांद बिलकुल ठण्डा और निर्जीव है। चन्द्रमा में जीवित प्राणी, वनस्पति कुछ भी नहीं रह सकते। कारण यह कि चन्द्रमा के चारों ओर कोई वायुमण्डल का आवरण नहीं और उसके ऊपर सूरज की गर्मी बिना किसी रोक के पड़ती है। वहां कभी जल और वायु नहीं रहा। छोटा होने के कारण उसमें इतनी आकर्षण शक्ति नहीं कि अधिक हलकी गैसों को अपने साथ रख सके, इसलिये कार्बन डायोक्साइड जैसी भारी गैसें ही वहां रहती हैं जिस में कोई प्राणी या पौदा ज़िन्दा नहीं रह सकता। वायु के अभाव के कारण वहां कोई शब्द भी सुनाई नहीं दे सकता। इसलिये यदि चन्द्रमा पर मनुष्य होते भी तो वे बहरे और गूंगे होते। चन्द्रमा निरन्तर हमारी पृथ्वी के इर्द गिर्द चक्कर लगाता है। वह हमारी पृथ्वी से २ लाख २० हज़ार मील दूर है। ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि से यह दूरी बहुत ही कम है क्योंकि सूरज और अन्य तारागण इसकी अपेक्षा बहुत ज्यादा दूर हैं।

जैसा कि ऊपर कहा गया है सूरज पृथ्वी से बहुत अधिक बड़ा है। सूरज लम्बाई चौड़ाई और ऊँचाई में ज़मीन से १०९ गुना बड़ा है, इसका अर्थ यह हुआ कि एक दो नहीं, बल्कि १३

लाख ज़मीनें सूरज के अन्दर समा सकती हैं। सूरज की दूरी हमारी पृथ्वी से ६ करोड़ ३० लाख मील है। यदि हम ७ मील प्रति सैकंड की रफ्तार से ऊपर को उड़ें तो पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति हमारे वेग को रोक न सकेगी, और इस वेग से चलते हुए लगभग ढाई महीनों में हम सूर्य तक पहुँच जायंगे। ६० मील प्रति घंटे की चाल से निरन्तर चलने वाली एक तेज़ मोटर १७५ वर्षों में सूर्य तक पहुँचेगी। रौशनी की किरणें एक सैकंड में १ लाख ८६ हज़ार मील का सफ़र तय करती हैं। सूरज की रोशनी को हमारी ज़मीन तक आने में ८ मिनट लग जाते हैं।

सूरज क्या है? आग का एक गोला है। उसमें से लाखों मील लम्बे आग के फुहारे छूट रहे हैं। सूरज के वायुमण्डल में भारी भारी धातुएं गर्मी से गैस बन कर उड़ रही हैं। किसी ज़माने में सूरज इससे भी बड़ा और इससे भी अधिक गर्म था – सूरज की आयु का अनुमान ८० खरब साल के करीब लगाया गया है। इस अर्से में धीरे धीरे उसने अपना बहुत सा वज़न और गर्मी खो दी है। अगर आरम्भ से उसका वज़न १०० मन था तो आज सिर्फ़ १ मन रह गया है।

सौर मण्डल—हमारी पृथ्वी सूर्य के चारों ओर निरन्तर घूमती है। प्रति सैकंड १८॥ मील की गति से घूमती हुई वह ३६५ दिन में सूर्य की पूरी परिक्रमा कर लेती है। सूर्य एक स्थिर ग्रह है जो अपनी परिधि पर ही घूमता है। इसके आस पास पृथ्वी की तरह और कई ग्रह घूमते रहते हैं। बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल,

बृहस्पति, शनिश्चर, यूरेनस और नैपच्यून ये मुख्य ग्रह हैं। इन ग्रहों के अतिरिक्त चन्द्रमा की तरह के कई उपग्रह भी सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इन ग्रह उपग्रहों के अतिरिक्त बहुत से छोटे छोटे तारे हैं। इनमें से कई एक टूट टूट कर सूर्य में गिरते और भस्म होते रहते हैं।

अन्यान्य सूर्यमंडल और नीहारिकाएं—ऊपर हमारे सौरमण्डल की बात हुई। परन्तु इस अनन्त आकाश में हमारे सौरमण्डल की तरह के अनेकानेक सूर्य उनके साथ ग्रह उपग्रह और करोड़ों अन्य तारागण हैं। सब गतिशील हैं। इनमें से बहुत से पृथ्वी से अरबों साल पहले के बने हुए हैं और बहुत से अपनी आयु समाप्त करके अब तक जल-भुन कर समाप्त भी हो चुके हैं। कई अभी जन्म धारण कर रहे हैं।

इन सूर्यों और ग्रहों के अतिरिक्त आकाश में तारों के बहुत घने पुंज भी नज़र आते हैं। इन्हें नीहारिकाएं (Nebula) कहते हैं। नीहारिका इन्हें इस लिये कहते हैं कि ये कुहरे की तरह गैसों से बने हैं। ये एक प्रकार के अत्यन्त चमकीले बादल हैं। सम्पूर्ण ग्रह और नक्षत्र प्रारम्भ में इसी रूप में थे, और ये नीहारिकाएं भी कभी अधिक ठोस होजाने पर सूर्य, ग्रह या नक्षत्र बन जाँयगीं। इन नीहारिकाओं की संख्या २० लाख तक गिनी गयी है।

ऊपर हमने लिखा है कि सूर्य के प्रकाश को हम तक पहुँचने में ८ मिनट लग जाते हैं। ऐसे भी नक्षत्र और नीहारि-

काएं हैं जो हम से इतनी दूरी पर हैं कि उनके प्रकाश को हम तक पहुँचने में करोड़ों और अरबों साल लग जाते हैं। यहां तक कि मीलों में उनकी दूरी बतलाना असम्भव होता है। उन की दूरी बतलाने के लिये "प्रकाश-वर्षों" (Light years) की नाप बनाई गई है। प्रकाश १ लाख ८६ हज़ार मील प्रति सैकंड की गति से चलता है। इस गति से वह एक साल में जितना फासला तय करेगा वह एक 'प्रकाश वर्ष' का फ़ासला हुआ। ज़मीन के सब से समीप जो नीहारिका है, वह ८॥ लाख प्रकाश वर्षों की दूरी पर है, अर्थात् उसकी रोशनी को ज़मीन तक पहुँचने में ८॥ लाख वर्ष लग जाते हैं। जो नीहारिकाएं बहुत ही दूर हैं। उनके प्रकाश को यहां तक आने में १६ करोड़ वर्ष तक लगते हैं। कई तारे सूर्य से अधिक चमकीले हैं। अगस्त्य हमारे सूर्य से २२ हज़ार गुना ज्यादा चमकीला और बड़ा है। परन्तु दूर होने के कारण छोटा और मध्यम दिखाई देता है। आकाश गंगा हमारी पृथ्वी से ३२ हज़ार 'प्रकाश-वर्षों की दूरी पर हैं।

ये सब गणनाएं कल्पना में भी बहुत विचित्र मालूम होती हैं। परन्तु यन्त्रों और गणित शास्त्र की सहायता से इन का पता लगाया गया है।

(४)

धरती और पाताल

आसमान का कुछ हाल हमने ऊपर पढ़ लिया। आकाश के सम्बन्ध में तो हमें अभी बहुत कुछ मालूम करना बाकी है। सब से अधिक हमें यदि कुछ मालूम है तो वह धरती के सम्बन्ध में। क्योंकि धरती पर हम खुद निवास करते हैं। भूगर्भ-शास्त्र के पण्डितों ने धरती की चट्टानों और उनकी तहों की बहुत छानबीन की है, और पृथ्वी के पिछले प्रायः सारे इतिहास को जान लिया है। किसी ज़माने में हमारी पृथ्वी और सौर-मण्डल के सभी ग्रह सूर्य के गर्भ में थे। सूर्य उस समय एक नीहारिका के रूप में था। उसी दशा में पृथ्वी और अन्य ग्रह सूर्य से जुदा हुए, और धीरे धीरे ठण्डे होते-होते अपनी वर्तमान दशा में आये। सब से पहले ज़मीन का ऊपरी आवरण ठण्डा होना शुरू हुआ।

चट्टानों का इतिहास—कई दफ़ा ज़मीन की अन्दर की गर्मी से पिघलीं धातों और पत्थरों का लावा ऊपर फूट कर निकलता और उसकी तहें जम जातीं। इन तहों को अग्नि निर्मित चट्टानें कहते हैं जब ज़मीन ठण्डी होकर इस योग्य हुई कि जल इस पर ठहर सके तो चट्टानों पर जल ने अपना असर डालना शुरू किया। जल की धाराएं बहुत-सी मिट्टी, बालू, नमक, कोयला इत्यादि अपने साथ बहाकर लातीं और इनकी

तहें ज़मीन पर बिछाती जातीं। इन तहों के ऊपर और तहें जमती जातीं। ज्यों ज्यों ऊपर नई तहें जमती जातीं नीचे की तहें उनके बोझ से कड़ी होती जातीं। इस प्रकार पृथ्वी के ऊपरी आवरण में जो उथल-पुथल होती रही उनका इतिहास हमें चट्टानों में मिलता है।

शिलीभूत प्राणी – इन चट्टानों की तहों में लकड़ी, वनस्पति, जल और स्थलचर जीवित और मृत प्राणी भी प्रायः दब जाते थे, और अब इन तहों के अन्दर वे सब भी शिलीभूत (Fossil) अवस्था में पाये जाते हैं। इन शिलीभूत पदार्थों की सहायता से हम यह जान सके हैं कि किस युग में संसार में किस प्रकार के स्थावर और जंगम पदार्थ और प्राणी निवास करते थे। ये शिलीभूत प्राणी और पदार्थों की सहायता से ही हम विकासवाद के गूढ़ सिद्धान्तों को समझ सके हैं। चट्टानों की छानबीन करके तथा अन्य परीक्षणों द्वारा भूगर्भशास्त्री इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि हमारी पृथ्वी को बने २ या ३ अरब साल गुज़र चुके हैं। परन्तु अब से ५० करोड़ वर्ष पूर्व तक इस पर ज़िन्दगी के कोई भी चिन्ह न थे। परन्तु मनुष्य तो इसके भी बहुत बाद में आया। अत्यन्त प्रारम्भिक मनुष्य को—जिसकी शकल मनुष्य और बनमानस के दर्मियान थी इस जगत में आये हुए ५० लाख वर्ष से अधिक नहीं हुए। और मनुष्य जाति की सभ्यता का इतिहास तो ३० हज़ार वर्ष से अधिक पुराना नहीं है।

विकास का सिद्धान्त—जैसा अभी ऊपर कहा गया है चट्टानों की तहों में शिलीभूत (Fissilized) पदार्थों, वनस्पतियों और प्राणियों के चिन्हों को देखकर वैज्ञानिकों ने पृथ्वी के सम्पूर्ण इतिहास को क्रमबद्ध किया है। यदि इन पदार्थों को इसी क्रम से एक पंक्ति में लाकर रखा जाय तो वनस्पतियों, पशु-पक्षियों और मनुष्य के विकास-क्रम को अत्यन्त स्पष्टताके साथ समझा जा सकता है। इससे हमें पता लगता है कि जीवित जगत का आरम्भ जल में हुआ। अत्यन्त सूक्ष्म कणमात्र अमीबा और जलमें होने वाली कई और कुकरमुत्तासे विकसित होते होते लाखों सालों में पानीमें रहने वाले घोंघे, झींगुर आदि की तरह के जन्तुओं की सृष्टि हुई। धीरे धीरे इनसे मेंडक, मछलियां, छिपकली वगैरा सरीखे जलस्थल दोनों जगह विचरने वाले प्राणियों का विकास हुआ। उसके बाद सर्प, गोह, मगरमच्छ और फिर दूध पिलाने वाले प्राणी विकास-क्षेत्र में आये। अंडे देने वाले प्राणियों के बाद योनिज प्राणियों का विकास हुआ। इनके बाद छोटे छोटे हाथी और घोड़े। लंगूर और उसके बाद बन्दर, बन्दर से बनमानुस और उसके बाद मनुष्य का विकास हुआ। विकास की यह कथा इतनी विचित्र है कि यह पुराण शास्त्र की एक गप्प सी प्रतीत होती है। परन्तु फिर भी यह वैज्ञानिकों की कोरी कल्पना नहीं। प्रत्यक्ष खोज और जाँच का परिणाम है, अनुभव और वैज्ञानिक तर्क पर आश्रित है। विकासवाद का यह सिद्धान्त थोड़े बहुत विकृत रूप में २५०० वर्ष पूर्व चीनी दार्शनिक "सोन-ले" ने भी मालूम किया

था। परन्तु उस समय उस पर किसी ने ध्यान न दिया। उसकी फिर खोज करने में मनुष्य को ढाई हज़ार साल लग गये।

डार्विन—१८५६ में 'डार्विन' ने "प्राणियों की उत्पत्ति" (Origin of Species) नामी पुस्तक लिख कर इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उस समय तक लोगों का ख्याल था कि परमात्मा ने इनसान और हरएक प्राणी को जुदा जुदा बनाया है। उनमें आपस में कोई रिश्ता या सम्बन्ध नहीं है। परन्तु डार्विन ने यह सिद्ध किया कि प्रारम्भ में सब प्राणियों का एक ही वंश है और सब का आदि में एक ही पुरखा रहा होगा। डार्विन के बाद विकास सिद्धान्त के अनुसार प्राणियों की बनावट में छः छः सात सात पुश्तों के बाद विशेष प्रकार के परिवर्तन होते रहते हैं। इस परिवर्तन के ज़रिये प्रकृति प्राणियों की बनावट में नये प्रकार के परीक्षण करती रहती है। जिन प्राणियों की बनावट पृथ्वी पर की भौतिक अवस्थाओं और आवश्यकताओं के अधिक अनुकूल होती है वे उन प्राणियों की अपेक्षा फ़ायदे में रहते हैं जिनकी बनावट उनके अनुकूल नहीं होती है। जिन प्राणियों के शरीर की बनावट परिस्थितियों के अनुरूप नहीं होती वे नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार नई परिस्थितियों में नये प्रकार के प्राणियों की रचना होती रहती है, क्योंकि बनावट में ये परिवर्तन आगे नसलों में भी जाते हैं। प्राणियों की रचना में प्रतिदिन होते हुए ये परिवर्तन इतने सूक्ष्म हैं कि दिखाई नहीं देते। परन्तु जिन प्राणियों की आयु बहुत थोड़ी है, और जो कुछ ही घंटों में हज़ारों नसलें तय

कर जाते हैं उन पर निरन्तर होने वाले ये परिवर्तन परीक्षणशालाओं में देखे जा रहे हैं। पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों के इन परिवर्तनों का रिकार्ड पृथ्वी की चट्टानों ने अपनी तहों में सुरक्षित कर रखा है।* जिसका अभी ऊपर वर्णन किया गया है।

(५)
जीवित जगत की सीमाएं

ऊपर हमने इस अत्यन्त विशाल विश्व का वर्णन किया है। यह सारा विश्व जीवित प्राणियों के निवास योग्य नहीं है। कम से कम हम जिस किस्म के जीवित प्राणियों से परिचित हैं उनके रहने योग्य अवस्थाएं इस भूमि के पृष्ठ पर ही हैं। इस भूमि के पृष्ठ पर भी सर्वत्र प्राणियों का निवास सम्भव नहीं है। पृथ्वी के तल से यदि हम ऊपर की ओर चलें तो पृथ्वी तल की सब से अधिक ऊंचाई गौरीशंकर (माउंट एवरेस्ट) की चोटी पर है। यह चोटी समुद्र तल से २६, १४१ फ़ीट ऊँची है—लगभग छः मील। मामूली चाल से चलता हुआ मनुष्य जिस फ़ासले को दो घंटे में तय कर लेता है, अभी तक मनुष्य ऊंचाई में वहाँ नहीं पहुँच सका। परन्तु मनुष्य के अतिरिक्त अन्य प्राणि-जगत तो इससे बहुत नीचे ही हिम्मत हार गये हैं। ऊँचे से ऊँचे

---

*विकास सिद्धान्त को अच्छी तरह समझने के लिये देखो लेखक की पुस्तक "सृष्टि की उत्पत्ति और प्राणिजगत का विकास"।

४ मील तक 'कैडर' नामी पक्षी उड़ सकता है। परन्तु बाकी पक्षी और भुनगे यदि हवाई जहाज़ या बैलून में बिठा कर ऊपर लेजाये जाँय तो इससे बहुत नीचे ही बेहोश होकर गिरने लग जाते हैं। गौरीशंकर की चोटी पर जहाँ तक हमें ज्ञात है डाक्टर सोमरविल और लैफ्टिनैंट कर्नल नार्टन सब से ऊँचे चढ़े थे। वे २८, २०० फ़ीट ऊंचे गये थे जब सोमरविल का गला सर्दी से जल-गया था और नार्टन को बर्फ़ीली हवाओं ने अंधा कर दिया था। बैलून में बैठकर सबसे अधिक ऊंचाई पर १९२७ में कैपटन ग्रे उड़ा था। वह ४२, ४७० फ़ीट गया था, परन्तु वहां आक्सीजन समाप्त होजाने की वजह से मर गया। अब तक जहां तक हमें ज्ञात है कोई प्राणी आकाश में इससे ज्यादा ऊंचा नहीं जा सका। ऐसा बैलून जिसमें आदमी तो कोई न था सिर्फ वायुमण्डल का पता लाने वाले यंत्र रखे हुए थे ज्यादा से ज्यादा २३ मील ऊपर गया है और वहां के वायुमण्डल का पता लाया है।

यह तो पृथ्वीतल के ऊपर की बात हुई। परन्तु पृथ्वी और समुद्रतल के नीचे भी प्राणियों के रहने के लिए स्थान बहुत सीमित है। पानी में डुबकी लगाने की पोशाक पहिन कर भी ३०० फ़ीट से ज्यादा गहराई में नहीं जा सकते, और वहाँ २० मिनट से ज्यादा ठहर नहीं सकते। पानी के बोझ के कारण वहाँ से ऊपर आने में उन्हें डेढ़ घण्टा लग जाता है। बिना साज़ सामान के डुबकी ख़ोर ३० फ़ीट से ज्यादा नहीं जा सकते और २ मिनट से ज्यादा नीचे नहीं ठहर सकते। पनडुब्बी नौकाओं से

भी इन पाबन्दियों में रहना पड़ता है। ग्रीनलैंड की व्हेल मछली ८०० फ़ैदम (१ फ़ैदम = ६ फ़ीट) नीचे तक जाती है। ज्यों ज्यों समुद्र की गहराई में जाया जाय पानी का बोझ अधिक होता जाता है। २००० फ़ैदम पर लकड़ी सिकुड़ कर पत्थर बन जाती है और तैरने लायक नहीं रहती। समुद्र की ज्यादा गहराई में रहने वाले प्राणियों के रक्त में हवा इतने दबाव से भरी होती है कि वह पानी का बोझ सहार लेते हैं। इन जानवरों को यदि पानी के ऊपर लाया जाय तो ऊपर का दबाव हट जाने से उनके अन्दर की हवा इतने ज़ोर से फैलती है कि मछलियाँ फट कर टुकड़े टुकड़े हो जाती हैं। समुद्र के नीचे कुछ मील के बाद ज़िन्दगी के कोई लक्षण दृष्टि गोचर नहीं होते। इसलिए हम कह सकते हैं कि भूमि पृष्ठ के लगभग ७ मील ऊपर और समुद्रतल से ७ मील नीचे इस १४ मील के पृथ्वी के आवरण में ही प्राणि-जगत का निवास है। प्राणिजगत लाखों, करोड़ों वर्षों के प्रयत्न और प्राकृतिक शक्तियों के साथ संघर्ष करने के बाद इतने क्षेत्र में भी फैल सकता है। अभी भी वह अपने क्षेत्र को अधिकाधिक विस्तीर्ण करने की चेष्टा कर रहा है।

परन्तु देश और काल दोनों दृष्टियों से जगत की इतनी संकुचित सीमाओं में रहते हुए भी मनुष्य का यह अभिमान कि "यह सृष्टि उसी के लिए बनाई गई है" ऐसा ही उपहासास्पद है जैसा किसी खाँड के कारख़ाने में जाकर किसी चींटी का यह समझना कि कारख़ाना उसी के लिए चलाया जा रहा है।

पृथ्वी की उच्चतम चोटियां

महादेश	नाम स्थान	ऊँचाई फ़ीट
एशिया	गौरीशंकर (माउंट एवरेस्ट)	२६,१४१
अफ्रीका	किबो (टांगानायका)	१६,७१०
यूरोप	माउण्ट एलब्रेरेस (काकेशस)	१८४६५
उत्तरी अमेरिका	माउण्ट मैकिनले (अलास्का)	२०,३००
दक्षिणी अमेरिका	माउण्टएकोनकेगुआ (चिली)	२२८३४
आस्ट्रेलिया	माउण्ठ कोशस्को	७३२८
हिमालय की अन्य चोटियाँ	कांचनजंगा	२८,२२५
	धवलगिरि	२६,७६५
	नंगा पर्वत	२६ ६२०
	नन्दा देवी	२५,६४५
	केदारनाथ	२२,७७०

दूसरा अध्याय

भौगोलिक रचना

(१)

पांच पेटियां

२ करोड़ हम पहले लिख आये हैं कि हमारी ज़मीन का क्षेत्रफल १९,६५,५०,००० वर्ग मील है। इसमें ५,५५,००,००० वर्ग मील स्थल भाग है और १४,१०,५०,००० वर्ग मील जल है। अर्थात् एक हिस्सा स्थल और तीन हिस्से जल है। स्थल भाग में भी १० लाख वर्ग मील नदियां और झीलें हैं। १९ लाख वर्ग मील समुद्र के अन्दर द्वीप हैं।

३० लाख वर्ग मील उपजाऊ भूमि है। १ करोड़ ९० लाख वर्ग मील वृक्षादि सहित भूमि जिसमें केवल झाड़ झंकर हैं और ५० लाख वर्ग मील मरु भूमियां हैं। इनके अलावा पहाड़, पथार, घाटियां, उत्तरीय और दक्षिणी ध्रुव के भूमितलों में अन्तर है।

उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवोंसे समान दूरीपर ज़मीनोंके बीचों बीच जिस गोल-रेखा की कल्पना की गई है उसे भूमध्य रेखा कहते हैं। भूमध्यरेखा का भूमितल सूर्यके सबसे अधिक नज़दोक है और इस पर सूर्यकी किरणें सीधी पड़ती हैं। इसलिए भूमध्य रेखाके आस-पास के प्रदेशों में गर्मी बहुत ज्यादा पड़ती है। ध्रुव प्रदेश भूमध्य रेखा से सब से ज्यादा दूर हैं, इसलिए वहां अत्यन्त शीत पड़ता है। पहाड़ों की चोटियों पर भी ठण्ड ज्यादा होती है। शिमला लाहौर की अपेक्षा बहुत ठण्डा है। ३०० फुट की ऊँचाई पर चढ़ने के बाद ताप मान १^{0} अंश (फ़ारनहाइट) औसत कम हो जाता है। कारण यह है कि पहाड़ों की हवा पृथ्वी तल की हवा से हलकी होती है इसलिए वाष्पों और धूलि-कणों का ज्यादा बोझ सहार नहीं सकती। सूर्य की गर्मी को वायु-मण्डल जमा करके रखता है। यदि चांद की तरह हमारी पृथ्वीपर वायु-मण्डल न हो तो सूर्य के अस्त होते ही कठोर शीत पड़ने लगे। पहाड़ों की पतली वायु में अधिक गर्मी भी समा नहीं सकती इस लिये वह झट ठण्डी हो जाती है।

पृथ्वी का स्थल भाग पाँच प्रकार की पेटियों में विभक्त है। सब से प्रथम उत्तरी ध्रुव के चारों ओर सदा बरफ़ से ढके रहने वाले प्रदेश की सफेद पेटी दिखलाई देती है। इस प्रदेश में पौदे बहुत कम उगते हैं। पशु कठिनता से रह सकते हैं। मनुष्य का जाना भी सुगम नहीं। ८० लाख वर्गमील में यह सफेद भाग फैला हुआ है।

बर्फ़ीली पेटी के बाद एक पेटी आती है जिसे टण्डरा कहते हैं। यह नीची और दलदल भरे मैदान हैं। यह उत्तरी महासागर से लेकर जंगलों के प्रदेश तक फैली हुई है। गर्मी के कुछ दिनों को छोड़ कर वर्ष का अधिक भाग बर्फ़ से ढकी रहती है। कुछ सप्ताहों के लिये यह छोटे छोटे सुन्दर फूलों और पौदों से ढक जाती है। उत्तरी साइबेरिया और उत्तरी कनाडा का एक बड़ा भाग टण्डरा में है।

टण्डरा की पेटी के बाद जंगलों की भूमि की हरी पेटी आती है। टण्डरा और इस पेटी की सीमा पर छोटे छोटे पौदे जो एक दो इंच से ज्यादा ऊँचे नहीं होते उगते हैं। ज्यों ज्यों हम दक्षिण की ओर बढ़ें धीरे धीरे वृक्षों की लम्बाई बढ़ती जाती है। गहन वन आ जाते हैं जिनमें वनैले पशु रहते हैं।

इसके बाद हम घनी आबादी वाली सभ्य भूमियों की पेटी पर आते हैं। यूरोप, एशिया, चीन और अमेरिका में बड़े बड़े जंगल काट कर अनाज के खेत, फलों के बाग़ बना लिए गए हैं और नगर बसाये गए हैं।

इसके बाद वाली पेटी इतनी समानान्तर नहीं जाती। यह मरुभूमियों की पेटी है। चीन की गोबी की मरुभूमि से आरम्भ होकर मध्य एशिया, पर्शिया, अरब और सहारा तक चली जाती है। अटलांटिक पार अमेरिका में इसके बराबर कोलोरोडो, कैलिफ़ोर्निया और अरीजोना की मरुभूमियां हैं। वर्तमान मरुभूमियां भी कभी हरी भरी थीं, सहारा की मरुभूमि लगभग ३०

लाख वर्ग मील है और गोवी की मरुभूमि १० लाख वर्ग मील में फैली है। उत्तरी और दक्षिणी मरुभूमियों के मध्य में उष्णकटिबन्ध (Tropical) की बड़ी भारी पेटी आती हैं जिसमें वनस्पति बहुत अधिक उत्पन्न होते हैं। सघन वन और वनों में भयंकर जीवजन्तु निवास करते हैं। यहां रहने वाले पक्षी नाना प्रकार के रंग बिरंगे और चमकीले होते हैं।

इस पेटी के दक्षिण में दक्षिण महासागर (Antarctic) है। यह जलमय प्रदेश है। दक्षिणी ध्रुव के समीप भी सदा बर्फ रहती है। उत्तरी ध्रुव के प्रदेश से यह प्रदेश लगभग दुगना है।

विशेष विशेष प्रदेशों में विशेष प्रकार के प्राणी और वनस्पति रह सकते हैं। इंग्लैण्ड में कपास नहीं बोयी जा सकती, आइसलैण्ड में चिड़ियां हैं ही नहीं और सहारा की मरुभूमि में हिरन और बारहसिंगे नहीं बिचरते। आस्ट्रेलिया में कंगारू, अफ्रीका में ऊँट, और ध्रुव प्रदेशों में बड़े बड़े रीछ होते हैं।

(२)

नदियां, प्रपात, झीलें और समुद्र

नदियां पर्वतों को काट काट कर कीचड़ बनाती हैं, और उन्हें निरन्तर समुद्र में डालती हैं। यही कीचड़ समुद्र में जमा होता रहता है और हज़ारों लाखों साल बाद पर्वत बनकर समुद्र से बाहर निकल आता है। सुदृढ़ पर्वतों को बुरादा बनाने में नदियों को कितना समय लगता है? 'पो" नदी अपने सिंचित

प्रदेश को ७०० सालों में घिस कर एक फुट नीचा कर देती है। 'येलो' नदी १५०० वर्षों में डेन्यूब ७००० वर्षों में इतना काम कर सकती है। गंगा और ब्रह्मपुत्र मिलकर बंगाल की खाड़ी में प्रति वर्ष इतना कीचड़ फैंकती हैं जिससे मिश्र के बड़े पिरामिड के बराबर के ३३६ पिरामिड बन सकते हैं। 'येलो' नदी की कीचड़ में एक बड़ा भारी नगर दब सकता है। नदियां अपने कीचड़ को किनारों के आसपास बखेर कर उपजाऊ खेती की भी रचना करती हैं।

संसार में कोई नदी बहुत लम्बी है, कोई छोटी, कोई ज़्यादा चौड़ी है कोई कम चौड़ी। पृथ्वी पर सबसे लम्बी नदी नील नदी है यह ४००० मील लम्बी है। इससे दूसरे नम्बर पर दक्षिणी अमेरिका की अमेज़न नदी है। यह ३६०० मील लम्बी है। चौड़ाई और क्षेत्रफल के लिहाज़ से अमेज़न बड़ी है। उसका क्षेत्रफल २७,७२००० वर्गमील है। नील नदी का क्षेत्रफल १२६३,००० वर्गमील है। अमेज़न नदी में २६ अन्य बड़ी बड़ी नदियां आकर मिलती हैं। डेन्यूब नदी द्वारा बनाई हुई विशाल भूमि यूरोप में सबसे अधिक उपजाऊ है। खेतों को सींचने के अलावा अत्यन्त प्राचीन काल से नदियां यातायात का साधन रही हैं। नदियों की तेज़ धाराएँ झरने बन कर मनुष्य के यन्त्रों को चलाती हैं, आज नदियों के प्रपातों से मशीनों को चलाने के लिये बिजली की अनन्त शक्ति प्राप्त की जा रही है।

विभिन्न देशों की प्रपात शक्ति

इस शक्ति को नापने के लिये वैज्ञानिकों ने 'अश्व बल' (horse power) का पैमाना कायम किया हुआ है। एक घोड़ा जितनी शक्ति लगा कर एक १५० पौंड के वज़नदार पदार्थ को १ मिनट में २२० फ़ीट ऊपर लेजा सकता है वह एक अश्व का बल हुआ।

नाम देश	उपयोग में लायी गयी हैं	जो शक्ति अभी प्रयोग में नहीं लायी गयी।
उत्तरी अमेरिका	२, १८, ००, ०००	६ ००, ००, ०००
दक्षिण अमेरिका	६, ००, ०००	४, ४०, ००, ०००
अफ़गानिस्तान	२, ०००	५, ००, ०००
चीन	१ ६५०	२, ००, ००, ०००
हिन्दुस्तान	३, ००, ०००	२, ७०, ००, ०००
जापान	३५, ००, ०००	६०, ००, ०००
फ़ारस		२, ००, ०००
सोविएटरूस(एशियामें)	६१, ०००	८०, ००, ०००
सम्पूर्ण एशिया	४०, ००, ०००	७, १०, ००, ०००
बेल्जियम	७००	
ब्रिटिश द्वीप	४, ००, ०००	८, ५०, ०००
ज़ेकोस्लोवेकिया	१, ५५, ०००	१०, ००, ०००

फ्रांस	२३, ००, ०००	५४, ००, ०००
जर्मनी	२०, ००, ०००	२०, ००, ०००
इटली	४८, ४०, ०००	३८, ००, ०००
टर्की	कुछ नहीं	बहुत कम
सोविएटरूस(यूरोप)	३, ५५, ०००	८४, २५, ०००
कुल यूरोप	१, ८४, ००, ०००	५, ६०, ००, ०००
अबीसीनिया		४०, ००, ०००
मिश्र		६, ००, ०००
कुल अफ्रीका	३३, ०००	१६, ००, ००, ०००
ओशेनिया	३, ७०, ०००	४, ४०, ००, ०००
कुल दुनियां	४, ६०, ००, ०००	४४, ७०, ००, ०००

झीलें—पृथ्वी पर सब से बड़ी झील कैस्पियन सागर है। यह इतनी गहरी और बड़ी है कि उसे समुद्र कहना ठीक होगा। इसका विस्तार १ लाख ७० हज़ार वर्ग मील है, और औसत ३ हज़ार फुट गहरी है।

इससे दूसरे नम्बर पर अमेरिका की सुपीरियर झील है। यह मीठे पानी की झील है। परिमाण में कैस्पियन सागर का पांचवां भाग और गहराई में एक तिहाई है।

तीसरे नम्बर पर विक्टोरिया न्याज़ा झील और उसके

बाद एशिया के अटल समुद्र और उत्तरी अमेरिका की माइचीगन और ह्यरोन झीलें हैं।

उत्तरी अमेरिका और अफ्रीका की बड़ी बड़ी झीलें व्यापार के लिये बहुत महत्वपूर्ण हैं।

पृथ्वी के कुछ प्रसिद्ध जल-प्रपात

नाम और स्थान	ऊंचाई (फुटों में)
कुकेनाम (ब्रिटिश गायना)	२००० फ़ीट
सदरलैण्ड (न्यूज़ीलैण्ड).	१९०४ ,,
तुगेला (नेटाल)	१८०० ,,
रोरेमा (ब्रिटिश गायना)	१५०० ,,
गैवर्नें (फ्रांस)	१३०० ,,
तक्काकाओ (कोलम्बिया)	१२०० ,,
स्टाओबेक (स्विट्ज़रलैण्ड)	९८० ,,
ट्रूमलबैक (,,)	९५० ,,
वेटिस (नार्वे)	८५० ,,
जेरसोप्पा (हिन्दुस्तान)	८३० ,,

अमेरिका का नियाग्रा का जलप्रपात बहुत मशहूर है। उसकी ऊंचाई सिर्फ १६७ फ़ीट है। परन्तु उसकी धारा बहुत बड़ी है—सारी की सारी नदी इतनी ऊंचाई से गिरती है।

समुद्र—ऊपर कहा जा चुका है कि पृथ्वी का तीन चौथाई भाग जल से ढका हुआ है। किसी जमाने में हिमालय, एल्प्स

और कार्पेथियन पहाड़ समुद्र के नीचे थे। सम्पूर्ण भारत और यूरोप का अधिकांश भाग भी जलमग्न था।

बड़े बड़े समुद्रों को हम महासागर कहते हैं। पृथ्वी पर पांच महासागर हैं—

(१) प्रशान्त महासागर (Pacific)—(६,८६,३४,००० वर्गमील)
(२) अटलांटिक महासागर (४,१३,२१,००० वर्गमील)
(३) हिन्द महासागर (२,६३,४०,००० वर्गमील)
(४) उत्तरी हिमसागर (Arctic)
(५) दक्षिणी हिमसागर (Antarctic)

प्रशान्त महासागर अकेला इतना बड़ा है जितना कुल पृथ्वी का स्थल भाग है। इसका अधिकांश भाग १२ हज़ार फुट से १८००० फुट तक गहरा है। इसके कई भाग तो इतने गहरे हैं कि उनमें गौरीशंकर की चोटी डूब सकती है। इसकी सबसे अधिक गहराई ३२ हज़ार फुट या छः मील से कुछ ही अधिक है। यह मिंडानू द्वीप के पास है।

एटलांटिक की गहराई औसतन १० हज़ार फुट है। इसकी सबसे अधिक गहराई २७ हज़ार फुट है। इसका समुद्र तट बहुत कटा फटा है, और बहुत सी बन्द खाड़ियां और छोटे छोटे द्वीप हैं। इसलिये इसके किनारों पर बहुत बन्दरगाह हैं।

उत्तरी और दक्षिणी हिमसागर अधिकांश निर्जन और हिमाच्छादित हैं। परन्तु उत्तरी हिमसागर के इर्द गिर्द आबादी ज़्यादा है और व्यापार भी होता है।

समुद्रों का नमकीनपन— समुद्रों का पानी नमकीन है। हर एक नदी जो समुद्र में गिरती है धरती पर से कुछ पदार्थ घोल-घोल कर अपने साथ लाती है। इन पदार्थों में नमक का भाग बहुत है। भूमध्य-रेखा के आसपास जहां गर्मी बहुत पड़ती है, और समुद्र से वाष्प ज्यादा उठते रहते हैं, समुद्रजल में नमक ज़्यादा है।

समुद्र जल में नमक होने के कारण जल का घनत्व या भारीपन ज़्यादा है, और उसमें भारी भारी पदार्थों को तैराने की ज़्यादा शक्ति है।

समुद्री धाराएं (Currents)—समुद्र में जल के नीचे बहाव की बड़ी धारें चलती हैं। यह प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से पृथ्वी के जल वायु पर अपना प्रभाव डालती हैं। भूमध्य रेखा के समीप ये धारें पूर्व से पश्चिम की ओर चलती हैं। भूमध्य रेखा के आस-पास का गर्म जल हलका होने से ऊपर रहता है, और ध्रुवों का ठण्डा जल भारी होकर नीचे की ओर बहता है। इससे एक धार बन जाती है। भूमध्य रेखा के समुद्र की गर्म धारें ध्रुव-वर्ती प्रदेशों में जाकर वहां गर्मी पहुँचाती हैं। यदि ये धाराएं न चलें तो इंगलैंड और उत्तरी यूरोप के लोग सर्दी से जम जांय।

---

(३)

जल वायु और वर्षा

समुद्रों से हर समय जल गर्मी से वाष्प बन कर उठा करता है। अधिक ऊपर जा कर वाष्प ठण्डे होकर बादल बन जाते हैं। समुद्रके ऊपरसे बड़े जोरसे बहने वाली हवाएं बादलों को उड़ा कर ले जाती हैं। जल वाष्पों से भरी हुई इन हवाओं को मौनसून कहते हैं। मार्ग में पर्वतों की ऊँची ऊँची चोटियों से टकराकर वे और ऊँची चढ़ जाती हैं और अधिक ठण्डी हो जाती हैं। इन चोटियों से टकराकर मानसून हवायें फिर वापस लौटती हैं और जल बन कर बरस जाती हैं।

कम और ज्यादा वर्षा इन हवाओं और इनके रुख पर निर्भर है। प्रायः इन हवाओं का रुख निश्चित है। अधिकता से वाष्प अधिक उठते हैं। भारतवर्ष में एक हवा पूरब में बंगाल की खाड़ी से वाष्प लेकर आती है, इसे पूरब की मानसून (पुरवा) कहा जाता है। यह दक्षिणपूर्व से उत्तर पश्चिम दिशा में बहती है, और हिमालय से टकराकर उत्तरी भारत के आसाम, बंगाल और युक्त प्रान्त तथा पूर्वीय पञ्जाब तक वर्षा करती है। पश्चिमी हवाएँ (पछवा) भी वर्षा लाती है। अरब सागर से उठे हुए वाष्पों को लाकर भारत के पश्चिमी तट, सिंध और पञ्जाब में वर्षा लाती है। पर पश्चिमी हवा अधिकांश अरब और अफ्रीकाके शुष्क मरुस्थलों से चलकर आती है। इसलिये इनमें नमी की मात्रा कम होती है।

इसलिये भारत के उत्तरी पश्चिमी प्रदेशों में वर्षा कम होती है। पश्चिमी हवाएं यूरोप में बहुत वर्षा लाती हैं, क्योंकि वे अटलांटिक महासागर से वाष्प लेकर आती हैं। चिरापूञ्जी (आसाम) में संसार में सब से अधिक वर्षा होती है। यहां ५०० इञ्च प्रति वर्ष वर्षा हो जाती है। इसी प्रकार दक्षिणपश्चिमी हवाएं नार्वे तथा ब्रिटेनमें अत्यधिक वर्षा लाती हैं। चिली,न्यूज़ीलैंड, पूर्वीय कीन्स-लैण्ड (आस्ट्रेलिया) नेटाल और ब्राज़ील में भी अत्यधिक वर्षा होती है।

जो स्थान शान्त कर्क रेखा और शान्त मकररेखा पर स्थित हैं वहां वर्षा बहुत कम होती है, क्योंकि वहां वायु ऊपर से नीचे की ओर उतरती रहती है, अर्थात् ठण्डे भागों से गर्म भागों की ओर जाती है। राजपूताना, ईरान, अरब, कैलिफोर्निया के मरुस्थल कर्क रेखा पर ही स्थित हैं, आस्ट्रेलिया, कालाहाटी और अराकामा के मरुस्थल मकररेखा पर हैं।

पहाड़ों की ओट में भी वर्षा नहीं होती, क्योंकि पर्वतों की ऊंची चोटियों को पार करके बरसाती हवाएं या मानसून वहां पहुँच नहीं सकतीं। गोबी के मरुस्थल का कारण हिमालय की ऊंची चोटियां हैं। हिन्दूकुश के पहाड़ तुर्किस्तान में वर्षा नहीं होने देते। तिब्बत भी इसी लिये शुष्क है। क्योंकि हिमालय की ओट में है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में, नमक की झील के आसपास का प्रान्त बिलकुल सूखा इसीलिये है क्योंकि तटवर्ती पर्वत बरसाती पर्वतों को आगे जाने से रोकते हैं।

महादेश

सम्पूर्ण पृथ्वी के स्थल भाग को निम्न लिखित पांच महादेशों में विभक्त किया गया है।

नाम महादेश	विस्तार वर्ग मीलों में	जनसंख्या
एशिया	१,७०,००,०००	१,०४,४०,००,०००
अफ्रीका	१,१५,००,०००	१५,००,००,०००
अमेरिका—		
उत्तरी	८०,००,०००	७७,००,००,०००
दक्षिणी	६८,००,०००	७,४०,००,०००
यूरोप	३७,५०,०००	५५ ००,००,०००
ओशनिया—		
आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड	३४,५०,०००	९०,००,०००
	कुल ५५,५,००,०००	१,९९,७०,००,०००

इनके अतिरिक्त उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों का स्थल-भाग जिसका विस्तार लगभग ५० लाख वर्ग मील है, निर्जन पड़ा है। इस प्रकार पृथ्वी की कुल आबादी १ अरब ९९ करोड़ या २ अरब के लगभग है। यह आबादी निरन्तर बढ़ रही है।

एशिया—एशिया धर्म और सभ्यता का जन्मदाता है। संसार के सभी बड़े धर्म एशिया में ही उत्पन्न हुए हैं। पृथ्वी

भर की कुल आबादी का ५३ फ़ीसदी एशिया की आबादी है। रेशम, चाय, छापे की विधि, बारूद, दिग्दर्शक यन्त्र, ताश का खेल, आतिशबाज़ी और वार्निश तथा अन्य कई चीज़ें एशिया की ही ईजाद हैं। गणित और चिकित्सा-शास्त्र के प्रथम पाठ भी एशिया ने दुनियां को सिखाए। आज एशियाका अधिक भाग यूरोपियन जातियों के अधिकार में है। परन्तु अब वहां भी अपनी खोयी हुई स्वतन्त्रता को उपलब्ध करने की आकांक्षा जाग उठी है। जापान ने यूरोप के विरुद्ध सब से पहले सिर उठाया और शक्तिशाली रूस को पराजय दी। चीन में क्रान्ति पूरे यौवन पर है। हिन्दुस्तान स्वतन्त्रता के लिये संघर्ष कर रहा है। अरब लोग अपनी जातीय और राष्ट्रीय-एकता के लिये आन्दोलन कर रहे हैं। फ़ारस में राष्ट्रीयता की भावना ज़ोरों पर है। अफ़गानिस्तान भी राष्ट्रीयता और स्वतन्त्रता की इस लहर से अछूता नहीं रहा। एशिया के कोने-कोने में आज नव-जागृति के चिन्ह दिखाई दे रहे हैं।

पानएशियाटिक आन्दोलन—सम्पूर्ण एशिया की जातियोंकी एकता का यह आन्दोलन कई वर्ष पूर्व जापान ने आरम्भ किया था। एक "भारत जापानी संघ" (Indo Japanese Association) कायम हुई। उसके बाद पीकिंग में "एशियाई राष्ट्र संघ" की स्थापना हुई। १६३१ में लाहौर में एशिया भर की महिलाओं का सम्मेलन हुआ।

परन्तु चीन में जापान की ज़्यादतियों और बढ़ती हुई साम्राज्याकांक्षा के कारण इस आन्दोलन को बहुत धक्का लगा है। क्योंकि अब तक वही इस आन्दोलन का नेतृत्व कर रहा था।

हाल ही में जापान ने "एशियाई मुस्लिम राष्ट्रसंघ" का आन्दोलन खड़ा किया है। मुसलमान राष्ट्रों में 'पान इस्लामिज़्म' का आन्दोलन देर से चल रहा है, परन्तु अब चीन युद्ध में चीन की मुसलिम जनता की सहानुभूति लेने के लिये वह इस आन्दोलन की मदद कर रहा है।

यूरोप—पृथ्वी के सम्पूर्ण स्थलभाग का चौदहवां हिस्सा है जो ३५ छोटे बड़े राष्ट्रों में विभक्त है। यूरोप में कम से कम १२० भाषाएं बोली जाती हैं, जिनमेंसे ३८ ऐसी हैं जिन्हें १० लाख से ज़्यादा आदमी बोलते हैं। यूरोप में सब से अधिक जर्मन भाषा बोली जाती है। फ्रेंच भाषा कई राष्ट्रों की सरकारी भाषा है।

यूरोप में विविध देश अपनी राष्ट्रीय सीमाओं में परिवर्तन कराने के लिये बहुत आन्दोलन कर रहे हैं। मध्य यूरोपके राष्ट्रोंमें विविध जातियां और विविध भाषाएं बोलने वाले लोग इस रीतिसे राष्ट्रों में विभक्त हो गये हैं कि प्रत्येक देश में किसी जाति का बहुमत और किसी का अल्पमत हो गया है। अल्पमत जातियों की समस्या इन दिनों मध्य यूरोप के राष्ट्रों में अत्यन्त विकटरूप से उपस्थित है। वार्साई की संधि द्वारा राष्ट्रों के जो विभाग किये

गये थे वे टूट फूट रहे हैं। यूरोप एक भयंकर बारूदखाना बना हुआ है, जो कभी भी भयंकर युद्ध के रूप में फट सकता है।

अफ्रीका—विस्तार में एशिया के बाद इसी महाद्वीप का नंबर है। खनिज द्रव्य, सोना और हीरे यहां बहुत निकलते हैं। इस समय सारे अफ्रीका को यूरोपीय कौमों ने आपस में बाँटा हुआ है। परन्तु अब यहां के निवासियों में भी जागृति के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। अफ्रीका के इस प्रकार से टुकड़े बांटे गये हैं।

फ्रांस ४२ लाख वर्गमील, बर्तानिया ३९ लाख ८४ हज़ार, बेल्जियम ९ लाख, पुर्तगाल ८ लाख, इटली ६ लाख ८० हज़ार (और अब इसके अतिरिक्त साढ़े तीन लाख वर्गमील अबीसीनिया भी ले लिया है), स्पेन १ लाख ४० हज़ार वर्ग मील. मिश्र अब स्वतन्त्र राष्ट्र है, यद्यपि अब भी वह इंगलैण्ड के प्रभाव में है।

अमेरिका—उत्तरी और दक्षिणी दो भागों में विभक्त है। पनामा का जलमार्ग दोनों भागों को जुदा करता है। उत्तरी अमेरिका यूरोप से दुगना है। इसके तीन मुख्य विभाग हैं। केनाडा, संयुक्त राष्ट्र और मैक्सिको। केनाडा ब्रिटिश साम्राज्य में है। दक्षिणी अमेरिका को 'लेटिन' अमेरिका भी कहते हैं और यह कई प्रजातन्त्र राज्यों में विभक्त है।

मुनरो सिद्धान्त—सन् १८२३ में कांग्रेस को सन्देश देते हुए संयुक्त राष्ट्र के प्रेज़िडेन्ट मुनरो ने घोषणा की थी कि अब से अमेरिका का कोई भाग भी यूरोपियन लोगों के उपनिवेश बनाने

के लिये खाली नहीं है और अमेरिका में यूरोप का हस्तक्षेप सहन नहीं किया जायगा। हाल ही में अमेरिका के प्रेज़िडेन्ट रूसवल्ट ने अमेरिका और केनेडा के मध्य में एक पुल का उद्घाटन करते हुए केनेडा के सम्बन्ध में भी यही घोषणा दुहरायी है, कि अमेरिका किसी राष्ट्र का केनेडा पर आक्रमण भी सहन नहीं करेगा।

ओशेनिया—आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैण्ड दो भागों में विभक्त हैं। यहां की आबादी संसार की कुल आबादी का $\frac{1}{2}$ फी सदी है। हालांकि यहां का क्षेत्रफल कुल स्थल भाग का १७ फी सदी है।

(५)

राजनीतिक विभाग

पांचों महादेश राजनीतिक दृष्टि से कई राष्ट्रों में विभक्त हैं। सब मिलाकर संसार में ७७ मुख्य राष्ट्र हैं। नीचे इनके नाम विस्तार और जनसंख्या दी जाती है। इनमें अधिकांश 'राष्ट्रसंघ' के सदस्य हैं।

संसार के राष्ट्र

विस्तार और जनसंख्या

नाम देश	विस्तार (वर्गमीलों में)	आबादी (००० हटाकर)	प्रति वर्गमील आबादी	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध: कब सदस्य बना	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध: सदस्य हटनेकी तिथि
१ अफ़ग़ानिस्तान	२४५०००	११,०००	४८	२७ सितम्बर १६३४	
२ अलबेनिया	१०,६२६	१००३	६४.२	१६ दिसम्बर १६२०	
३ एन्डोरा	१६१	५	२७.४		
४ अर्जेन्टाइन	१०७६६६५	१२,५६१	११ ६	१८ जुलाई १६१६	
५ आस्ट्रेलिया	२६७४५८१	६८२०	२.६	१० जनवरी १६२०	
६ आस्ट्रिया	३२,३६६	६७६०	२०८ ६	मार्च १६३८ से जर्मनी में सम्मिलित	
७ बेल्जियम	११७७५	८३००	७०४	१० जनवरी १६२०	
८ बोलिविया	५१४४६५	३१७१	६.२	,, ,,	

नाम देश	विस्तार (वर्गमीलों में)	आबादी (००० हटाकर)	प्रति वर्गमील आबादी	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध	
				कब सदस्य बना	सदस्य हटने का तिथि
९ ब्राज़ील	३२९१४१६	४२३९५	१२·९		१२ जून १९२८
१० बल्गेरिया	३९८२५	६२५४	१५३	१६ दिसम्बर १९२०	
११ बर्मा	२३३४९२	१४६६७	६२·८	अप्रैल १९३७ से भारत से जुदा	
१२ केनेडा	३४६६५५६	१०३७७	२·९	१० जनवरी १९२०	
२३ चिली	२८६७७६	४५५२	१५·८	४ नवम्बर १९१९	
१४ चीनी जनतन्त्र	२८४५७४०	४१८४७९	१४५·५	१६ जुलाई १९२०	
१५ कोलम्बिया	४४०८४६	८५८०	१९·३	१६ फरवरी १९२१	
१६ कोस्टारिका	२३०००	५७८	२५·१	१६ दिसम्बर १९२०	२४ दिस० १९२६
१७ क्यूबा	४४१६४	४०११	९०·९	८ मार्च १९२०	
१८ ज़ेकोस्लोवेकिया	५४२४४	१४७३०	२७१·८	१० जनवरी १९२०	

नाम देश	विस्तार (वर्गमीलों में)	आबादी (००० हटाकर)	प्रति वर्गमील आबादी	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध कब सदस्य बना	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध सदस्य हटने की तिथि
१९ डानज़िग का (स्वतन्त्र नगर)	७५४	४०७	५४०	(लीग आफ़ नेशन्स के अधीन है)	
२० डेनमार्क	१६५७५	३७०६	२२४	८ मार्च १९२०	
२१ डोमिनियन जनतन्त्र	१९३२५	१४७८	७६.४	२९ सितम्बर १९२४	
२२ यूकेडा	३३७०००	३४१४	१०.१	२८ सितम्बर १९३४	
२३ मिश्र	३८००००	१५९०५	२४.१	२६ मई १९३७	
२४ एस्टोनिया	१८३५३	११२६	६१.३	२२ सितम्बर १९२१	
२५ यूथोपिया	३५००००	७६००	२१.७	२८ सितम्बर १९२३	
२६ फ़िनलैण्ड	१३४५५७	३६६७	२७.३	१६ दिसम्बर १९२०	
२७ फ्रांस	२१२७३६	४२०१३	१९५.२	१० जनवरी १९२०	
२८ जर्मनी	१८१६९९	६[illegible]७९०	३७२	१९२६	२१ अक्तू० १९३७

नाम देश	विस्तार (वर्गमीलों में)	आबादी (००० हटाकर)	प्रति वर्गमील आबादी	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध — कब सदस्य बना	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध — सदस्य हटने की तिथि
२९ ग्रेट ब्रिटेन और					
३० उत्तरी आयर्लैण्ड	९४२७८	४४९३७	४६६	१० जनवरी १९२०	
३१ ग्रीस	५०२७५	६८३९	१२३.५	,, ,,	
३२ गौटेमाला	४८२९०	२३७३	४९.४	,, ,,	१३ मई १९३८
३३ हेती	१०२०४	२५५०	२६४	३० जून १९२०	
३४ होंडुरास	४६३३२	९७४	२१.८	३ नवम्बर १९२०	२२ जून १९३८
३५ हंगरी	३५९११	८९८९	२४९.४	१८ सितम्बर १९२२	
३६ आइसलैण्ड	३९७०९	१०९	२.६	सदस्य नहीं बना	
३७ हिन्दुस्तान	१५७५१८७	३३८१७१	२१५	१० जनवरी १९२०	
३८ ईरान (फ़ारिस)	६२८०००	१५०००	२३.९	२१ नवम्बर १९१९	
३९ ईराक	११६६००	२८५७	२४.५	३ अक्टूबर १९३२	
४० आयर	२६६००	२९६६	११६	१० सितम्बर १९२३	

नाम देश	विस्तार (वर्गमीलों में)	आबादी (००० हटाकर)	प्रति वर्गमील आबादी	राष्ट्र संघ से सम्बन्ध: कब सदस्य बना	राष्ट्र संघ से सम्बन्ध: सदस्य हटनेकी तिथि
४१ इटली	११९७४०	४२५२८	३४६.८	१० जनवरी १९२०	११दिसम्बर १९३९
४२ जापान	१७८७५६	६९२५४	३८७.४		२७ मार्च १९३५
४३ लटविया	२००५६	१९५१	९७५	२२ सितम्बर १९२१	
४४ लाइबेरिया	४४०००	२०००	४४	३० जून १९२०	
४५ लीचटेन्स्टीन	६५	१०	१५७.१	सदस्य नहीं बना	
४६ लिथूनिया	२१४८९	२५००	११५.७	२२ सितम्बर १९२१	
४७ लक्सम्बर्ग	९९९	२९७	२९७ २	१६ दिसम्बर १९२०	
४८ मैक्सिको	७६७२००	१६५५३	२१.६	१२ सितम्बर १९३१	
४९ मोनेको	८	२२	२५१९	सदस्य नहीं	
५० नीदर लैण्ड	१२६६२	८४७५	६६८	९ मार्च १९२०	
५१ न्यूफ़ाउंडलैण्ड	४२७४०	२८९६	६ ८	सदस्य नहीं	
५२ न्यूज़ीलैण्ड	१०३७२२	१५७४	१५.२	१० जनवरी १९२०	

नाम देश	विस्तार (वर्गमीलों में)	आबादी (००० हटाकर)	प्रति वर्गमील आबादी	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध: कब सदस्य बना	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध: सदस्य हटनेकी तिथि
५३ निकारगुआ	४९२००	६३८	१५	३ नवम्बर १९२०	२६ जून १९३८
५४ नार्वे	१२४५८८	२८१४	२२ ६	५ मार्च १९२०	
५५ पनामा	३४१६९	४६७	१४५	९ जनवरी १९२०	
५६ पारागुआ	७००००	९१३	१५		२४ फर्वरी १९३७
५७ पीरू	५३२१८५	६७९२	१२ ७	१० जनवरी १९२०	
५८ पोलैण्ड	१५०,०००	३२१३४	२१४	"	
५९ पोर्चुगाल	३५४९०	६८२६	१९२.२	"	
६० रूमानिया	११३८८४	१९४२३	१७१	८ अप्रेल १९२०	
६१ सालवेडर	१३१७६	१६३२	१२०		
६२ सान मैरीनो	३८	१४	३६७		
६३ अरब	६०००००	४५००	१५	सदस्य नहीं बना	
६४ स्याम	२००१४८	१४५०२	६५	१० जनवरी १९२०	

	नाम देश	विस्तार (वर्गमीलों में)	आबादी (००० हटाकर)	प्रति वर्गमील आबादी	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध: कब सदस्य बना	राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध: सदस्य हटने की तिथि
६५	दक्षिणी अफ्रीका	४७२५५०	६५८६	२०.३	,,	
६६	स्पेन	१९६६००	२४५८३	१२५.५	१० जनवरी १९२०	
६७	स्वीडन	१६६८४२	६२४६	३६.८	९ मार्च १९२०	
६८	स्विट्ज़रलैण्ड	१५९४४	४०६६	२५४.८	८ मार्च १९२०	
६९	तिब्बत	४५००००	२०००	४.३	सदस्य नहीं	
७०	टर्की	२९५०००	१६२००	५५	१८ जुलाई १९३२	
७१	रूस	८१६७५५६	१८०७००	२०.६	१८ सितम्बर १९३४	
७२	सं.रा. अमेरिका	३०२६७८९	१२९२५७	४३.२	सदस्य नहीं बना	
७३	यूरोगुआ	७२१५३	२०३५	२८.३	१० जनवरी १९२०	
७४	वेटिकन सिटी	.१७	१	६०३०	सदस्य नहीं	
७५	वेनिज़ेला	३९३९७६	३४०६	९.७	३ मार्च १९२०	
७६	यमन	७५०००	३०००	४०	सदस्य नहीं	
७७	यूगोस्लाविया	९५५५८	१५०००	१५६.	१० फर्वरी १९२०	

राष्ट्रसंघ का नियम है कि संघ से त्यागपत्र देने की तिथि के दो साल बाद सदस्य का नाम बाकायदा मैंबरी से खारिज किया जाता है। इस लिये अन्तिम कालम में सदस्यता से हटने की जो तिथियां दी हैं, वे त्यागपत्र देने से दो वर्ष बाद की हैं।

उपर्युक्त देशों में उन देशों के नाम छोड़ दिये गये हैं जिन को स्वतन्त्रता नहीं है। चीन के उत्तर में मांचूकू राज्य की स्थापना १९३२ में जापान ने की थी। परन्तु अभी तक (मार्च १९३८) सिवाय जापान, इटली, जर्मनी और सानसालवेडर के सिवाय उस की सत्ता को दुनिया के राष्ट्रों ने स्वीकार नहीं किया। इसका क्षेत्र-फल ५०३०१३ वर्गमील और आबादी ३ करोड़ ४२ लाख है।

मनुष्यों की विविध जातियां

हम पहले लिख आये हैं कि सम्पूर्ण प्राणिजगत की उत्पत्ति प्रारम्भ में एक ही नसल से है। विकास सिद्धान्त के अनुसार चिंपांजी और वनमानुस मनुष्य के पूर्वज हैं। पूर्व प्रस्तर युग के जिन मनुष्यों की खोपड़ियां ज़मीनमें दबी हुई मिली हैं, वर्तमान मानव जाति उनकी वंशज है। परन्तु नसल और रूप रंग में इतनी समानता होते हुए भी भिन्न भिन्न प्रदेशों में रहने वाले मनुष्यों में रंग रूप का कुछ भेद अवश्य है। आजकल के वंशविज्ञान के पंडित मनुष्यों की खोपड़ियों, नाक और चेहरे की बनावट और रंगों की विविधता के आधार पर मानव जाति के कई भेद करते हैं। विविध प्रकार की आबोहवा, पहाड़, रेगिस्तान, समुद्र, द्वीप, सर्दी और गर्मी

की परिस्थितियां प्राणियों के रंगरूप और बनावटमें कई प्रकार के भेद उत्पन्न करती रहती हैं। एक तरफ़ प्रकृति ये भेद उत्पन्न कर रही है, दूसरी तरफ़ मनुष्यों ने प्रकृति की प्रवृत्ति के विरुद्ध चलकर अपने आप को एक सामाजिक और तमाम दुनियां में घूमने फिरने वाला प्राणी बना लिया है। वह एक ही प्रदेश या एक ही प्रकार की परिस्थिति में बन्द होकर नहीं बैठता। विविध प्रदेशों में आने-जाने और भिन्न भिन्न मानव समूहों के परस्पर मिलते जुलते रहने से मानव जाति में स्वभावतः समानताएं उत्पन्न होगयी हैं। परस्पर सब का मिश्रण होते रहने से रंग-रूप और जाति-भेद भी घटते चले गये हैं। आज कोई भी मनुष्य किसी प्राचीन कालके मनुष्य का शुद्ध वंशज है यह कहना ग़लत होगा। अत्यन्त प्राचीन काल से उनमें परस्पर रक्त का सम्मिश्रण होता रहा है।

इस प्रकार मनुष्य जाति के इतिहास में हम निरन्तर इन दोनों प्रवृत्तियों को देखते हैं। विविध प्रदेशों की भिन्न प्राकृतिक परिस्थितियां उसे भिन्नता की ओर लेजाना चाहती हैं। इस प्राकृतिक प्रवृत्ति के विरुद्ध उसकी अपनी जातिभेद को मिटाने वाली सामाजिक प्रवृत्तियां दूसरी तरफ़ अपना काम करती रही हैं। इस लिये किसी भी आधार पर किसी स्पष्ट जातिभेद की सीमाएं निश्चित करना असम्भव है। मनुष्य जाति की मानवीय एकता और वर्तमान अन्तरराष्ट्रीयता की प्रबल प्रवृत्तियों को देखते हुए इस प्रकार के जातिभेद पर विचार करना अनावश्यक और व्यर्थ भी हो गया है। क्योंकि जो थोड़े सूक्ष्म जातिभेद दिखाई देते हैं। वे मनुष्य जाति

की प्रतिदिन बढ़ती हुई समानताओं के मुकाबले में इतने तुच्छ प्रतीत होते हैं कि प्रायः दैनिक व्यवहार में हमारा ध्यान उन भिन्नताओं की ओर जाता तक नहीं। इसमें सन्देह नहीं कि कहीं-कहीं प्रादेशिकता और जातिभेद की प्रबल प्रवृत्तियां भी दृष्टिगोचर हो रही हैं, परन्तु वे उसी प्राकृतिक प्रवृत्ति की रूपान्तर और प्रतिनिधि हैं जिस का ऊपर ज़िक्र आया है, और जिस प्रवृत्ति से युद्ध करते हुए मनुष्य अपने आप को निरन्तर एक मनुष्य समुदाय के रूप में संगठित करने का प्रयत्न करता आया है, जो प्राकृतिक प्रवृत्ति यदि कहीं मनुष्य पर विजय पाजाती तो आज मनुष्य पृथ्वी का स्वामी होने के स्थान पर उसके किसी किसी कोने में ह्रासोन्मुख बैठा अपनी मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा होता। मानवीय एकता का सबसे अधिक अनुभव मनुष्य ने इस युग में किया है, और विज्ञान ने उसे अपने इस आदर्श को प्राप्त करने के लिये साधन भी देदिये हैं।

फिर भी विविध मनुष्यों के रंग रूप का भेद दिलचस्पी से ख़ाली नहीं, और यह कुछ ऐतिहासिक महत्व भी रखता है। इसलिए वैज्ञानिकों ने इसका अध्ययन किया है और अपने अध्ययन के आधार पर कुछ जाति विभाग भी किये हैं, परन्तु अभी इन के सम्बन्ध में वंश विज्ञान के विद्वानों में भी परस्पर बहुत विवाद है। रङ्ग रूप खोपड़ी और जबड़े की नाप और बनावट के आधार पर कोई निश्चित परिणाम निकाले जा सकते हैं, इसमें भी अभी सन्देह की काफ़ी गुंजाइश है। रंग के आधार पर गोरी, पीली और काली जातियों में भेद किया जाता है। परन्तु रंग पर जल-

वायु का निरन्तर प्रभाव पड़ता है। निरन्तर कुछ पुश्तों तक गर्म मुल्कों में रहने के बाद गोरी नसलें काली होने लगती हैं। बहुत प्राचीन काल में सम्भवतः सम्पूर्ण मनुष्य जाति का रंग काला और भूरा था। सर्द मुल्कों में जाने पर ही उनमें सफ़ेदी आयी। लम्बार्डी के रहने वालों की खोपड़ियां कुछ ही सदियों में गोल हो गई हैं, और यूरोप से अमेरिका जाने वालों की खोपड़ियों में एक पुश्त में ही तबदीली आ गई है। आस्ट्रेलिया के डार्लिंग प्रदेश में जो अंग्रेज़ गये हैं उनके कद कुछ ही पुश्तों में असाधारण लम्बे हो गए हैं। इस लिए इन सब के आधार पर जो जातिभेद किया जाता है, उसे बहुत महत्व नहीं दिया जा सकता। फिर भी हमें सामान्यतः संसार के मनुष्य तीन मुख्य जातियों में बंटे हुए मालूम होते हैं।

(१) काकेशियन, (२) मंगोल, (३) एथियोपिक।

(१) **काकेशियन**—इस जाति के कई उपविभाग हैं। नार्डिक (नार्वे स्वीडन के लोग उत्तर पश्चिमी यूरोपियन, कुर्द, अफ़ग़ान); एलपाइन (एल्प्स पर्वत के प्रान्तों में रहने वाले), मध्य यूरोप के निवासी; आर्मीनियन, भूमध्यसागर के आसपास के भूरे रंग के और लम्बी खोपड़ी वाले मनुष्य, दक्षिण यूरोप और अरब के लोग, भारत के द्रविड़ लोग। भाषा के आधार पर इन्हीं में आर्य, सेमाइट, हेमाइट और बास्क आदि भेद किये जाते हैं।

(२) **मंगोल जाति**—इस जाति का चेहरा चपटा, नाक

छोटी और चपटी, सिर गोल, आँखें छोटी छोटी और रंग पीला है। कद के छोटे होते हैं। इसमें मंगोल, जापानी, चीनी, इण्डो-चायनावासी, मलायावासी और अमेरिका के रेड इंडियन हैं।

(३) एथियोपिक—इस जाति का रंग काला है। बाल भी काले, जबड़ा आगे को बढ़ा हुआ और होंठ मोटे होते हैं। कद लम्बा होता है। अफ्रीका की तमाम काली जातियां, नीग्रो, ओशेनिया के पपुअन और मेलेनेशियन तथा बौने कद के लोग इसी जाति में सम्मिलित हैं।

गोरों का प्रभुत्व—जैसा ऊपर कहा गया है यह जाति-विभाग अन्तिम और पूर्ण नहीं। पृथ्वी की बहुत सी जातियां इन में से किसी भी विभाग में शामिल नहीं की जा सकतीं। इसमें सन्देह नहीं कि काकेशियन जाति का इस समय संसार पर प्रभुत्व है, जिसे दूसरे शब्दों में 'गोरी जातियों का प्रभुत्व' कहा जाता है। परन्तु यह प्रभुत्व किसी जातीय विशेषता के कारण नहीं। पश्चिमी यूरोप की गोरी जातियां आज सभ्यता में अग्रणी हैं। इसका एक कारण तो उन्हें आजकल की ज़रूरतों के लिहाज़ से आवश्यक प्राकृतिक साधनोंका उपलब्ध हो जाना है। दूसरा कारण ऐतिहासिक है। एशिया से आने वाली जातियों ने जब पूर्वीय यूरोप से इन जातियों को खदेड़ा तो वे पश्चिमी यूरोप में आकर बसे। वहां पर्याप्त खाद्य सामग्री का अभाव था, जिसकी वजह से उन्होंने मछलियों के शिकार के लिये

समुद्र में घूमना आरम्भ किया और साथ ही समुद्र-तटों पर तिजारत का पेशा अख्तियार किया। स्वभावतः समुद्र का व्यापार उनके हाथ में आगया। तिजारत के सिलसिले में विविध प्रकार के लोगों और जातियों से मिलते जुलते रहने से उनमें बुद्धि और विज्ञान का स्वाभाविक विकास हुआ और वे संकुचित परिस्थिति से निकलकर विशाल संसार में विचरने के योग्य हुए। औद्योगिक क्रान्ति होने पर वे वर्तमान युग के मुखिया बन गए। अब धीरे धीरे अन्य जातियांभी उनकी सतहपर आती जारही हैं।

भिन्न भिन्न जातियों की संख्या

संसार में भिन्न भिन्न जातियों के मनुष्यों को संख्या इस प्रकार है।

काकेशियन—	७२ करोड़ ५० लाख
मंगोलियन—	६८ करोड़
सेमिटिक—	१० करोड़
नीग्रो और बान्तू—	२१ करोड़
मलायावासी—	१० करोड़ ४५ लाख
रेड इंडियन—	३ करोड़

रेड इंडियन संख्या में निरन्तर बड़ी तेज़ी से घट रहे हैं।

तीसरा अध्याय

अन्तर्राष्ट्रीय प्रवृत्तियां और समस्याएं

(१)

राष्ट्र संघ

महायुद्ध के बाद १० जनवरी १६२० को राष्ट्र संघ का जन्म हुआ। वार्साई की संधि पर इसी दिन हस्ताक्षर हुए और सन्धि की एक शर्त राष्ट्रसंघ की स्थापना थी। इस संघ की स्थापना के लिए सब से अधिक उत्साह अमेरिका के उस समय के प्रेज़िडेण्ट विलसन ने दिखाया था। संघ की स्थापना का उद्देश्य यह था कि भविष्य में सब राष्ट्र अपने आपसी झगड़ों को संघ में बैठ कर निपटाया करें और युद्ध की नौबत न आने दें। यदि कोई राष्ट्र लोकमत की परवाह न करके दूसरे राष्ट्र पर हमला कर ही बैठे, तो बाकी राष्ट्र मिलकर उसके हमले का

मुकाबला करें। इसी परस्पर रक्षा के सिद्धान्त को 'सामूहिक रक्षा' (Collective Security) का सिद्धांत कहा जाता है। निर्बल राष्ट्रों को इस संघ से बड़ी आशायें होगई। संघ के नियम १० के द्वारा संघ के तमाम राष्ट्रों ने ज़िम्मा लिया कि वे परस्पर मिलकर एक दूसरे राष्ट्र की सीमाओं की रक्षा करेंगे।

प्रारम्भ में ही प्रेज़िडेण्ट विलसन की योजना को अस्वीकार करते हुए अमेरिका ने संघ का सदस्य बनने से इनकार कर दिया। जर्मनी, आस्ट्रिया, रूस और टर्की को जान बूझ कर बाहर रखा गया। यद्यपि बाद में इन राष्ट्रों को शामिल कर लिया गया, परन्तु संघ के राष्ट्रों में भी परस्पर सन्देह के भाव शुरू से ही विद्यमान थे। प्रारम्भ में ही संघ अपने उद्देश्य में असफल हो गया जब इटली ने फ्यूम पर और पोलैंड ने विलना पर जबर्दस्ती कब्जा कर लिया और राष्ट्र संघ खड़ा देखता रहा। फ्यूम यूगोस्लाविया के पास था और विलना पर अब तक लिथूनिया का दावा चला आता है।

संघ का नियम था कि यदि कोई देश 'राष्ट्र संघ' की अवहेलना करके किसी दूसरे राष्ट्र पर आक्रमण करेगा तो समझा जायगा कि उसने ' संघ ' के सब राष्ट्रों से युद्ध छेड़ दिया है। ऐसी हालत में संघ के सब राष्ट्र उसके साथ राजनीतिक व्यवहार और व्यापारिक लेनदेन सब बन्द कर देंगे। जापान ने १६३१ में चीन पर हमला कर दिया और १६३२ में उसके एक भाग पर अधिकार करके "मांचूको" के नाम से नये राष्ट्र की स्थापना की। 'संघ' ने

लार्ड लिटन की अध्यक्षता में एक कमीशन बिठा कर इसकी लम्बी तहकीकात की। जिसने जापान के विरुद्ध निर्णय दिया। पर उस का कुछ फल नहीं हुआ। हाँ, जापान 'संघ' की अवहेलना करके उससे अलग हो गया। इटली ने अबीसीनिया पर हमला किया तब भी 'संघ' कुछ न कर सका। यद्यपि इङ्गलैण्ड ने लालसमुद्र और भूमध्य सागर में अपने स्वार्थ खतरे में देखकर राष्ट्रसंघ में जोर लगा कर इटली का व्यापारिक बहिष्कार कराया, परन्तु इस बहिष्कार का कोई असर नहीं हुआ, सब राष्ट्र इसमें सम्मिलित भी नहीं हुए और इटली अबीसीनिया को हड़प गया। यद्यपि 'राष्ट्र संघ' की दृष्टि में अबीसीनिया अभी तक 'संघ' का सदस्य और स्वतन्त्र राष्ट्र है। हाल ही में जर्मनी ने आस्ट्रिया को जबर्दस्ती अपने साथ मिला लिया है।

इन सब उदाहरणों से प्रायः सब राष्ट्रों का विश्वास 'संघ' से उठ गया है और वे समझने लगे हैं कि विपत्ति में संघ उनकी रक्षा नहीं कर सकता। 'सामूहिक रक्षा' के सिद्धान्त की असफलता भी सिद्ध हो गयी है, क्योंकि कोई भी राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की बला अपने गले डालना नहीं चाहता। अब सब कोई अपनी रक्षा के लिये 'संघ' का आसरा त्याग कर अपनी सेना और शस्त्रास्त्र सामग्री जुटा रहे हैं। निर्बल राष्ट्र आपस में संधियां कर रहे हैं कि एक दूसरे के आड़े वक्त पर काम आसकें।

'राष्ट्र संघ' का आदर्श तो बुरा न था। परन्तु उसकी निर्बलता और असफलता की बड़ी वजह यह हुई कि वह राष्ट्रों

की जनता का प्रतिनिधि नहीं था। उसमें सम्पूर्ण राष्ट्रों की जनता अपने प्रतिनिधि चुन कर नहीं भेजती बल्कि राष्ट्रों की सरकारें अपने प्रतिनिधि भेजतीं हैं। संसार के लोकमत का असर उस पर नहीं होता। दूसरे 'संघ' के नियमानुसार प्रत्येक महत्वपूर्ण प्रश्न का निर्णय सर्वसम्मति से ही होता है। एक सदस्य भी अपनी विरुद्ध राय देकर संघ के किसी निर्णय में बाधक हो सकता है। इसने संघ को व्यर्थ बना दिया है। भविष्य में संघ के विधान में भी उपयोगी सुधार असम्भव हो गये हैं। तीसरी वजह यह हुई कि संघ के पास ऐसी कोई शक्ति नहीं कि जिससे वह किसी राष्ट्रको किसी बात के लिये मजबूर कर सके। सघके पास कोई पुलिस या सेना नहीं। अपने सदस्यों के आन्तरिक मामलों में वह कोई दखल नहीं दे सकता। उनकी फौज या किसी बात की जाँच पड़ताल वह नहीं कर सकता। 'संघ' को कोई बात बतलाना, कोई सहायता देना न देना प्रत्येक राष्ट्र की इच्छा पर है। संघ की रचना राष्ट्रों की पूर्ण स्वाधीनता के सिद्धान्त पर हुई है। उन्होंने अपने आपको या अपने प्रभुत्व (Sovereignity) किसी अंश में भी संघ के अधीन नहीं किया। इसलिये वह एक प्रभुत्वहीन संस्था है।

राजनीतिक दृष्टि से जहां संघ एक मृतप्राय संस्था है, वहां सामाजिक दृष्टि से उसने कई एक अत्यन्त उपयोगी कार्य किये हैं। भिन्न-भिन्न देशों में सामाजिक सुधार के सम्बन्ध में उसने उपयोगी गणनाएं एकत्र की हैं। अफीम, औरतों के व्यापार आदि बुराइयों को दूर करने के लिये नियम बनाये हैं। अन्तर्राष्ट्रीय

व्यापार और आवागमन के मार्गों और साधनों के सुधार, स्वास्थ्य-रक्षा और अन्यान्य उपयोगी बातों के सम्बन्ध में भी उसने विशेषज्ञों से खोज कराकर उनके परिणाम प्रकाशित किये हैं।

संघ की साधारण बैठक साल में एक बार १० सितम्बर के करीब होती है। संघकी कौंसिल सालमें तीन बार होती है। पहले इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, इटली और जापान इसके स्थायी सदस्य थे। जर्मनी, इटली और जापान के निकल जाने से अब इंग्लैण्ड, फ्रांस और सोविएट रूस ही स्थायी सदस्य रह गये हैं। कौंसिल के बाकी सदस्यों का चुनाव संघ के सदस्यों की 'एसेम्बली' तीन साल से लिये करती है।

(२)

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय

'राष्ट्र संघ' ने एक अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की स्थापना की हुई है। विभिन्न राष्ट्र परस्पर के झगड़ों तथा परस्पर हुई संधियों के सम्बन्ध में विवादास्पद बातों का निर्णय कराना चाहें, विभिन्न राष्ट्रों में एक दूसरे राष्ट्र की पड़ी हुई सम्पत्ति की मिलकियत या अन्य इसी प्रकार के जो भी प्रश्न लावें उन पर अपना निर्णय देना इस अदालत का काम है। इस अदालत की स्थापना १६२२ में हुई थी। कई झगड़ों का निपटारा यह अदालत कर चुकी है। परन्तु इसके फैसलों का कोई कानूनी महत्व नहीं है, क्योंकि फैसलों को कोई मनवाने वाली शक्ति इसकी पीठ पर नहीं है। हां, इसके निर्णयों का नैतिक महत्व जरूर है।

अदालत के १५ जज और ४ डिप्टी जज हैं। जज ६ साल तक इस पद पर रहते हैं और उन्हें प्रति वर्ष १२५० पौंड वेतन मिलता है। जजों की नियुक्ति राष्ट्रसँघ की कौंसिल और एसेम्बली मिलकर करते हैं। सिर्फ राष्ट्रों की सरकारें ही वादी या प्रतिवादी के रूप में पेश हो सकती हैं।

(३)

अन्तर्राष्ट्रीय कानून

प्रत्येक देश की सरकार अपने देशवासियों के दैनिक व्यवहार और सामाजिक जीवन को भलीभाँति चलाने के लिये नियम और कानून बनाती है वे नियम और कानून उस देश की सीमाओं के भीतर ही लागू होते हैं। परन्तु विभिन्न देशों के पारस्परिक सम्बन्धों और परस्पर दैनिक व्यवहार के लिये भी कुछ नियमों और कानूनों की आवश्यकता है। कानून का उद्देश्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों और कर्तव्यों की सीमा को समझ कर अपने सामाजिक व्यवहार के लिये स्पष्ट निर्देश प्राप्त कर सके, और जहाँ सीमा का उल्लंघन करे वहाँ पर उसे रोका जा सके। अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार में इस प्रकार के निर्देश और देशों के आपसी व्यवहार की सीमाएं निर्धारित करने की ज़रूरत है। परन्तु फ़र्क यह है कि जहाँ प्रत्येक देश के अन्दर इस प्रकार के कानून बनाने और उनका पालन करवाने के लिये आवश्यक मैशीनरी राष्ट्र की व्यवस्थापिका सभा और सरकार के रूप में मौजूद रहती हैं, अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के लिये ऐसी कोई मैशीनरी नहीं है। फिर भी

इस ज़रूरत को पूरा करने के लिये सदा से विभिन्न राष्ट्र आपस में समझौते, अहदनामे और संधियां करते रहते हैं। अत्यन्त प्राचीन काल से राष्ट्रों के परस्पर व्यवहार के लिये इस्तेमाल होते होते कुछ सिद्धान्त परम्परागत कानून बन गये हैं। उदाहरणार्थ प्राचीनकाल से ही 'राष्ट्रों के दूत' आदरणीय माने जाते हैं। युद्ध काल में निश्शस्त्र नागरिकों को न छोड़ने का नियम भी बहुत पुराना और प्रथागत है। आजकाल राष्ट्रों में परस्पर आवागमन, व्यापार और सम्बन्ध बढ़ जाने से बहुत से सवाल पैदा होते हैं जिनका परस्पर निर्णय करना पड़ता है। डाक और तार का प्रबन्ध सब जगह सरकारी हाथों में है, परन्तु डाक या तार सब देशों में जाते हैं, और इस सम्बन्ध में कुछ सार्वभौम नियमों और कानूनों का बनाना आवश्यक हो जाता है।

आजकल राष्ट्रों में बहुत से अन्तर्राष्ट्रीय कानून निश्चित हुए हैं। उदाहरणार्थ एक देशवासी यदि दूसरे देश में जा बसे तो उसकी नागरिकता का निश्चय करने के नियम क्या हों। एक राष्ट्र का व्यक्ति दूसरे देश के बैंक में या दूसरे स्थान पर कोई सम्पत्ति रखे तो उसके सम्बन्ध में क्या नियम हों, एक राष्ट्र के नागरिक को दूसरे राष्ट्र में क्या सुविधायें दी जायं—इस प्रकार के बहुत प्रश्नों का हल अन्तर्राष्ट्रीय नियमों द्वारा किया गया है।

युद्ध के समय उदासीन राष्ट्रों को न छोड़ने, दो देशों के युद्धों में या किसी देश के घरेलू युद्ध में तटस्थ देशों का

हस्तक्षेप न करने आदि के सम्बन्ध में भी अन्तर्राष्ट्रीय नियम हैं। युद्धों की भयंकरता बढ़ जाने के कारण युद्ध सम्बन्धी कई कानून बनाए गये हैं। जैसे हवाई जहाज़ों से बमवर्षा को युद्धक्षेत्र तक सीमित रखने, ज़हरीली गैसों का और ज़हरीली "दम दम" गोलियों का प्रयोग न करने आदि के सम्बन्ध में भी अन्तर्राष्ट्रीय नियम बने हैं। इन नियमों का उद्देश्य युद्ध की भयंकरता और निर्दयता को रोकना है।

परन्तु जैसा कि ऊपर कहा गया है अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों का पालन कराने का साधन नहीं है, और इसलिए प्रायः ऐसे अवसर उपस्थित होते हैं जब कई राष्ट्र उनको भंग करते हैं। पिछले महायुद्ध के अवसर पर जर्मनी ने बेल्जियम की तटस्थता की परवाह न करके उसकी सीमा में से अपनी सेना ले जाने का प्रयत्न किया और युद्ध में ज़हरीली गैसों का प्रयोग किया। हाल ही में इटली और जापान ने ज़हरीली गैसों का प्रयोग किया है। जापान ने चीन युद्ध में कई बार तटस्थ राष्ट्रों के नागरिकों, और निहत्थे चीनी नागरिकों पर बम वर्षा की है। स्पेन के घरेलू युद्ध में भी दूसरे राष्ट्र हस्तक्षेप कर रहे हैं।

(४)

अल्प संख्यक जातियों की समस्या

भारतवर्ष की अल्पसंख्यक जातियों की समस्या से हम अच्छी तरह परिचित हैं। लोकतन्त्र शासन जनता के बहुमत (Majority)से होता है। जिस राष्ट्र में सब लोग एक नसल,

एक जाति, एक भाषा और एक धर्म को मानने वाले हों, और अपने आप को एक राष्ट्र का नागरिक समझते हों, दूसरे शब्दों में जिस राष्ट्र के निवासियों में राष्ट्रीयता की भावना इतनी प्रबल हो कि वे दूसरे किस्म के भेद भावों को कोई विशेष महत्व न देते हों, वहाँ तो काम सरलता से चल जाता है। क्योंकि वहां पर विचार भेद और पार्टियां राजनीतिक विचारों की भिन्नता के आधार पर होती हैं। परन्तु जहाँ राष्ट्रीयता के अतिरिक्त लोग अपने आप को विशेष जाति, धर्म, भाषा आदि की भावनाओं के आधार पर राष्ट्र में रहने वाले भिन्न-भिन्न गिरोहों से भी बँधा पाते हैं, जिनकी भक्ति राष्ट्र के अतिरिक्त अपने जाति, धर्म या भाषा में समानता रखने वाले गिरोह के प्रति भी उतनी ही, (या उससे भी अधिक) प्रबल है जितनी कि अपने राष्ट्र के प्रति है, वहाँ स्वभावतः लोग अपने जातीय, धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषा सम्बन्धी भेदों और स्वार्थों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होते, और उनके सामने प्रायः ऐसे ख़तरे आया करते हैं जब वे समझते हैं कि दूसरी जाति या दूसरे समुदाय के लोग जो उस देश में बहुमत में है उनके स्वार्थों को कुचल न दें या अपना प्रभुत्व स्थापित न कर लें। प्रायः बहुमत वाली जातियाँ भी अपनी संकुचित भावनाओं के कारण अल्पमत वाले लोगों की पर्वाह नहीं करतीं, और शासन-कार्य में पक्षपात से काम लेती हैं। दुनिया में अधिकाँश राष्ट्रों में विविध जातियों, धर्मों और भाषाओं के सम्बन्ध की विभिन्नताएं उपस्थित हैं। लोकतन्त्र के इस सिद्धान्त को कि हर एक जाति

को अपने आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्रता मिलनी चाहिये, और हर एक जाति अपने भाग्य की स्वयं मालिक है। "स्वभाग्य निर्णय का अधिकार (Right of self-determination) का नाम दिया गया है।" अधिकांश जातियों ने इस अधिकार के बहुत संकुचित अर्थ निकाले हैं। पुराने समय में कई बड़ी जातियों ने कई छोटी छोटी जातियों को बिलकुल कुचल कर उन पर अपना राजनीतिक प्रभुत्व तो स्थापित किया ही था, साथ ही अपनी भाषा और संस्कृति लादकर उनकी संस्कृति और भाषा के विकास को रोक दिया था। इस आज़ादी के ज़माने में वही जातियाँ अब अपनी भाषा और संस्कृति की पृथक् सत्ता स्थापित करने के लिये उत्सुक हो उठी हैं, और देश को उस सभ्यता, भाषा या सस्कृति के मुकाबले में जो कि कभी उन पर लादी गयी थी। अपनी संस्कृति व भाषा को खड़ा करना चाहती हैं। इन कारणों से जातियों में परस्पर वैमनस्य उतपन्न हो गया है। और क्योंकि राजनीतिक शक्ति का दुरुपयोग एक जाति दूसरी के विरुद्ध कर सकती है, इसलिये प्रत्येक जाति अपनी राजनीतिक अधिकार सीमाएं भी निश्चित कराना चाहती है।

दुनियां के अधिकांश देशों में यह समस्या है, और इस समय इसका अन्तर्राष्ट्रीय महत्व हो गया है।

युद्ध के बाद मध्य यूरोप के राष्ट्रों का पुनर्विभाग बहुत कुछ जातीयता और भाषा के आधार पर किया गया ताकि एक की जाति के या भाषाभाषी व्यक्ति एक ही राष्ट्र में इकट्ठे हो

जाँय; परन्तु कहीं-कहीं जातियाँ एक दूसरे में इतनी हिलमिल कर रह रही हैं कि राष्ट्रों के ऐसे विभाग करने प्रायः असम्भव हैं। राष्ट्रसंघ की सहायता से सजातीय व्यक्तियां का एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र में आदान प्रदान भी हुआ, पर इस से भी समस्या हल नहीं हुई।

राष्ट संघ की गारंटी—राष्ट्रसघ ने अल्प-सख्यक जातियों की रक्षा के लिये कुछ सिद्धान्त निश्चित करके गारंटी भी दी। राष्ट्र संघ ने निम्नलिखित सिद्धान्त तय किये।

(१) सरकारी नौकरियां, पद, सरकारी डिग्रियां और उपाधियां देने में कोई भेदभाव न रखा जायगा।

(२) अल्पमतवालों को सभाएं करने और संगठित होने के वही अधिकार होंगे जो दूसरों को हैं।

(३) खेतीबाड़ी और दूसरे पेशों में भी उनसे कोई भेदभाव न किया जायगा।

(४) अल्पमत वाली जातियों को अपने खर्च पर अपने पृथक दान से चलने वाली, धार्मिक, सामाजिक और सस्कृति का विस्तार करने वाली संस्थाएं स्थापित करने का पूरा अधिकार होगा।

ये नियम बहुत अच्छे हैं, परन्तु अलपमत वालों की इन से तसल्ली नहीं हुई। बहुमतवाली जातियां बहुधा इनका भंग भी करती रही हैं जिन की शिकायतें सुनते-सुनते राष्ट्र संघ थक गया है। १६३१ में भारतीय कांग्रेस ने भी अपने कराची के अधिवेशन में "अल्पसंख्यक जातियों के धर्म, भाषा और संस्कृति की रक्षा

तथा सरकारी नौकरी में उनके अन्य जातियों के साथ समान अधिकारों की" घोषणा की थी। जिस प्रकार उस घोषणा मात्र से भारतवर्ष की अल्पमत समस्या हल नहीं हुई, इसी प्रकार राष्ट्र संघ की घोषणा से भी नहीं हुई।

ज़ेचोस्लोवेकिया के "सुडेटन"—इस समय मध्य यूरोप के प्राय: सभी राष्ट्रों में यह समस्या भयंकर रूप से है। सब से बड़ी दिक्कत जर्मन जाति की है। जर्मनी ने जर्मन जाति की एकता का आदर्श पेश किया है। यूरोप के प्राय: सब राष्ट्रों में जर्मन लोगों की थोड़ी बहुत आबादी है। आस्ट्रिया को मिलाने के बाद अब जर्मनी ज़ेचोस्लोवेकिया के जर्मन प्रदेशों को जर्मनी में मिलाना चाहता है। १ करोड़ ५१ लाख की आबादी में ३२ लाख जर्मन हैं लगभग २१ फी सदी। स्वभावत: वे लोग चाहते हैं कि या तो उन्हें पड़ोसी जर्मन राष्ट्र में मिला दिया जाय, अथवा उन्हें ज़ेचोस्लोवेकिया में विशेष अधिकार दिये जाँय। इस प्रश्न को लेकर जर्मनी और ज़ेचोस्लोवेकिया में तनातनी है। ज़ेचोस्लोवेकिया की पुश्त पर जर्मन विरोधी राष्ट्र फ्राँस, रूस आदि हैं। इस तनातनी का परिणाम कहीं विश्वव्यापी युद्ध न बन जाय इसका सब को खतरा है। हाल ही में इंग्लैण्ड से लार्ड रंसीमैन ज़च जर्मन पार्टी (जिसका नाम 'सुडेटन' पार्टी है) और ज़ेच सरकार में इस सवाल पर सुलह कराने जर्मनी गये हुये हैं।

रूस की योजना—सोविएट रूस ने प्रत्येक जाति के पृथक स्वतन्त्र जनतन्त्र राज्य कायम करके इस समस्या को हल

किया है। रूस में बहुत सी जातियाँ रहती हैं और उनकी भाषाएं भी भिन्न हैं। ज़ार के समय में इन जातियों में परस्पर काफ़ी झगड़े होते थे और ज़ार की सरकार उन्हें आपस में एक दूसरे के विरुद्ध लड़ाती रहती थी। परन्तु वर्तमान रूस ने फिलहाल तो इस समस्या को बहुत हद तक सुलझाया है। फिर भी वहाँ जातियों में पृथक् जातीयता की प्रवृत्ति काफ़ी मात्रा में पाई जाती है।

चीन में जापान, चीनी मुसलमानों को भड़का कर अल्प-संख्याओं की समस्या को पैदा करने का हाल ही में प्रयत्न कर रहा है।

"कम्युनल अवार्ड" की योजना—भारतवर्ष में व्यवस्थापक सभाओं में अल्पसंख्यक जातियों के लिये जुदा स्थान निश्चित करके हिन्दू, मुसलमान और सिक्खों के लिये जुदा जुदा हलके बना दिये हैं। साथ ही पृथक निर्वाचन पद्धति—जिस के द्वारा हिन्दू हिन्दू को, मुसलमान सिर्फ़ मुसलमान को वोट दे सकता है—जारी की गई है। यह चुनाव का तरीका म्युनिसिपलटियों और जिला बोर्डों में भी कई स्थानों पर जारी किया जा रहा है और जहाँ जारी नहीं है वहां अल्प संख्यकों की ओर से इसकी माँग की जा रही है। सरकारी नौकरियों में भी जातीय अनुपात निश्चित किये जा रहे हैं। यह पद्धति इस समस्या को कहाँ तक हल कर सकेगी यह कहना कठिन है, परन्तु राष्ट्र विचार के लोग इससे सन्तुष्ट नहीं। वर्तमान साम्प्रदायिक निर्वाचन का

तरीका इंगलैण्ड के स्वर्गीय प्रधान मंत्री रैम्ज़े मैक्डानल्ड के उस फैसले के आधार पर है जो उन्होंने १६३२ में दिया था और जिसे "कम्युनल आवार्ड" के नाम से पुकारा जाता है। राष्ट्रीय विचारों के लोग इसे रद्द करना चाहते हैं। अल्पसंख्यक जातियों के नेता इस निर्वाचन पद्धति को आदर्श पद्धति तो नहीं मानते, पर मौजूदा हालत में उसे एक आवश्यक बुराई समझते हैं।

(५)

"मैंडेट" प्रणाली

महायुद्ध के बाद जर्मनी से छीने हुए उपनिवेशों और टर्की से छीने हुए प्रदेशों के लिये राष्ट्र संघ ने यह व्यवस्था की कि उन का शासन कुछ शक्तिशाली राष्ट्रों को सौंप दिया जाय। क्योंकि ये राष्ट्र संघ के आदेश या 'मैंडेट" के अनुसार शासन करते हैं, इसलिये उन्हें "आदेश प्राप्त राज्य" या 'मैंडेट' कहते हैं। जिन राष्ट्रों को शासन सपुर्द किया गया है वे राष्ट्रसंघ के प्रति इन के शासन के लिये उत्तरदायी हैं। इन्हें प्रति वर्ष शासन की रिपोर्ट लीग की कौन्सिल में पेश करनी पड़ती है। अब तक इन 'आदेश प्राप्त' राज्यों में से इराक को ही स्वतन्त्र किया गया है। आदेशप्राप्त राज्य और उनके विस्तार का नीचे के नक्शे से पता लगेगा।

आदेशप्राप्त राष्ट्र

नाम देश	विस्तार मीलों में	किसे मिला	आबादी
जर्मनी के प्रदेश			
१. दक्षिण पश्चिमी अफ्रीका	३,१७७२५	दक्षिणी अफ्रीका	३ लाख ५६ हज़ार
२. टोगोलैण्ड			
क. पश्चिमी भाग	१३,०४०	इंगलैण्ड	२ लाख ६४ हज़ार
ख. पूर्वीय भाग	२०,०७०	फ्रांस	७ लाख ३६ हज़ार
३. केमेरून			
क. निगेरिया	३४,०८१	इंग्लैण्ड	८ लाख २६ हज़ार
ख. फ्रेंच अफ्रीका	१,६६,४६०	फ्रांस	२३ लाख
४. तांगानिका	३ ६६,०००	इंग्लैण्ड	५१ लाख
५. रूआन्दा उरून्दी	२०५५०	बेलजियम	७ लाख ७ हज़ार
६. न्यूगायना	६३३००	आस्ट्रेलिया	६ लाख ७६ हज़ार
७. पश्चिमी-समोआ	११३३	न्यूज़ीलैण्ड	५६ हज़ार
८. प्रशान्त महा-सागर के द्वीप	७८५	जापान	

९. नौरू द्वीप	५३९६	इंगलैंड, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड		३ हज़ार
टर्की के प्रदेश				
१०. फिलिस्तीन	१८१००	इंगलैण्ड	}	१३ लाख
११. ट्रांस जोर्डन	३४०००	,,	}	
१२. सीरिया और लेबेनान	५७९००	फ्रांस		३६ लाख

फ़िलिस्तीन में इस समय यहूदियों के विरुद्ध तीव्र आन्दोलन उठा है और वे ब्रिटिश सरकार की इस नीति का तीव्र विरोध कर रहे हैं कि यहूदियों को उनके देश में बसाया जाय।

(६)

फ़िलस्तीन की समस्या और यहूदी विरोधी आन्दोलन

दुनियाँ में कुल १६६ लाख यहूदी हैं। सन् १८९७ में स्विट्ज़रलण्ड में संसार भरके यहूदियों की एक कान्फ्रेंस हुई, जिसमें वियाना के थियोडोर हर्ज़ल ने फ़िलिस्तीन में संसार के यहूदियों का एक जातीय राष्ट्र कायम करने का आन्दोलन आरम्भ किया। महायुद्ध के दिनों में संसार के यहूदियों की ओर से बृटिश सरकार के साथ यह समझौता किया गया कि बृटिश सरकार युद्ध के बाद फ़िलिस्तीन में यहूदियों की बस्ती कायम करने का वचन दे, और उसके बदले वे टर्की और जर्मनी के विरुद्ध संसार के सब यहूदियों का लोकमत इंगलैण्ड के पक्ष में करेंगे। इसके अनुसार सन् १९१६

में ब्रिटिश सरकार ने ऐसा वचन दिया। लार्ड बालफ़ोर ने एक घोषणा के द्वारा संसार के यहूदियों को इस बात का आश्वासन दिलाया। यह घोषणा "बाल्फ़ोर" की घोषणा के नाम से प्रसिद्ध है।

फ़िलिस्तीन की समस्या—महायुद्ध के बाद फ़िलिस्तीन के शासन की ज़िम्मेवारी राष्ट्र संघ ने ब्रिटिश सरकार पर रखी और वहाँ पर यहूदियों की बस्ती बसाने का उत्तरदायित्व भी उसी पर रखा। इस समय फ़िलिस्तीन की आबादी लगभग १४ लाख है जिसमें १० लाख अरब और ४ लाख यहूदी हैं। अरब लोग मुसलमान हैं। सन् १९१९ से लेकर १९३६ तक २ लाख ६० हज़ार यहूदी विदेशों से आकर यहाँ बसे हैं। यहूदियों की इतनी बड़ी संख्या बाहर से लाकर बसाने के कारण अरब लोगों में असंतोष फैला हुआ है। इससे अरब-राष्ट्रीयता और विशुद्ध अरब राष्ट्र का स्वप्न भंग होने का भय उत्पन्न होगया है। इतना ही नहीं, उन्हें डर है कि यहूदी लोग अपने धन, बल, शिक्षा और यूरोपीय देशों से अनुभव के बल पर फ़िलिस्तीन में अरब लोगों पर प्रभुत्व करने लगेंगे। इस समय यह विरोध अत्यन्त उग्र हो उठा है। ब्रिटेन का इरादा अब फ़िलिस्तीन को विभक्त करके अरब और यहूदियों के पृथक राज्य स्थापित कर देने का है। अरब लोग इस राष्ट्र-भङ्ग के विरुद्ध हैं। यहूदी लोग इसे मानने को तैयार हैं।

यूरोपीय राष्ट्रों में जातीयता की लहर के कारण यहूदियों का विरोध शुरू हो गया है और वे वहाँ से निकाले जा रहे हैं,

इस कारण भी फ़िलिस्तीन में रहने के लिये वे अत्यधिक उत्सुक हो उठे हैं।

जर्मनी में विरोध—जर्मनी में यहूदियों को नागरिकता के अधिकारों से वञ्चित कर दिया गया है। यहूदी लोग कोई अपना संगठन नहीं बना सकते, दुकानें नहीं खोल सकते, सरकारी नौकरी नहीं कर सकते, अखबार नहीं जारी कर सकते। वे लोग जर्मनी में कोई जायदाद के मालिक नहीं हो सकते। यदि कोई जर्मन यहूदी परिवार में विवाह करे तो वह भी जर्मन राष्ट्र के नागरिकता के अधिकारों से वंचित हो जाता है।

पोलैण्ड में विरोध—अप्रैल १९३७ में पोलैण्ड में पहली बार यहूदियों को राजनीतिक दृष्टि से हीन उद्घोषित किया गया। पोलिश मैडिकल एसोसिएशन ने यहूदी डाक्टरों को अपनी जमात से बाहर निकाला हुआ है, और वकीलों की जमात १० फ़ीसदी से ज्यादा यहूदियों को शामिल नहीं करती। १३ मई सन १९३७ को 'ब्रेस्ट लिटोवेस्क' में यहूदियों के विरुद्ध भयंकर विद्रोह उठ खड़ा हुआ जो १५ घंटे जारी रहा। बहुत से यहूदी मारे गये, बहुत से घायल हुए। प्रायः सब लूटे गये और कई दर दर के भिखारी बन गए। वार्सा की यूनिवर्सिटी में अनार्य जाती के विद्यार्थियों की संख्या सीमित कर दी गई और उन्हें आर्य विद्यार्थियों से पृथक बैठने को कहा गया।

रूमानिया में—रूमानिया में भी यहूदियों के विरुद्ध कानून

पास किये जा रहे हैं। दिसम्बर १९३७ के अन्त में 'राष्ट्रीय क्रिश्चियन पार्टी के नेता श्रीयुत गोगा ने अधिकारारूढ़ होकर घोषणा की कि यहूदियों को सरकारी नौकरी और अखबारों के कामों से पृथक् कर दिया जाय और जहाँ यहूदियों का रुपया लगा होगा या यहूदी कार्यकर्ता होंगे, उस कम्पनी या फर्म के साथ सरकार कोई सम्बन्ध न रखेगी। उस ने यहूदियों के तीन समाचारपत्रों को जिनकी ग्राहक संख्या बहुत अधिक थी, बिल्कुल बन्द कर दिया। गोगा मन्त्रिमंडल के हट जाने के बाद वर्तमान मन्त्रिमंडल इतना यहूदी विरोधी नहीं है, परन्तु रूमानिया में यहूदी विरोधी भावना काफी प्रबल है। धीरे-धीरे यह भावना अन्य देशों में भी बढ़ रही है। हाल ही में मुसोलिनी ने इटली में यहूदियों के विरुद्ध घोषणा की है। इंलैण्ड में भी कुछ व्यक्तियों में यह भावना उठ रही है।

(७)

स्पेन युद्ध और अहस्तक्षेप कमेटी

अप्रैल १९३१ में स्पेन में लोकतन्त्र शासन की घोषणा हुई और नये विधान के अनुसार उसे श्रमियों का लोकतन्त्र राष्ट्र उद्घोषित किया गया। फर्वरी १९३६ के चुनाव में साम्यवादियों के संगठित दल की (जिसे "पोपुलर फ्रंट" कहते हैं) विजय हुई स्वाभातः धनी वर्ग और पूंजीपतियों को यह विजय असह्य हुई। १७ जुलाई १९३६ को मोरक्को में, जो कि स्पेन के अधीन अफ्रीका का एक प्रदेश है, स्पेन की फौज ने नई सरकार के विरुद्ध बग़ावत कर दी। जनरल फ्रांको उन का नेता था। उसी दिन सारे स्पेन में कई

फ़ौजी अफ़सरों ने विद्रोह किया—अधिकाँश सेना विद्रोह में शामिल हो गई, पर नौ सेना और हवाई सेना सरकार के साथ रही। सरकार ने जनता के हाथ में शस्त्र देकर जनता की सेना खड़ी की। २४ जुलाई को जनरल मोला ने 'बर्गोस' में "राष्ट्रीय सरकार" कायम करने की घोषणा की। १ अक्टूबर को इस नई सरकार का अध्यक्ष जनरल फ्राँको उद्घोषित हुआ। तब से यह घरेलू युद्ध जारी है। मैड्रिड राजधानी को सुरक्षित न देख कर स्पेन की सरकार ने वेलेन्शिया को राजधानी बना लिया है।

जनरल फ्राँको को इटली और जर्मनी खुले-आम सहायता दे रहे हैं और स्पेन सरकार को रूस से हवाई जहाज़ों से युद्ध-सामग्री और सैनिकों की सहायता आ रही है। यूरोप के अन्य राष्ट्र भी अपने यहाँ से स्वयंसेवक भेजकर इस युद्ध में लड़ रहे हैं। यह संघर्ष एक तरह से साम्यवाद व लोकतन्त्र के विचारों और "फासिज़्म" का है—जिसमें रूस और फ्राँस की सहानुभूति स्पेन सरकार के साथ और जर्मनी और इटली की जेनरल फ्रांको के साथ है। इंग्लैण्ड को जमनी और विशेष करके इटली का भूमध्यसागर में, प्रभुत्व बढ़ाना असह्य है। स्पेन में इटली का प्रभुत्व बढ़ने का अर्थ है कि भूमध्यसागर उसके लिये सुरक्षित हो जाता है।

यदि स्पेन में स्पेन वालों को ही परस्पर लड़ना होता तो अब तक एक पक्ष की विजय हो जाती और यह युद्ध कभी का समाप्त हो गया होता। परन्तु बाहर से स्वेच्छा सैनिकों और युद्ध

सामग्री आने के कारण युद्ध समाप्त नहीं होता। इसलिये इंग्लैण्ड ने सब राष्ट्रों की एक कान्फ्रैंस बुलाकर स्पेन में बाह्य हस्तक्षेप को बन्द करने का प्रस्ताव किया। उसे मान कर कान्फ्रैंस ने सितम्बर १९३६ में 'हस्तक्षेप' कमेटी की नींव रखी। यह कमेटी बहुत देर से सोच-विचार कर रही है। स्पेन के बाहर से युद्ध सामग्री का आना बन्द करने के लिये पहले स्पेन के समुद्र तट पर पहरे का प्रबन्ध किया गया, परन्तु इसमें जल्दी ही परस्पर विवाद पैदा हो गया। जर्मन पहरेदार जहाज़ पर बम बरसाये गये, जिससे जर्मनी पहरे से हट गया।

अब बहुत विवाद के बाद यह स्कीम स्वीकृत हुई है कि एक अन्तर्राष्ट्रीय अधिकारी स्पेन के बन्दरगाहों का निरीक्षण करता रहे और एक कमीशन विदेशी सैनिकों को हटाने की कोशिश करे। जब यह प्रबन्ध संतोषजनक रीति से हो जाय, तब दोनों दलों को समुद्र में युयुत्सु (belligerent) राष्ट्रों के अधिकार दे दिये जायँ।

(८)

मुख्य मुख्य सन्धियाँ

निम्नलिखित संधियां पिछले महायुद्ध के बाद हुईं, जिन का आमतौर पर हवाला दिया जाता है।

(१) वार्साई की सन्धि—महायुद्ध के बाद जर्मनी से की गई थी। अब इस संधि के सिवाय उपनिवेशों सम्बन्धी शर्तों के,

बाकी सब शर्तें टूट चुकी हैं। जर्मनी एक लाख से ज्यादा सेना नहीं रख सकता था, परन्तु मार्च १९३५ में हिटलर ने अनिवार्य सैनिक सेवा का नियम बना दिया। नौ सेना पर लगायी हुई पाबन्दियों को उसने १९३५ में इङ्गलैण्ड के साथ एक "नौ सेना सम्बन्धी" समझौता करके तोड़ दिया। राइन नदी के आसपास के प्रदेश को शस्त्रहीन रखने की शर्त थी। मार्च १९३६ में हिटलर ने यह शर्त भी तोड़ दी और वहां छावनी रख दी। जर्मनी की नदियोंको अन्तर्राष्ट्रीय सम्पत्ति उद्घोषित किया गया था, नवम्बर १९३६ में जर्मनी ने इसकी भी समाप्ति कर दी।

(२) **लोकार्नो की सन्धि**—बेलजियम, फ्रांस, जर्मनी, बर्तानिया और इटली इन पांच राष्ट्रों ने १९२५ में सन्धि द्वारा यह तय किया था कि वार्सलीज़ सन्धि द्वारा तय की हुई जर्मनी की पश्चिमी सीमा में कोई तब्दीली न की जायगी। राइन प्रदेश और आस्ट्रिया पर अधिकार द्वारा जर्मनी ने इस सन्धि को भी भंग कर दिया है।

(३) **केलोग पैक्ट**—अगस्त १९२८ में ६० से ज्यादा राष्ट्रों ने बैठ कर यह तय किया कि वे आपस के झगड़े युद्ध से नहीं, परस्पर सुलह-सफाई से मिटाया करेंगे।

(४) **स्पेन में अहस्ताक्षेप सन्धि**—फ्रांस, जर्मनी, बर्तानिया, इटली और रूस में बैठ कर १८ अप्रेल १९३७ में यह सन्धि हुई कि स्पेन के घरेलू युद्ध में वे किसी पक्ष की सहायता न करेंगे।

इसके लिये एक अहस्तक्षेप कमेटी भी बैठी, परन्तु इस संधि का भी पूरी तरह पालन नहीं हो रहा।

(५) आस्ट्रो जर्मन सन्धि—जुलाई १६३६ में जर्मनी और आस्ट्रिया में संधि हुई और जर्मनी ने आस्ट्रिया की स्वतन्त्रता को कायम रखने का वचन दिया। परन्तु मार्च १६३८ को उसे जर्मनी में मिला लिया।

(६) फ्रांस और जेचोस्लोवेकिया की सन्धि—१६२४ में दोनों देशों ने एक दूसरे की सहायता का वचन दिया।

(७) फ्रांस और सोविएट रूस की सन्धि—मई १६३५ में यह प्रयत्न किया गया कि लोकार्नो की संधि (पश्चिमी लोकार्नो) की तरह पूर्व में भी जर्मनी की सीमाएँ बांध दीं जाय, जिन्हें वह उल्लंघन न कर सके। परन्तु ये संधि न हो सकी। तब फ्रांस और रूस ने सुलह कर ली कि यदि कोई राष्ट्र उन पर हमला करेगा तो दोनों एक दूसरे की सहायता करेंगे। इस संधि का जर्मनी और इटली की तरफ से बहुत विरोध हुआ है और इङ्गलैण्ड ने भी इसे बहुत पसन्द नहीं किया।

(८) बालकन 'एनटेण्टे'—१६३४ में ग्रीस, रूमानिया, टर्की और यूगोस्लाविया ने आपस में एक दूसरे की सीमा का उल्लंघन न करने का वचन दिया।

(९) इटली जर्मनी का समझौता—अक्तूबर १६३६ में हुआ कि यूरोपीय मामलों में वे आपस में एक दूसरे की सलाह लेकर

कोई काम किया करेंगे और कम्युनिज्म के विरुद्ध हर मुमकिन ज़रिया इस्तेमाल करेंगे। स्पेन की वर्तमान सीमाओं और उसके उपनिवेशों की हिफाज़त करेंगे (जर्मनी नहीं चाहता कि इटली स्पेन के किसी प्रदेश पर अधिकार करले - क्योंकि उसके भी कुछ स्वार्थ वहां पैदा हो गये हैं।) डेन्यूब प्रदेश में दोनों राष्ट्र एक दूसरे के सलाह मशविरे से चलेंगे और आस्ट्रिया जर्मनी की १९३६ की संधि का पालन किया जायगा। जर्मनी ने बाद में इटली की राय लेकर आस्ट्रिया पर अधिकार किया।

(१०) बर्लिन-टोकियो सन्धि—नवम्बर १९३६ में जर्मनी और जापान में संधि हुई कि वे कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की हलचलों का विरोध करेंगे। बाद में इटली भी शामिल हो गया। वस्तुतः यह रूस के विरोध में फासिस्ट ताकतों की गुटबंदी है।

(११) एंग्लो इटैलियन समझौता—अप्रैल १६, १९३८ को यह सधि हुई। जिसमें इटली ने घोषणा कि स्पेन में न वह किसी प्रदेश पर अधिकार करेगा न वहां राजनीतिक या आर्थिक विशेषाधिकार प्राप्त करेगा, बलारियक द्वीप पर अपना प्रभुत्व बढ़ाने की उसकी नीयत नहीं। इटली स्पेन में अपनी सेना नहीं रखेगा। इङ्गलैण्ड राष्ट्रसंघ में अबीसीनिया पर इटली के प्रभुत्व को मनवाने की चेष्टा करेगा। भूमध्य सागर में दोनों देश पूर्वस्थित को स्थापित रखेंगे। इटली लिबिया में अपनी सेना आधी कर देगा। दोनों देश एक दूसरे के विरुद्ध अखबारों में आन्दोलन बन्द कर देंगे। इटली

अरब में दखल न देगा और टाना झील (जहां से नील नदी निकलती है) के पानी के बहाव में कोई तबदीली न करेगा।

(६)

अन्तर्राष्ट्रीय "मज़दूर कार्यालय"

(International Labour Office)

वार्साई की सन्धि के अनुसार जेनेवा में एक "अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर कार्यालय" स्थापित किया गया। इसका राष्ट्रसंघ से सम्बन्ध है, परन्तु उससे सर्वथा स्वाधीन है। हर साल जेनेवा में "मज़दूर कांफ्रेंस" होती है। इस कांफ्रेंस में हर राष्ट्र की सरकार अपने चार प्रतिनिधि भेजती है। इन में दो तो सरकार के प्रतिनिधि होते हैं, और दो मालिक और मज़दूरों के। प्रतिनिधियों के साथ दो सलाहकार जा सकते हैं। जब स्त्रियों के सम्बन्ध में कोई प्रश्न कांफ्रेंस में पेश हो तो दो सलाहकारों में से एक स्त्री का होना आवश्यक है।

इस कार्यालय की ओर से व्यावसायिक क्षेत्रों की उपयोगी तहकीकात हुई है, और कार्यालय ने इस विषय पर उपयोगी जानकारी एकत्र की है।

मजदूरों का अधिकार-पत्र (Charter)

वार्साई की सन्धि में अन्तर्राष्ट्रीय "मज़दूर कार्यालय" के लिये नीति निर्देश करते हुए मजदूरों के कुछ अधिकारों की घोषणा भी की गई थी।

१—मज़दूरों के सम्बन्ध में कानून बनाते हुए इस आधारभूत सिद्धान्त को सम्मुख रखा जाय कि मज़दूर और उनकी मेहनत बाज़ार में बिक्री या व्यापार की वस्तु नहीं, उसके मानवीय पहलू को सन्मुख रक्खा जाय।

२—नौकर और मालिक दोनों के अपने आप को संगठित करने और सभाएं करने के अधिकार को स्वीकृत किया जाय।

३—मज़दूरी इतनी हो कि मज़दूर अपने देश के एक आम स्टैण्डर्ड के अनुसार जीवन निर्वाह करने के योग्य हो सकें।

४—आठ घंटे का दिन या ४८ घंटे का सप्ताह आदर्श माना जाय। जिसे प्राप्त करने का शीघ्रातिशीघ्र प्रयत्न किया जावे।

५—हफ़्ते के बाद कम से कम ४ घंटे का आराम दिया जावे और जहाँ तक सम्भव हो यह आराम का दिन रविवार हो।

६—बच्चों को मेहनत पर न लगाया जावे, और युवकों को काम पर लगाते वक्त ऐसी कानूनी पाबन्दियाँ लगादी जावे ताकि उनकी शिक्षा और शारीरिक उन्नति के मार्ग में रुकावट न खड़ी की जा सकें।

७—एक ही कार्य के लिये पुरुष और स्त्री कार्यकर्ता को एक समान वेतन मिले।

८—कानून ऐसे बनाये जावें जिन से देश में सब मज़दूरों के साथ एक-सा बर्ताव हो।

९ बेकारों की रक्षा और सहायता के लिये कानून और नियम बनाये जावें। प्रत्येक राष्ट्र निरीक्षक नियुक्त करे जो देखे कि

इन कानूनों का कहाँ तक पालन होता है। स्त्री निरीक्षक भी अवश्य रखी जावे।

(१०)

कम्युनिस्ट "इन्टर्नैशनल"

सन् १८६४ में कार्लमार्क्स और फ्रेडरिक ऐंजेल्स ने 'अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ" (International Working men's Association) के नाम से संसार भर के श्रमियों की एक संस्था स्थापित की। इसका उद्देश्य संसार भर के श्रमिकों को इकट्ठा करना और मार्क्स का प्रचार करना था। मार्क्स का उपदेश था, "संसार भर के मज़दूरो ! संगठित हो जाओ, और सरमायादारी की जंजीरों को उतार फैंको !" मार्क्स का स्थापित किया हुआ संघ "प्रथम इंटर्नैशनल" (First International) के नाम से विख्यात है। परन्तु यह संघ १८७६ में फ़िलेडलफिया में भंग हो गया। १८८६ में "द्वितीय इंटर्नैशनल" (Second International) बना। पेरिस में फ्रांस की इतिहास प्रसिद्ध राज्य क्रान्ति की शताब्दि मनायी जा रही थी। दूर देशों से इस उत्सव में भाग लेने के लिये प्रतिनिधि आये थे। उन्होंने मिलकर इसकी स्थापना की। सन् १९१४ में जब महायुद्ध छिड़ा तो इसके कार्यकर्ताओं में 'संसार के मज़दूरों का महायुद्ध के प्रति क्या रुख़ हो' इस विषय पर तीव्र मतभेद पैदा हो गया। १९२१ में वियेना में इस "इंटर्नैशनल' का पुनरुद्धार किया गया। इसे "ढाई इंटर्नैशनल" (Two-and a half International) का नाम दिया गया। इसमें

सम्पूर्ण राष्ट्रों के ट्रेड यूनियन आन्दोलन के नेता तथा नर्मदल या 'दक्षिण पक्ष' के सोशलिस्ट एकत्र हुए थे। इसका केन्द्र लंदन बना। कम्युनिस्ट इसे 'सुधारवादियों की इंटर्नैशनल' कहते हैं।

उधर रूस की क्रान्ति के बाद सन् १६१६ में लगभग एक दर्जन देशों के प्रतिनिधियों ने मास्को में एकत्र हो कर 'तृतीय संघ' (Third International) की स्थापना कर दी। इसे कम्युनिस्ट "इंटर्नैशनल" या इसी नाम को संक्षेप करके "कोमिन्टर्न" भी कहते हैं। इसका उद्देश्य संसार में मार्क्स और लेनिन के कम्युनिस्ट सिद्धान्तों का प्रचार और द्वितीय इंटरनैशनल की प्रवृत्तियों का विरोध करना है। यह संसार भर के श्रमियों को रूस की श्रमियों की सरकार की हिमायत करने तथा अपने अपने देश में भी उसी प्रकार की क्रान्ति करने के लिये उत्साहित करती है।

ट्राट्ज़की दल के कम्युनिस्ट अब एक 'चौथी इंटर्नैशनल' भी बना रहे हैं। इसे "ग्रीन इंटर्नैशनल" भी कहते हैं क्योंकि इसमें पूर्वीय और मध्य यूरोप के किसान ज्यादा सम्मिलित हैं। यह फासिज्म और रूस के वर्तमान शासन दोनों के विरुद्ध हैं। इसका कहना है कि रूस के वर्तमान शासक उस देश को मार्क्सवाद से दूर ले जा रहे हैं।

चौथा अध्याय

उपज, खनिज द्रव्य और व्यवसाय

(१)

कृषिजन्य पदार्थ

भूमितल और भिन्न-भिन्न प्रदेशों की जलवायु की विभिन्नताओं का ऊपर वर्णन किया जा चुका है। इन विभिन्नताओं के कारण भिन्न-भिन्न प्रदेशों में भिन्न प्रकार की उपज होती है। पृथ्वी पर होने वाली मुख्य-मुख्य फ़सलों का आगे वर्णन किया जाता है।

गेहूं—इस के लिये प्रारम्भ में ठण्ड और नमी, फिर शीत और पकते समय गर्मी और खुश्की आवश्यक है। इसकी खेती संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, फ्राँस, भारतवर्ष, केनेडा, आस्ट्रेलिय, अर्जेन्टाइन तथा हंगरी में अत्यधिक होती है। मंचू-

रिया तथा साइबेरिया में गेहूँ की खेती बहुत बढ़ायी जा सकती है और इसके लिये प्रयत्न किये जा रहे हैं।

पिछले वर्षों में गेहूं की उपज कहां कितनी हुई है, यह नीचे की तालिका से प्रकट होगा।

दुनियाँ में गेहूं की उपज

(हज़ार बुशलों में)

नाम देश	१९३७ ००० बुशल	१९३१-३५ की औसत ००० बुशल
यूरोप	१३,७७,४७५	१३,८०,४३८
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	२,००,००७	१,७३,१३९
केनेडा	१,८२,५०५	३,४६,८७९
अर्जेन्टाइन	१,९१ ९८३	२,२५,७९९
आस्ट्रेलिया	१,६१,९५४	१,७१,८९८
सोविएट रूस १९३४	३०,४१,००० (मीटरिक टन)	
कुल दुनियां	३५,४९,०१६	३४,९६,६३०

दुनियां में इस समय संयुक्तराष्ट्र अमेरिका, केनेडा, अर्जेन्टाइन और आस्ट्रेलिया सब से अधिक गेहूँ का निर्यात करते हैं। १९३७ में दुनियाँ भर में कुल २५१० लाख एकड़ ज़मीन पर गेहूँ की खेती हुई।

गेहूँ की मांग सब से अधिक यूरोप में है। जापान गेहूँ की उपज निरन्तर बढ़ा रहा है। १६३२-३७ के दर्मियान उसने अपनी गेहूँ की पैदावार ६० फ़ी सदी बढ़ा ली है और अब वह इसके लिये किसी का मुहताज नहीं रहा।

जौ—यह प्रायः शराब बनाने के काम आता है। इस की अधिक खेती रूस, जर्मनी, संयुक्त प्रान्त, अमेरिका आस्ट्रिया, हंगरी और हिन्दुस्तान में होती है। संसार में प्रतिवर्ष लगभग १८२ करोड़ बुशल जौ उत्पन्न होता है।

मक्का—अफ़रीका में लोगों का निर्वाह अधिकांश इसी पर है। संयुक्त राष्ट्र, रोमानिया, आस्ट्रिया, हंगरी, हिन्दुस्तान तथा दक्षिणी अमेरिका में होता है।

चावल पृथ्वी के अधिकाँश मनुष्यों का निर्वाह चावल पर है। इसे बहुत गर्मी और जल की आवश्यकता है। इसका पौधा कई दिन पानी में डूबा रहता है इस लिये उन प्रान्तों में जहां बहुत पानी जमा रहता है या दलदलें हैं चावल बहुत हो सकता है। इसकी खेती भारतवर्ष, लंका, कोचीन, चीन, स्याम, जापान और दक्षिणी कैरोलीना में बहुत होती है। चावल खाने के काम आता है। यूरोप के लोग इसका निशास्ता बना कर व्यावसायिक पदार्थों में उपयोग करते हैं।

चाय—चाय एक प्रकार की झाड़ी की पत्तियां होती

हैं। पर्वत की ढलानों पर बहुत होती है। इस की खेती आसाम, सीलोन, चीन, जापान, सुमात्रा और नेटाल में बहुत होती है। कलकत्ता, कोलम्बो, शंघाई, डरबन इसके निकास के बड़े बंदरगाह हैं।

सन १९२९-३२ में चाय की कीमत एक दम गिर गई थी, और संसार में चाय के बड़े ढेर जमा पड़े थे। इस लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौता करके इनकी उपज कम कर दी गई। इस समझौते में सिर्फ़, हिन्दोस्तान, सीलोन और डच इंडीज़ सम्मिलित हुए और इन्होंने अपनी उपज कम करली। परन्तु जापान, फ़ार्मोसा इंडो चाइना (फ्रेंच) केनिया वग़ैरा देश इस में सम्मिलित नहीं हुए। इन्होंने अपनी उपज बढ़ा ली। १९३६-३७ में संसार भर में ८३ करोड़ १३ लाख पौंड चाय उत्पन्न हुई।

संसार में चाय की पैदावार

(वज़न—लाख पौंडों में)

वे देश जो समझौते में शामिल हुए हैं।	१९३२-३३	१९३४-३५	१९३६-३७
हिन्दुस्तान	३८११	३३७९	३०५१
सिलोन	२५८८	२२०२	२०६३
डच इण्डीज़	१८६६	१४५२	१४७८
जोड़	८२६५	७०३३	६५९२
वे देश जो समझौते में शामिल नहीं हुए।			
चीन	९१४	१०२१	९०३
जापान	२७८	२८९	३८९
फ़ारमोसा	१५९	२२०	२२०
अन्य	३०	३७	८६
जोड़	१४००	१६४७	१६२१
संसार का कुल जोड़	९६६५	८६८०	८३१३

गन्ना—यह गर्म मुल्कों का पौधा है। भूमि में नमक और चूना हो तो बहुत अच्छा है। पानी काफ़ी लेता है। हिन्दुस्तान, क्यूबा, जावा, संयुक्तराष्ट्र अमेरिका, मारीशस, नैटाल,

क्वीन्सलैण्ड, ब्रिटिश गायना और फ़ार्मोसा में इसकी खेती होती है।

चुकन्दर—ठंडी जलवायु की आवश्यकता है। जर्मनी, आस्ट्रिया, हंगरी, रूस फ्रांस और बेलजियम में होता है।

गन्ने और चुकन्दर के रस से खांड बनती है।

खांड—१९३७ में दुनिया में कुल खांड २ करोड़ ९६ लाख टन तैय्यार हुई जिस में से १ करोड़ ८८ लाख टन गन्ने की और शेष चुकुन्दर आदि की थी। आज से दस वर्ष पूर्व इङ्गलैण्ड में खांड नहीं उत्पन्न होती थी। उस समय वहां परीक्षण के तौर पर चुकुन्दर बोया गया। आज इङ्गलैण्ड अपनी खांड की आवश्यकता खुद पूरी कर लेता है। आयर्लैण्ड और जापान ने भी चुकन्दर की खेती दुगुनी करली है। रूस, जर्मनी, फ्रांस और अमेरिका भी चुकुन्दर की खांड तैयार करते हैं। हिन्दुस्तान गन्ने की खांड सब से अधिक उत्पन्न करता है।

कहवा—कोलम्बिआ, जावा वेनीजुला, भारतवर्ष, ब्राज़ील तथा लंका में बोया जाता है। ब्राज़ील में सब से अधिक होता है।

कपास—यह गर्म और समशीतोष्ण प्रदेशों की उपज है। काली चिकनी मिट्टी में बहुत फलती फूलती है। इसकी खेती संयुक्तराज्य अमेरिका, हिन्दुस्तान, मिस्र, ब्राजील और चीन में होती है। नाइजेरिया, युगांडा और कोन्सलैंड में भी अब इसकी

खेती होने लगी है। सूडान में मैकार स्थान पर नील नदी पर एक बहुत बड़ा बांध तैयार किया गया है। इस प्रदेश में कपास की खेती बहुत बढ़ जायगी। १६३७ में संसार में कुल ३८० लाख गाँठे कपास की पैदावार हुई (१ गांठ = ४७८ पौंड) और ३१० लाख गाँठ कपास उपयोग में आई।

कपास की उत्पत्ति

(गाँठों में-प्रति गाँठ — ४७८ पौंड)

	११३६—३७	१६३७-३८
संयुक्तराष्ट्र अमेरिका	१,२३,६६.०००	१८७,४६,०००
हिन्दुस्तान	४४,६७,०००	४५,४७ ०००
रूस	३५,४१,०००	३४,८२,०००
मिसर	१८,८७,०००	२२,८२,०००
चीन	३६,१४,०००	३२,२५,०००
उत्तरी ब्राज़ील	६,४०,०००	८,६८,०००
मैक्सिको	३,५६.०००	३,२६,०००
दक्षिणी ब्राज़ील	१२,०१,०००	
अर्जेन्टाइन	१,४३,७६०	

रबड़—भूमध्यरेखा पर स्थित प्रदेशों में एक वृक्ष के रस से प्राप्त होता है। कांगो तथा अमेज़न नदी की घाटियों, मलाया, ईस्ट इंडीज़, आसाम, ब्रह्मा और लंका में बहुत होता है। पिछले

वर्षों में इसकी पैदावार बहुत बढ़ गई है। सन् १९१० में कुल संसार में ११,००० टन और १९३७ में ११,३४,१९८ टन रबड़ पैदा हुआ। कुल संसार की उत्पत्ति का ८० प्रतिशतक मलाया और ईस्ट इंडीज़ में पैदा होता है। पिछले दिनों रबड़ का उपयोग बहुत बढ़ जाने से उत्पत्ति बढ़ गई है। सन् १९३७ में १०,९२,०७८ टन रबड़ इस्तेमाल में आया जिसका ८० फ़ी सदी केवल मोटर के व्यवसाय में खर्च हुआ। पैकटों पर लपेटने, बोतलों के कार्क बनाने बरसाती टोपियाँ, छाते और मशीनों मे रबड़ का उपयोग होता है। बड़ी मशीनों का ज़ोर कम करने के लिये अब उन्हें रबड़ के खंबों पर रखने की रीति चल पड़ी है। गद्दों में स्प्रिगों के स्थान पर भी रबड़ का उपयोग होने लगा है।

शहतूत—शहतूत का महत्व रेशम के कीड़ों को पालने के लिये है। चीन, जापान, इटली, फ्राँस, टर्की, ईरान, काश्मीर, बङ्गाल और ब्रह्मा में शहतूत बहुत होता है, और इसलिये इन्हीं प्रदेशों में रेशम भी बहुत होता है। आजकल नकली रेशम का रिवाज चल पड़ा है, फिर भी असली रेशम का महत्व कम नहीं हुआ।

अलसी—इसके बीजों से तेल निकलता है, और इसके रेशे से रस्सियाँ बनाई जाती हैं। रेशे से कपड़ा भी बनता है। हिन्दुस्तान, रूस, आयरलैंड और बेलजियम में बहुत होती है।

फल और मेवे—जब से जहाजों में सर्दखानों (Cold Storage) का रिवाज हो गया है, फलों का व्यापार बहुत बढ़ गया है। काश्मीर, केनाडा, संयुक्तराष्ट्र, अमेरिका, तस्मानिया और दक्षिणी अमेरिका में सेव बहुत होता है। स्पेन, एज़ोर्स कनारी द्वीप समूह, जाफ़ा (फ़िलस्तीन) में संतरा बहुत होता है। भारतवर्ष में नागपुर के संतरे प्रसिद्ध हैं। पञ्जाब में पठानकोट का संतरा अच्छा होता है परन्तु यह सब अभी विदेशों में नहीं जाता केले के लिये गर्म और सीली जलवायु चाहिये। ईस्ट इंडीज़, वेस्ट इन्डीज़, पश्चिमी अफ्रीका, और दक्षिणी भारत में केला बहुत उत्पन्न होता है। आम भारतवर्ष का फल है। अफ्री॰ा में भी आम होता है।

मछली—ठण्डे पानी में अच्छी मछलियां रहती हैं। न्यूफ़ाउण्डलैंड, फ्रेज़र नदी (अमरीका) नार्वे के तट, जापान का उत्तरी द्वीपसमूह, मछलियों के लिये विशेष प्रसिद्ध हैं। दुनियाँ में हर साल ३५ अरब पौंड मछली पकड़ी जाती है जिसकी कीमत लगभग एक अरब डालर होगी। जापान सब से अधिक मछली पकड़ता है। इसके बाद संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का नम्बर है। इसके बाद रूस। ह्वेल मछली सब से अधिक भारी होती है।

पशु और माँस—पशु यों तो सर्वत्र पाले जाते हैं, परन्तु जहाँ घास के खुले मैदान हों और जलवायु खुश्क हो वहां पशु अधिक होते हैं। गाय भैंस भेड़ बकरी ये दूध पनीर और

मांस के लिये पाले जाते हैं। एल्प्स पहाड़ की तराई, न्यूज़ीलैण्ड, संयुक्तराज्य अमेरिका, अर्जेन्टाइन, दक्षिणी केनाडा और डेनमार्क में पशु अधिक पाले जाते हैं और बाहर भेजे जाते हैं। हिन्दुस्तान में भी पशु पाले जाते हैं, पर यहां के पशु अब अन्य देशों के मुकाबले में बहुत घटिया क़िस्म के रह गये हैं। ग्रेट ब्रिटेन में प्रतिवर्ष ३० लाख बछड़े पैदा होते हैं। इनमें से एक तिहाई मांस के लिये मार दिये जाते हैं, १५ लाख खूब मोटे करके बड़े होने पर मांस के लिये मारे जाते हैं। ५ लाख के करीब आयर्लैंड से मंगाये जाते हैं। इन्हें मिलाकर १० लाख दूध और मक्खन के लिये पाले जाते हैं। दुधारे पशु नहीं मारे जाते, क्योंकि दूध की कीमत मांस से दुगनी के करीब उठती है। दुनिया में गाय के मांस का सब से बड़ा ग्राहक इङ्गलैण्ड है। सन् १९३७ में इंग्लैण्ड में सिर्फ़ गाय का मांस १३३ लाख हंड्रेडवेट बाहर से आया। दुनिया की कुल उत्पत्ति का ९५ फ़ी सदी भेड़ का मांस भी इङ्गलैण्ड ही खाता है। न्यूज़ीलैंड, आस्ट्रेलिया और अर्जेंटाइन दुनिया में सब से अधिक मांस पैदा करते हैं। इसी लिये चमड़ा भी यहीं से ज्यादा आता है।

१८. ऊन—ऊन भेड़ों से प्राप्त होती है। भेड़ों के लिये समशीतोष्ण जल वायु चाहिये। गर्म प्रदेशों में भेड़ों पर ऊन नहीं होता, साधारण बाल होते हैं। सर्द मुल्कों की भेड़ों पर बहुत सुन्दर ऊन और पशम होते हैं। आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड, दक्षिण अफ्रीका, अर्जेन्टाइन और हिन्दुस्तान में ऊन बहुत होती है। जर्मनी, रूस

और अमेरिका की ऊन अच्छे किस्म की होती है । कश्मीर और तिब्बत की पशम प्रसिद्ध है ।

जर्मनी और इटली अपने देश की ऊन की आवश्यकता अपने यहीं से पूरी कर लेने की फ़िकर में हैं। जर्मनी, जापान और इटली में भेड़ें पालने के अलावा कृत्रिम ऊन बनाने की चेष्टा की जा रही है। इटली दूध से " लेनिटल " एक प्रकार की ऊन, बनाता है, और जर्मनी, जापान, इङ्गलैण्ड और अमेरिका एक प्रकार के लकड़ी के गुद्दे से। परन्तु यह कृत्रिम ऊन न तो वैसी गर्म होती है, और न फैल सकती है—बल्कि धुल कर सिकुड़ जाती है। फिर भी ये देश अपने आपको आत्म निर्भर बनाने की चेष्टा में हैं।

(२)

खनिज द्रव्य

पुराने ज़माने में चांदी, सोना और हीरे जवाहरात खनिज द्रव्यों में सबसे अधिक कीमती थे। कीमत तो आज भी इनकी ज्यादा है, पर आज दुनिया एक हीरे की खान की अपेक्षा कोयले और लोहे की खान को अधिक उपयोगी समझती है। आज की औद्योगिक सभ्यता का आधार इन दो धातुओं पर है, और इसलिये कोयले और लोहे के क्षेत्र आजकल सभ्यता और सम्पत्ति के क्षेत्र बन गये हैं। कारण यह है कि आजकल के सभी व्यवसाय कोयले और लोहे पर आश्रित हैं। कोयले और लोहे के बाद मिट्टी के तेल और पेट्रोल की बारी आती है। मिट्टी के तेल का

महत्व कोयले के समान ही हो गया है। इनके बाद अन्य खनिज द्रव्यों की बारी आती है।

(१) कोयला—संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, बेल्जियम, रूस, भारतवर्ष, केनेडा, दक्षिणी अफ्रीका और जापान में कोयला बहुत होता है। चीन में कोयला बहुत है, पर निकाला कम जाता है। इंग्लैण्ड में बहुत बढ़िया कोयला निकलता है। संसार में लगभग १२५ करोड़ टन कोयला हर साल निकाला जाता है। १६३६ में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में ६३ करोड़ टन, ग्रेट ब्रिटेन में २२ करोड़ टन, जर्मनी में ३ करोड़ टन, सोविएट रूस में १२ करोड़ टन और हिन्दुस्तान में २ करोड़ ३० लाख टन कोयला निकला। संसार में ६ लाख वर्गमील कोयले के क्षेत्र हैं।

संसार में कोयले की उत्पत्ति

दुनिया में ६,०५,००० वर्गमील कोयले के क्षेत्र हैं। या स्थल भूमि का $\frac{1}{110}$ है।

(२) लोहा—संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, रूस, और जापान में लोहा बहुत होता है। स्वीडन, स्पेन, बिहार और मैसूर में लोहे की कच्ची धात बहुत होती है। लोहे की कच्ची धातु की पैदावार में ब्रिटिश साम्राज्य में भारतवर्ष का दूसरा नम्बर है।

समार में लोहे और ईस्पात की पैदावार

(हज़ार टनों में) १९३७ का वर्ष

नाम देश	कच्ची धात	इस्पात
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	३७,५२७	५१.७१०
ग्रेट ब्रिटेन	८६३७	१३,५०८
जर्मनी	१५,८०३	१६.५०७
फ्रांस	७,६४८	७,६००
वेलजियम	३,८८५	३,६२०
सोविएट रूस	१४,६००	१७,७००
जापान	३,३००	५,७००
हिन्दुस्तान	२,३००	
कुल संसार (अन्य देशों को सम्मिलित करके)	१,०४,०७३	१,३५,११२

३—मिट्टी का तेल—संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, बाकू, कैनेडा, ब्रह्मा, सुमात्रा, आस्ट्रिया, ईरान और पञ्जाब (अटक ज़िला) में निकलता है। तेल को साफ़ करके उससे मोटरों, हवाई जहाज़ों और इञ्जिनों के लिए पेट्रोल तैयार करते हैं। इसी में

से मोमबत्ती बनाने के लिए पैराफ़ीन निकलता है। मिट्टी का तेल और भी बहुत कामों में आता है।

१९३७ में संसार में कुल मिला कर २८ करोड़ टन मिट्टी का तेल निकला। जिसमें से संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में १७ करोड़ टन, सोविएट रूस में २ करोड़ ८० लाख टन, वेनीजुला २ करोड़ ७० लाख टन, ईरान एक करोड़ टन, मैक्सिको ६६ लाख, ईराक ४१ लाख, ट्रिनिडाड २२ लाख और हिन्दुस्तान ने १३ लाख टन मिट्टी का तेल पैदा किया।

४—बहुमूल्य धातुएँ—सोना ट्रांसवाल, संयुक्त राष्ट्र, आस्ट्रेलिया, रूस, केनाडा, भारतवर्ष और अन्यान्य देशों में पाया जाता है। सन् १९३७ में कुल सोना साढ़े तीन करोड़ औंस (शुद्ध) निकला था जिसमें से दक्षिणी अफ्रीका से १ करोड़ १७ लाख औंस, सोविएट यूनियन ६० लाख औंस, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ४० लाख केनेडा ४० लाख आस्ट्रेलिया १३ लाख औंस और हिन्दुस्तान से ३ लाख औंस निकला। ब्रिटिश साम्राज्य में कुल दुनिया का ५५.५ फ़ीसदी सोना निकलता है। सन् १९३७ में यहां १ करोड़ ९६ लाख औंस निकला।

चांदी प्रायः मैक्सिको, अमेरिका, बोलिविया, चिली, पीरू और जर्मनी में मिलती है। हीरे ब्राज़ील और किम्बर्ले में पाये जाते हैं।

५—तांबा—१९३७ में संसार में कुल २१ लाख टन (मीट्रिक) तांबा निकाला गया। १९३६ में केवल १६ लाख टन

निकाला गया था। एक साल में यह २६ फ़ीसदी की वृद्धि युद्ध की सम्भावना और उसके कारण शस्त्रास्त्रों की होड़ की वजह से हुई। शस्त्रास्त्रों में तांबे की आवश्यकता रहती है। १६३६ में भिन्न भिन्न देशों में तांबे की उत्पत्ति इस प्रकार थी—संयुक्तराष्ट्र अमेरिका ५॥ लाख टन, चिली २॥ लाख, केनेडा १ लाख ८६ हज़ार, रूस ८३ हज़ार टन। इन देशों के अतिरिक्त जापान, चीन, जर्मनी में भी ताँबा निकलता है।

८—रेडियम—यह सब से बहुमूल्य और कम उपलब्ध होने वाला धातु है। पहले ज़ेचोस्लोवेकिया, संयुक्तराष्ट्र अमेरिका, आस्ट्रेलिया और पुर्तगाल में ही होता था और इसकी कीमत एक ग्राम की २० हज़ार पौंड थी। बाद में बेल्जियम कांगो में बहुत सा रेडियम निकला और कीमत गिर कर १४ हज़ार पौंड होगई। हाल ही में केनेडामें रेडियम की बहुत बड़ी खानें निकली हैं और अब इसका मूल्य केवल ८ हज़ार पौंड फ़ी ग्राम रह गया है।

इन धातुओं के अतिरिक्त अन्यान्य धातुएं और रासायनिक द्रव्य भी व्यावसायिक दृष्टि से बहुत उपयोगी हैं।

(३)

उद्योग व्यवसाय

यह युग उद्योग व्यवसाय का युग है, और यह सभ्यता व्यावसायिक युग की सभ्यता है। आज इस व्यवसाय युग में मनुष्य की ज़िन्दगी और रहन सहन बिलकुल ही बदल गये हैं।

मनुष्य के वैयक्तिक, पारिवारिक और सामाजिक जीवन में आज के उद्योग व्यवसायों ने एक क्रांति उत्पन्न कर दी है। बहुत से समाज शास्त्रियों का यह विचार है कि मनुष्य का रहन सहन, उसका सामाजिक जीवन; उसके सामाजिक, राजनीतिक और अध्यात्मिक विचार तथा नैतिक जीवन के आदर्श और स्टेंडर्ड बनाने में उन साधनों और तरीकों का बड़ा हाथ होता है, जिन के ज़रिये वह अपना जीवन निर्वाह या पेट का पालन करता है। इस विचार की सत्यता की सब से अधिक पुष्टि इस व्यवसाय युग से हुई है जिसने प्राचीन और मध्ययुग के रहन सहन और जीवन के आदर्श एकदम बदल दिये हैं। इस युग की औद्योगिक क्रांति मनुष्य के अब तक के इतिहास की सब से बड़ी क्रांति है।

यह क्रांति कैसे आई, इसका इतिहास बहुत लम्बा है किन्तु हम देखते हैं कि आजकल के व्यावसायिक और औद्योगिक केन्द्रों में ही आज की सभ्यता भी केन्द्रित है। यह व्यावसायिक और औद्योगिक केन्द्र कहां कहां हैं ?

उद्योग धन्धों के केन्द्र वह प्रदेश बने हैं, जहां प्रकृति ने कोयले और लोहे के भण्डार भर रखे हैं।

इंग्लैंड आज एक अत्यन्त विस्तृत साम्राज्य का मालिक है। उस का यह महत्व उस के कोयले और लोहे की खानों की वजह से है। इंग्लैण्ड में कोयले और लोहे के बड़े बड़े क्षेत्र हैं और उन्हीं के आसपास कई प्रकार के उद्योग व्यवसाय भी

होने लगे हैं। नार्थम्बरलैंड में जहाज़ और नदियों के पुल बनते हैं। यार्कशायर, लंकाशायर, लिवरपूल और मांचेस्टर कपड़े के व्यवसाय के बहुत बड़े केन्द्र हैं। यही केन्द्र संसार को सब से अधिक तन ढकने का सामान देते हैं। मांचेस्टर में रेल की पटरियां और रेलगाड़ियां बनती हैं। बरमिंघम में सुइयां, निब, पिन, बाइसिकलें, लोहे के हथियार, बन्दूक, मशीन और मोटर कारें बनती हैं। बरमिंघम के आस पास के देश को कृष्ण भूमि (Black Country) कहते हैं क्योंकि यहां के कारखाने हरवक्त चिमनियों से धुआं उगलते हैं। और यहां इतनी खानें खोदी गई हैं कि स्थान स्थान पर भूमि में गढ़े तथा कोयले व लोहे के ढेर पड़े हैं।

यूरोप में सब से प्रसिद्ध कोयले का मैदान फ्रांस के उत्तर पूर्व से आरम्भ होकर आर्डेन पर्वत की उत्तरी ढलानों के साथ बेल्जियम होता हुआ जर्मन को रूहर नदी की घाटी में पहुँचता है। इस क्षेत्र में जगत्प्रसिद्ध कारखाने स्थापित हैं। जहां तहां ऊनी और सूती कपड़े के कारखाने हैं। रेमज़, रूबे, टूर्स, केइन और लिल में हर तरह के कपड़े बुने जाते हैं। लिल के समीप अलसी की खेती होने के कारण यहां कतान बुनने के भी कारखाने हैं। फ्रांस के दक्षिण में सेंट इटीन तथा केरियाज़ोट में मोटरकार, मशीनें, शस्त्रास्त्र, रेशम के फ़ीते बनते हैं। लीओन रेशमी कपड़े के लिये संसार प्रसिद्ध है। बेलजियम में कोयले और लोहे के अतिरिक्त जस्त और सीसा भी मिलता

है। यहां इञ्जन, रेल की पटरी, मशीनें, तोपें और बन्दूकें बनती हैं। ये सब पदार्थ ऐंटवर्प के बन्दरगाह से बाहर जाते हैं। जर्मनी में वेस्टफ़ालिया या रूहर की घाटी में प्रसिद्ध कोयले के मैदान हैं। युद्ध के बाद ये प्रदेश जर्मनी से कुछ अर्से के लिये फ्रांस और बेल्जियम ने अपने अधिकार में कर लिये थे। इस क्षेत्र में एसन (Essen) स्थान पर तोपें और युद्ध सामग्री बनाने का बहुत बड़ाकारखाना है। बारमन और एलबरफ़ील्ड सूती कपड़े और क्रेफेल्श रेशमी वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध है। जर्मनी के सैक्सनी प्रान्त में भी कोयले के मैदान हैं। यहां कपड़े और खांड के कारखाने हैं। मेसन में चीनी मिट्टी के बर्तन बनते हैं। साइलीशिया के कोयले के क्षेत्र भी बहुत प्रसिद्ध हैं। ब्रेसला में ऊनी वस्त्रों के कारख़ाने हैं। युद्ध के बाद इस स्थान पर जनमत लिया गया था, और बावजूद जनता की राय जर्मनी के पक्ष में होने के यह प्रदेश पोलैण्ड को दे दिया गया, क्योंकि फ्रांस और उस के मित्र राष्ट्र जर्मनी को कोयले के क्षेत्रों से वंचित करना चाहते थे।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में कोयला ओहियो नदी की घाटी में पैन्सिल्वेनिया राज्य में मिलता है। यहां पिट्सबर्ग में लोहा और फौलाद बनाने का दुनिया में सबसे बड़ा कारखाना स्थापित है। यहां बड़ी बड़ी कलें, रेल की पटरियां, नदियों के पुल, रेल के इंजन तथा हर तरह की लोहे की वस्तुएं बनती हैं। पिट्सबर्ग के समीप प्राकृतिक गैस मिलती है, जो प्रकाश के काम आती है। डीट्राय (Detroit) में फ़ोर्ड का जगत्प्रसिद्ध मोटरों का कार-

खाना है। एपेलेचियन पर्वत के दक्षिण में भी कोयले के मैदान हैं यहां भी कल कारखाने हैं। न्यू इंग्लैण्ड में जलप्रपातों की शक्ति से कपड़े, कागज़ और चमड़े के कारखाने चल रहे हैं। बिजली का आविष्कार हो जाने से जल-प्रपात कोयले का स्थान ले रहे हैं। इटली, स्विट्ज़रलैण्ड और नार्वे के बड़े बड़े कारखाने इसी शक्ति से चल रहे हैं।

जापान भी कोयले और लोहे की अधिकता के कारण एक प्रथम श्रेणी का व्यावसायिक देश बन सका है।

उपर्युक्त व्यवसाय क्षेत्रों में अधिकांश देश कच्चा माल बाहर से मंगाते हैं। इंग्लैण्ड अपने वस्त्र व्यवसाय के लिये कपास अधिकतर अमरीका से मंगाता है। जापान अब तक भारतवर्ष से बहुत कपास खरीदता था, पर अब वह स्वावलम्बी बनना चाहता है। जिन देशों को प्रकृति ने ऐसी सुविधा नहीं दी और वे बाह्य देशों पर निर्भर भी नहीं चाहते, वे निरन्तर नये नये कृत्रिम मसाले ढूँढ़ रहे हैं। नकली रेशम इस दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। यह इटली, फ्रांस और जापान में बहुत तैयार किया जाता है। यह रेशम इतना गर्म और मज़बूत नहीं होता, परन्तु धीरे धीरे इसमें उन्नति हो रही है और हाल ही में इसकी एक दो किस्में बहुत अच्छी निकली हैं। दुनियां का तीन चौथाई रेशम (नकली और असली) होज़िएरी के काम आता है। अब तक नकली रेशम "सेलूलोस" से बनता था। अब "केसीन" (दूध से बनने वाला पदार्थ है) से बनने लगा है। इटली 'केसीन' का बना हुआ रेशम बहुत बढ़िया

तैय्यार करता है। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र और इंग्लैण्ड ने भी 'केसीन' से रेशम बनाना शुरू कर दिया है। सन् १६३७ में संसार में कुल १ अरब १३ करोड़ पौंड नकली रेशम तैय्यार हुआ।

संसार में नकली रेशम की उत्पत्ति

(सन् १९३७ में)

जापान	३३ करोड़ पौंड
संयुक्त राष्ट्र	३१ करोड़ ,,
ग्रेट ब्रिटेन	१२ करोड़ पौंड
जर्मनी	११ ,, ,,
इटली	१० ,, ,,
फ्रांस	४ करोड ८० लाख पौंड
बेल्जियम	१ करोड़ ७० लाख ,
केनेडा	१ करोड़ ५६ ,, ,,
पोलैण्ड	१ करोड ३८ ,, ,,

सम्पूर्ण देशों का कुल—१ अरब १३ करोड़ पौंड

वस्त्रव्यवसाय—यद्यपि कृत्रिम रेशम के वस्त्रों की उत्पत्ति बहुत बढ़ गई है, परन्तु फिर भी रुई के कपड़ों की उत्पत्ति बहुत ज्यादा है। रुई के वस्त्र बहुत सस्ते पड़ते हैं। इस समय वस्त्र-व्यवसाय में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका यूनाइटेड किङ्गडम (इङ्गलैण्ड) हिंदुस्तान और जापान ये चार देश अग्रणी हैं। इङ्गलैण्ड और

जापान बहुत अधिक वस्त्र बाहर भेजते हैं । अमेरिका ज्यादातर अपने इस्तेमाल के लिए ही वस्त्र तैयार करता है । पहले हिन्दुस्तान भी केवल अपने उपयोग के लिए वस्त्र तैयार करता था, पर अब कुछ समय से वह भी बाहर माल भेजने लगा है, ख़ास कर ब्रिटिश बस्तियों में । इस समय इन बस्तियों में वह इङ्गलैण्ड का प्रतिस्पर्धी बना हुआ है । भारतवर्ष और जापान में मज़दूरी कम होने के कारण वस्त्र सस्ते रहते हैं, और इनकी कीमतों का मुकाबला करना इङ्गलैण्ड और यूरोप के अन्य देशों के लिए कठिन हो रहा है । हिन्दुस्तान, जापान और चीन के व्यवसाय ने जिस तेज़ी के साथ तरक्की की है, उसका अन्दाज़ा यूरोप वालों को न था, और इससे वहां के वस्त्र व्यवसायी घबरा उठे हैं । सन् १६१४ से पूर्व इङ्गलैण्ड ७०,००० लाख वर्गगज़ कपड़ा सिर्फ़ बाहर भेजने के लिए तैयार करता था, पर अब वहां कुल ४०,००० लाख वर्गगज़ तैयार होता है, जिसमें से आधा अपने देश के उपयोग के लिए होता है ।

भारतीय मिलें प्रतिवर्ष ४०,००० लाख गज़ प्रतिवर्ष तैयार करती हैं, जो ब्रिटिश उत्पत्ति के बराबर है । तथापि भारतवर्ष इङ्गलैंड से कपड़ा मंगाता है । १६३७ में ३,५५७ लाख गज़ कपड़ा इंग्लैंड से आया ।

मुकाबला बढ़ने के साथ-साथ मैशीनरी में भी कई प्रकार की उन्नति की जा रही है ।

दुनिया में [१६३७] सब मिल कर १४,६६,१८,००० सूत

कातने के तकुए हैं। इनमें ८,८७,३३,००० यूरोप में २,६८,२७,००० एशिया में और ३,१६,७४००० अमेरिका में है।

करघे—१ जनवरी १६३७ को दुनिया में कुल ३०,७०,३६५ करघे थे।

अन्य व्यवसाय—जहाज़ बनाने का काम एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है। इसके लिये समुद्र तटका होना आवश्यक है। न्यूकैसल, सन्दरलैण्ड, चैथय, लिवरपूल, ग्लासगो, बैलफास्ट, इङ्गलैण्ड व आयर्लैंड में तथा हैम्बर्ग और बरमन जर्मनी में, मार्सेल्स और हावर फ्रांस में तथा फ़िलेडेल्फ़िया और बफ़लो अमेरिका में जहाज़ बनाने के बड़े भारी केन्द्र हैं। अंग्रेज़ी राज्य के आरम्भ तक भारतवर्ष भी जहाज़ बनाने के व्यवसाय के लिये संसार-प्रसिद्ध था। परन्तु उसके बाद अन्य व्यवसायों की तरह उसका यह व्यवसाय भी नष्ट हो गया।

रासायनिक द्रव्यों से कई प्रकार की दवाइयां और अन्य पदार्थ बनते हैं। शीशे की वस्तुएं, सिलीका, पोटाशियम और सोडे के मिश्रण से बनायी जाती हैं। सेंट हेलेन्स बरमिंघम, बोहिमिया, वेनिस और पेनसेलवेनिया शीशे की वस्तुओं के लिये प्रसिद्ध हैं।

जहां वनस्पतियों से निकले तेल, और पशुओं की चर्बी सुलभ हो, वहां साबुन और शृंगार सामग्री बनाने का काम होता है। लंदन, लिवरपूल और मार्सेल्स में शृंगार सामग्री बहुत बनती है।

तेलों में अब मिट्टी के तेल की जगह वानस्पतिक तेलों का अधिक व्यवहार होता है। हाल ही में शृंगार सामग्री में झाग के साबुन, बिना साबन का शैम्पू, विटामिन मिश्रित क्रीमें आविष्कृत हुई हैं। विटामिन 'एफ़' के सम्बन्ध में इस समय वैज्ञानिकों में बहस छिड़ी हुई है कि आया हमारी चमड़ी को सुन्दर और स्वस्थ बनाने वाला विटामिन 'एफ़' नाम से कोई पदार्थ है या नहीं। साबुन की टिकियों की जगह अब साबन के चूर्ण की प्रथा चल पड़ी है। सुगन्धित द्रव्यों को फूलों से लेने की बजाय कृत्रिम सुगन्ध, इतर, फुलेल आदि रासायनिक पदार्थों से तैयार की जा रही हैं। हाल ही में चमेली और बेला का बहुत खुशबूदार और सुन्दर कृत्रिम इतर रासायनिक विधियों से तैयार किया गया है।

औद्योगिक आत्मनिर्भरता—आजकल प्रत्येक राष्ट्र कृषि और व्यवसाय में स्वात्म निर्भर होने का प्रयत्न कर रहा है। जर्मनी, इटली और फ्रांस करोड़ों रुपया अपने किसानों और कारखानादारों को सहायता दे रहे हैं। रूस ने अपनी पंच वार्षिक योजनाओं के द्वारा अपनी कृषि और व्यवसाय की उपज बहुत बढ़ा ली है। और अब वह भी पहले दर्जे का कृषि जीवी और व्यवसाय जीवी राष्ट्र बन गया है। हज़ारों एकड़ भूमि पर मशीनों के हल चलाकर खेती की जा रही है। आस्ट्रेलिया, कनाडा और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में भी कृषि करने के लिये कलों और मशीनों का उपयोग हो रहा है। इनके कारण पैदावार बहुत बढ़ गयी

है। कृषि और व्यवसाय का क्षेत्र अब जुदा नहीं रहा। सब राष्ट्र दोनों में साम्मजस्य स्थापित कर रहे हैं। नये नये वैज्ञानिक परीक्षणों और प्रयोगों से भी सहायता ली जा रही है।

इन सबके मुकाबले में हमारा भारतवर्ष बहुत पछड़ गया है। व्यवसाय के क्षेत्र में तो वह पीछे था ही। अब कृषि जीवी होता हुआ कृषि के क्षेत्र में पिछड़ भी रहा है। भारत के कृष्टि जन्य पदार्थों की दुनिया में मांग प्रतिदिन कम होती जा रही है। हमारा माल एक तो बढ़िया नहीं होता, क्योंकि हमें आधुनिक वैज्ञानिक उपायों का ज्ञान नहीं, दूसरे हमारे यहां उन्हें तैय्यार करने में खर्चा बहुत पड़ता है। लायलपुर में गेहूँ की पैदावार का खर्चा औसत डेड़ रुपया मन पड़ता है, पर आस्ट्रेलिया में आठ आने फ़ी मन। इसलिये संसारके बाज़ारों में हमारी वस्तुएं महँगी पड़ती हैं। संसार के राष्ट्र अपनी आत्म-निर्भरता की प्रवृत्ति के कारण भी हमारा माल लेना कम पसन्द करते हैं। ऐसी दशा में अपने यहां भी उद्योग धन्धों और व्यवसाय का विस्तार करके अपनी पैदावार को यहीं पर खपा लेने की बड़ी आवश्यकता है।

क्या प्रकृति का ख़जाना खाली हो जायगा ?

ऊपर हमने देख लिया कि प्रकृति किस उदारता से मनुष्य को अपना अक्षय भंडार लुटा रही है। परन्तु क्या प्रकृति का यह भंडार कभी खाली भी हो सकता है ? प्रकृति के भंडार में मनुष्य ने लूट और उथल-पुथल मचादी है। खास खास ज़मीनों

से निरन्तर लोहा, कोयला, तेल, खनिज द्रव्य और कपास, गल्ला वग़ैरा लेते रहने से कुछ समय बाद उनकी पैदावार घट जाती है। ज़मीन को यदि खाद न दिया जाय तो उस की उपजाऊ शक्ति कम हो जाती है। कुछ ज़मीनों में कैलशियम और कुछ में फ़ास-फ़ोरस जमा हो जाने से उन से उत्पन्न अनाज पर पलने वालों की शक्ति घट जाती है। मनुष्य ने काग़ज़ों की लकड़ी के लिये जंगल के जंगल साफ़ कर दिए हैं, शिकार के लिए पक्षियों और मछलियों को मार-मार कर वह उन्हें समाप्त कर रहा है। ह्वेल मछलीका इतना शिकार हुआ है कि वह अब भूमि के उत्तरी गोलार्धमें बहुत कम रह गई है। यह ठीक है कि प्रकृति जल्दी-जल्दी खाली भंडार को भरती भी जाती है—पर उतनी जल्दी नहीं जितना जल्दी मनुष्य उसे खतम करता जाता है। जंगल एक दिन में कट सकते हैं, पर उनके खड़े होने में वक्त लगता है। हमारी कोयले की खानें हज़ारों साल में धीरे धीरे तैयार हुई हैं, उन को फिर तैयार करने में प्रकृति को बहुत समय चाहिये—परन्तु मनुष्य इस भंडार को बहुत शीघ्रता से समाप्त कर रहा है। यही तेल और दूसरी धातुओं का हाल है। गेहूँ की फ़सलें जल्दी जल्दी लेने के कारण पश्चिमी अमेरिका की भूमि अपनी उपजाऊ शक्ति खो बैठी है। शहरों की चिमनियों से धुआं छोड़ कर बहुत शीघ्र 'कार्बन डायोक्साइड' की भारी मात्रा तैयार होती है और हवा में आक्सिजन की मात्रा घट रही है। चिली के 'नाइटर' खाद और पीरू के समुद्री पक्षियों द्वारा

हज़ारों सालों में एकत्र किए हुए फ़ासफ़ोरस के ढेर को वह समाप्त कर रहा है और जहाज़ों में भर भर कर दुनियां के कोने कोने में बखेर रहा है। आबादी निरन्तर बढ़ रही है । इस समय लगभग २ अरब आबादी है । प्रोफेसर कार साउंडर्स के अनुसार इस समय आबादी प्रतिवर्ष एक फ़ीसदी बढ़ जाती है। इस हिसाब से ५०० साल में आज से ५०० गुना आदमी इस धरती पर हो जायँगे । ५०० वर्ष दुनियां के इतिहास में एक बहुत थोड़ा समय है। पृथ्वी का बहुत सा फ़ासफ़ोरस गन्दी नालियों और अन्य तरीकों से बह कर समुद्र में जारहा है। अनुमान लगाया गया है कि अकेला अमरीका ६० लाख टन फ़ासफ़ोरस हर साल खोता है। पुराने समय से चट्टानें बह बह कर समुद्र में गिर गयी हैं और प्रतिवर्ष १० लाख टन फ़ासफ़ोरस मिश्रित पदार्थों की चट्टानें समुद्र की भेंट हो रहीं हैं और समुद्र से उसे वापस लाने का उपाय नहीं हो रहा।

इसमें सन्देह नहीं कि फ़िलहाल जुदा-जुदा स्वार्थों में बंधा होने के कारण मनुष्य प्रकृति के दिए हुए भंडार के आय व्यय का हिसाब रख कर नहीं बरत रहा, और जो भंडार खाली हो रहा है उसे भरने की उसे फ़िक्र नहीं । परन्तु मनुष्य धीरे-धीरे यह भी करना सीख रहा है। अलास्का के 'फ़र' देने वाले सील प्राणी खतम हो चले थे, परन्तु १६११ में अन्तर्राष्ट्रीय समझौते द्वारा उनका मारना रोक दिया गया और १६२४ तक उनकी संख्या २ लाख से बढ़ कर ७ लाख होगई । कृषि की पैदावार

को भी इसी प्रकार के समझौतों से नियन्त्रित किया जा रहा है। इसी प्रकार सम्भव है कि कुछ समय बाद अन्तर्राष्ट्रीय समझौते द्वारा मनुष्य अपनी जनसंख्या की वृद्धि को भी सीमित कर ले। इसके साथ विज्ञान नए नए पदार्थ ईजाद कर रहा है जो पुरानों की जगह ले रहे हैं। बहुत से रासायनिक खाद्य द्रव्य, तथा व्यावसायिक द्रव्य तैय्यार किये जा रहे हैं। कोयले और तेल की जगह जल प्रपातों से शक्ति संग्रहीत की जा रही है और कोई आश्चर्य नहीं कि कुछ समय के अन्दर हम सूर्य से शक्ति लेकर उस से अपने कारखाने चलाने लगें। ये सब बातें सम्भव हैं। अभी मनुष्य के लिये भविष्य आशापूर्ण है—बशर्ते कि वह समझ से काम ले और विज्ञान को अपने विनाश के लिए इस्तेमाल न कर के उसे मानव जाति के विकास के काम में लावे।

पांचवां अध्याय

विचारों का संघर्ष

(१)

वर्तमान युग

पिछले दो सौ वर्षों में मानवीय जीवन में एक अभूतपूर्व क्रान्ति हुई है। इस क्रान्ति का इतिहास तो बहुत दिलचस्प है, परन्तु हमारी इस पुस्तक का यह विषय नहीं। फिर भी 'आज की दुनियां' को समझने के लिये इस क्रान्ति को समझ लेना बहुत ज़रूरी है।

पुरानी दुनियां बहुत ही धीमे धीमे चलती थी और मनुष्यों के जीवन का क्षेत्र बहुत ही छोटा था। मनुष्य की इच्छाएं, आवश्यकताएं और ऐसी चीज़ें जिनसे उसे कोई दिलचस्पी हो सकती थी गिनती में बहुत कम थीं और आसानी से हासिल हो सकती

थीं। मगर आज मनुष्य की ज़रूरतें बढ़ गयी हैं, और जीवन इतना पेचीदा हो गया है कि कई बार बुद्धि चक्कर खा जाती है। जीवन में परस्पर विरोधी पदार्थ और घटनाएं बहुत बढ़ गई हैं। इसलिये प्रत्येक मनुष्य को अपने ज्ञान और परिचित का दायरा बहुत बढ़ा लेना पड़ा है, और दुनियां को समझने के लिये बुद्धि को ज्यादा लड़ाना पड़ता है। पुराने ज़माने में बुद्धि और विचार का क्षेत्र कुछ पढ़े लिखे दार्शनिकों और साधन सम्पन्न तत्वज्ञानियों के लिये सुरक्षित था। बाकी दुनियां मेहनत करती और पेट पालती थी। थोड़ा परिश्रम करने मात्र से ही प्रकृति अपनी सम्पत्ति खुले दिल से लुटाने लग जाती थी। दुनियां की आबादी थोड़ी थी। खाने वाले कम थे—जीवन संघर्ष कठिन न था। यह ठीक है कि उस ज़माने की भी अपनी मुश्किलात और समस्याएं थीं, मगर जीवन सादा और सरल था—आसानी से समझ में आने लायक था, आज की तरह पेचीदा न था।

मनुष्य के जीवन में यह परिवर्त्तन अच्छा हुआ है या बुरा इससे यहां विवाद नहीं, और यह कोई हमारे बस की भी बात नहीं।

मज़दूर वर्ग का जन्म—नये युग की सबसे महत्वपूर्ण बात मशीनों का आविष्कार है। मशीनों के सहारे हरएक उद्योग-धन्धे ने तरक्की शुरू की। लंकाशायर में मशीन के करघों की स्थापना का असर दूर हिन्दुस्तान के देहात पर पड़ा और यहां

के जुलाहे बेरोज़गार हो गये। इतना ही नहीं गांवों के दूसरे लोग भी बेरोज़गार हो गये। मशीनों की शक्ति के सामने इनका रोज़गार ठहर नहीं सकता था। विकास इसी दिशा में हुआ और दुनियां में सब जगह झोंपड़ियों में हाथों से काम करने वाले कारीगरों को व्यवसाय के तरीके बदलने पड़े। इतना ही नहीं, उन्हें अपने जीवन और रहन सहन के तरीकों को भी बिलकुल बदल देना पड़ा। वे लोग कारखानों में आकर काम करने लगे। उनकी हैसियत एक स्वतन्त्र कारीगर की न रहकर दिहाड़ीदार मज़दूर की होगयी। पहले अपने खेतों के आसपास उनकी बस्तियां थीं अब बड़े बड़े कारखानों के आसपास झोंपड़ियां खड़ी हो गयीं। और बड़े बड़े बन्दरगाहों के आसपास बड़े शहर बस गये और मज़दूरपेशा लोग अब गांव छोड़ कर इन शहरों में आ बसे। शहरों में नई बस्तियों में नये सम्बन्ध—नये रिश्ते और नये परिवार बने, पुराने बिरादरियों और जातियों के बन्धन टूट गये। इससे नये सामाजिक सम्बन्धों,नये नियमों और नये रिवाजों की ज़रूरत हुई। सामाजिक जीवन में क्रान्ति के साथ सामाजिक जीवन के सम्बन्ध में बनाई हुई पुरानी धारणाओं और विचारों में भी क्रान्ति हुई। धर्म, इखलाक या नीति, पारिवारिक सम्बन्ध, स्त्री-पुरुषों के अधिकार, बच्चों की रक्षा, शिक्षा, दीक्षा सब विषयों के सम्बन्ध में बनाये हुए पुराने विचार और पुरानी धारणाओं में तबदीली पैदा हुई।

पूंजीवादका जन्म—इस युग ने जहां एक नई मज़दूर

श्रेणी को जन्म दिया, वहां दूसरी तरफ़ पूंजीपति श्रेणीका अभ्युदय हुआ। बड़ी मशीनों के लिये अधिक धन और अधिक पूंजी की ज़रूरत थी। जिन के पास पूंजी या सरमाया अधिक था वे कारखानों के मालिक बन बैठे। जितना-जितना मशीन का कद बड़ा हुआ पूंजीपति या सरमायादार भी उतना बड़ा होता गया। इन के कारखानों में हज़ारों लोग मज़दूरी करने आने लगे जो अपने जीवन निर्वाह के लिए इन्हीं पूंजीपतियों पर आश्रित हो गए। इस ने एक नई सामाजिक समस्या को जन्म दिया और वह मज़दूर और पूंजीपति की समस्या है। मज़दूर यह समझता है कि वह मेहनत कर के दौलत पैदा करता है, पर मेहनत के बदले में उसे इतनी मज़दूरी नहीं मिलती कि वह अच्छी तरह पेट भी भर सके। इस लिये वह अपने आप को शोषित वर्ग में समझता है। दूसरी ओर पूंजीपति अधिक से अधिक मुनाफा कमाना चाहता है, और दुनियां के व्यापार में दूसरे पूंजीपतियों के साथ मुकाबला बढ़ जाने के कारण जब लाभ में कमी आती है तो वह मज़दूरी कम करके कसर पूरी करना चाहता है।

वर्गयुद्ध— हितों के इस संघर्ष ने साम्यवाद और वर्ग या श्रेणी युद्ध (Class-war) को जन्म दिया है। श्रमी लोग श्रमी श्रेणी और पूंजीपति का भेद मिटा देने के उद्देश्य से निजी सम्पत्ति या जायदाद के अधिकार को मिटा देना चाहते हैं। साम्यवाद के सिद्धान्तों का उल्लेख हम बाद में करेंगे। परन्तु यहां इतना समझ लेना ज़रूरी है कि किस प्रकार

जीवन रहन, सहन और साधनों में तबदीली आ जाने से नये विचारों, सिद्धान्तों और वादों का जन्म हुआ है और ये विचार और वाद आपस में संघर्ष कर रहे हैं।

विचारक्रान्ति—इस युग में आवागमन के साधनों—रेल मोटर, हवाई जहाज़ और परस्पर वार्तालाप तथा संदेश लाने ले जाने के साधनों—डाक, तार, टेलीफ़ोन, रेडियो—के आविष्कारों ने भी समाज के जीवन को बदल दिया है। संसार के कोने कोने से खबर मिनट मिनट में आती है और मनुष्य मनुष्य के बहुत समीप हो गया है। इस कारण से परस्पर विचार विनिमय और आदान प्रदान बढ़ गया है। संसार की संस्कृति, सभ्यता और सामाजिक संगठन के सिद्धांतों में एकता आ रही है। इसका भी स्वाभाविक नतीजा पुराने विचारों का नष्ट हो जाना हुआ है। विज्ञान के नवीन आविष्कारों ने बहुत से पुराने विचारों, रूढ़ियों और धारणाओं को ग़लत साबित किया है। हज़ारों सालों से परम्परागत आये हुए विचारों—(जिन्हों ने धीरे धीरे श्रद्धा और विश्वास पर आसन जमा लिया था) की मोटी मोटी तहें विज्ञान के आक्रमण से उखड़ी जा रही हैं, यह देख कर मनुष्य के हृदय में प्रत्येक विषय के सम्बन्ध में सन्देह के भाव पैदा हो गए हैं। वह प्रत्येक बात के बारे में सवाल करता है, और उसे विज्ञान और तर्क की कसौटी पर कसना चाहता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण—आधुनिक मनुष्य के लिए कोई

भी परम्परागत या नवीन बात "पवित्र वाक्य" नहीं। इसने मनुष्य के दृष्टिकोण को एकदम बदल दिया है। इसे हम 'वैज्ञानिक दृष्टिकोण' कह सकते हैं। वह नए नए परीक्षण करता है, नए नए सिद्धांत निश्चित करता है। आज एक सिद्धांत कायम करता है, दूसरे दिन उसे त्याग देता है। इस अवस्था ने उसके हृदय में एक भीषण मानसिक उथल-पुथल पैदा कर दी है। एक पुराने कथन के अनुसार "अज्ञान आशीर्वाद है" (Ignorance is a Bliss)। अज्ञान से उत्पन्न शान्ति अच्छी है, या ज्ञान की प्यास से तड़पते हुए इधर से उधर भटकने-दौड़ने में ज्यादा आनन्द है, इस बात का निर्णय तो पाठक अपनी मनोवृत्ति के अनुसार करें। परन्तु आज मनुष्य ज्ञान के लिए संसार के कोने-कोने में भटक रहा है।

इस समय मनुष्य के आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक या राजनीतिक विचारों में जो भीषण उथल-पुथल मच रही है और जो भयङ्कर संघर्ष जारी है, उसका विस्तार से यहां वर्णन करना तो मुश्किल है। सिर्फ उदाहरण के तौर पर कुछ वादों का अत्यन्त संक्षेप से परिचय कराना ही काफ़ी होगा।

धर्म और धार्मिक विश्वास

मज़हब, या धर्म की कई प्रकार की व्याख्याएं की जाती हैं। सामान्य तौर पर हम कह सकते हैं कि धर्म एक परोक्ष और अदृश्य आध्यात्मिक सत्ता में विश्वास है जिस सत्ता के साथ सम्बन्ध जोड़ना प्रत्येक मनुष्य का अधिकार और आध्यात्मिक कर्तव्य

है। जिसके लिए जीवन में आचरण सम्बन्धी विविध प्रकार के कर्तव्यों का पालन आवश्यक उपाय है। एक धार्मिक मनुष्य के विश्वास के अनुसार इस आध्यात्मिक जगत की सत्ता इतनी ही वास्तविक है जितना कि हमारा यह दृश्य जगत है। आमतौर पर उसका यह भी विश्वास है कि इस आध्यात्मिक सत्ता और उसकी वास्तविक महिमा का बोध उसे एक ऊँचे व्यक्तित्व वाली सत्ता—जिसे वह ईश्वर या परमात्मा का नाम देता है—ने कराया है। इस बोध को वह इलहाम कहता है, और इस प्रकार के इलहामों को जिस पुस्तक में संग्रह किया गया है उसे अपनी धर्म पुस्तक मानता है। वह ईश्वर या परमात्मा की पूजा करता है, और धर्म पुस्तक को पवित्र मानता है।

संसार में अत्यन्त प्राचीनकाल से यह धार्मिक भावना किसी न किसी रूप में चली आयी है। ज्यों ज्यों मनुष्य प्रत्यक्ष वस्तुओं के अदृश्य और परोक्ष नियमों और सिद्धान्तों को समझता गया है, परोक्ष सत्ता पर उसका विश्वास कमज़ोर होता गया है। किसी ज़माने में वह सूर्य, चन्द्र, तारागण, वर्षा, तूफ़ान, नदियां, पहाड़, पृथ्वी, बिजली, अग्नि, जल आदि समस्त वस्तुओं को चेतन देवता समझ कर उनकी पूजा करता था। क्योंकि इन पर उसका नियन्त्रण न था। विज्ञान की प्रगति के साथ वह धीरे-धीरे इन अन्ध विश्वासों और वहमों से आज़ाद होता गया है। आधुनिक विज्ञान ने मानवीय विचारों में जो अद्भुत क्रान्ति उत्पन्न कर दी है उसके कारण प्रायः सर्वत्र, धार्मिक विश्वास कमज़ोर पड़ गये हैं।

विश्वासों के कमज़ोर होने के साथ साथ धार्मिक भावनाएँ और आचरण सम्बन्धी धार्मिक नियमों की पाबन्दियां-जिनका आधार धार्मिक विश्वास था—भी उठती जा रही हैं। लोग धर्म मन्दिरों में अब कम जाते हैं। धर्म गुरुओं का प्रभाव प्रायः समाप्त हो गया है और साहित्यिक और दार्शनिक लोग अनीश्वरवाद, स्याद्वाद या अज्ञेयवाद के विचारों का अधिक प्रचार करने लगे हैं।

कुछ देशों में ईश्वर विरोधी आन्दोलन बहुत ज़ोरों पर है।

रूस में ज़ार के समय धर्मगुरुओं और पादरियों का बहुत बोलबाला था। धर्मगुरु प्रायः अनपढ़ थे, परन्तु क्योंकि लोगों में वे राज्य के प्रति वफ़ादार रहने का ज्यादा उपदेश करते थे, इसलिए उनका विरोध बर्दाश्त नहीं किया जाता था। कम्युनिस्टों ने धर्म का विरोध आरम्भ किया क्योंकि मार्क्स का "तार्किक भौतिक वाद" (Dialctical materialism) का सिद्धान्त 'धार्मिक वाद" से मेल नहीं खाता। दूसरे इतिहास की आर्थिक रीति से व्याख्या धर्म की ऐतिहासिक व्याख्याओं के विरुद्ध है। कम्युनिज़्म वर्तमान समाज के सङ्गठनमें क्रान्ति लाना चाहता है, जिस समाज की रचना और विकास में धार्मिक विश्वासों और धार्मिक सिद्धान्तों ने बड़ा भारी हिस्सा लिया है। कम्युनिज़्म का विरोध वर्तमान धार्मिक बुराइयों के विरुद्ध नहीं, बल्कि उसके आधारभूत सिद्धान्तों के विरुद्ध है। लेनिन ने एक दफ़ा कहा था—"जितना कोई मज़हब कम दोषपूर्ण हो, उसे नष्ट करना उतना ही आवश्यक है" क्योंकि वह उतना ही ज्यादा जनता को धर्ममात्र

की बुराइयों से बेखबर रखता है, और वर्तमान समाज में क्रान्ति की भावना को जगने नहीं देता ।

रूस में पहले पहल धर्म के विरुद्ध बहुत बड़ा जिहाद हुआ, परन्तु अब वह विरोध इतना तीव्र नहीं रहा । किसानों ने अब भी वहां ईसा की मूर्तियां रखी हुई हैं ।

स्पेन में भी धर्म विरोधी आन्दोलन बहुत तीव्र है, परन्तु शहर की श्रमी श्रेणी में धर्म का विरोध जितना तीव्र है, ग्रामीण किसानों में नहीं । बास्क लोग कट्टर रोमन कैथोलिक हैं । बहुत लोग धर्म मन्दिरों के विरुद्ध नहीं हैं, पादरियों के विरुद्ध हैं ।

मैक्सिको में भी धर्म विरोधी आन्दोलन बहुत तीव्र है, परन्तु वहां यह आन्दोलन विशेषरूप से रेड इंडियन लोगों का उठाया हुआ है । उसका कारण यह है कि ईसाई गिरजों में उनके साथ अच्छा सलूक नहीं होता । उनमें अपने प्राचीन धर्म के पुनरुद्धार की प्रवृत्ति पायी जाती है ।

जर्मनी में भी कुछ धर्म विरोधी आन्दोलन है, परन्तु उसका उद्देश्य ईश्वर के अस्तित्व को मिटाना नहीं, अपितु राज्य को ईश्वरीय दर्जा देना है । राज्य का यह प्रभुत्व ईसाइयत के प्रभुत्व से टक्कर खाता है ।

इटली में धर्म, राज्य के हाथ में कठपुतली है । वहां प्रारम्भ में मजहब के विरुद्ध जिहाद हुआ था । परन्तु अब वहां हकूमत अपनी शक्ति बनाये रखने के लिये धर्म की सहायता लेती है, और बदले में धर्म की रक्षा करती है । वे लोग जो क्रान्ति करना

चाहते हैं भले ही वे धर्म को नफ़रत की निगाह से देखें, परन्तु शक्ति अपने हाथ में आजाने के बाद प्राय: वे एक ऐसे हथियार को खोना पसन्द नहीं करते जो कि हमेशा कानून, व्यवस्था (Law and order) और राजभक्ति का समर्थन करता है।

फ्रांस में धर्म की शक्ति इतनी कमज़ोर है कि तर्कवादी उस पर हमला करने की आवश्यकता ही नहीं समझते। इसी लिये वहां धार्मिक विचारों और कार्यों में कोई दखल भी नहीं देता।

इंग्लैण्ड में लोगों का गिरजों में जाने का शौक बहुत कम हो रहा है। धार्मिक क्रिया-कलाप को किसी धार्मिक विश्वास के कारण से नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक प्रथा समझ कर वहां के लोग अपनी रूढ़िप्रियता के कारण पालन करते जाते हैं, परन्तु उसे कोई महत्व नहीं देते और इसलिये उसमें किसी सुधार की चेष्टा भी नहीं करते। शिक्षा बहुत फैली हुई है, और प्रत्येक विचार की पुस्तकें बहुत सस्ती मिल जाती हैं, इसलिये धार्मिक विश्वास प्राय: कमज़ोर हैं। इंग्लैण्ड के अधिकांश व्यक्तियों के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि वे ईश्वर पर विश्वास नहीं रखते, परन्तु ईसामसीह पर विश्वास रखते हैं। उन्होंने धर्म के सम्बन्ध में एक धारणा बना ली है जिसका स्वरूप एक दयालुतापूर्ण शिष्ट मानव हितपरता है। इसमें एक अंग्रेज़ बाइबल की शिक्षाओं को सम्मिलित कर लेता है, परन्तु उन्हें बिलकुल वैसा महत्व नहीं देता। बाइबल की नयी और तर्कनापूर्ण व्याख्याएं की जा रही हैं।

टर्की के लोगों ने धार्मिक विचारों में बहुत शीघ्रता से परिवर्तन कर लिया है।

भारतवर्ष में धर्म का अभी तक जनता के जीवन में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है, और लोगों के सामाजिक और राजनीतिक जीवन पर भी उसका नियन्त्रण है। शिक्षित समाज में भी जाति और वर्णभेद का काफ़ी सख्ती से पालन किया जाता है, और जो लोग धार्मिक विचारों में कुछ स्वतन्त्र हैं वे भी सामाजिक रूढ़ियों में बिलकुल परतन्त्र रहते हैं। इसका कारण शिक्षा की बहुत कमी है। शिक्षित समाज बहुत निर्बल और छोटा है, और धार्मिक क्षेत्र में उसका प्रभाव बिलकुल न के बराबर है।

यह सब होते हुए भी संसार में धर्म को अब वह प्रभुत्व प्राप्त नहीं, जो आज से दो सौ साल पहले या मध्य युग में उसे प्राप्त था। धर्म ने संसार को जो दार्शनिक और भौतिक शास्त्र सम्बन्धी सिद्धान्त दिये थे, वे सब वर्तमान विज्ञान के सामने खोखले साबित हुए हैं, और धर्मशास्त्री अब आधुनिक विज्ञान के अनुसार उनकी व्याख्याएं करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

धार्मिक रूढ़ियां, विधिविधान और अनुष्ठान (Forms) अभी तक कहीं कम कहीं ज़्यादा कायम हैं। उसका कारण यह नहीं कि लोगों को उन पर बहुत विश्वास रह गया है, बल्कि इस लिये उनका स्थान लेने के लिये आधुनिक प्रकार के विधि विधान सुझाये नहीं गये। रूस में नये विधि विधानों द्वारा धार्मिक विधि

विधानों को स्थानच्युत करने का प्रयत्न पर्याप्त सफल हुआ है।

धर्म ने जिन नैतिक सिद्धान्तों और शिक्षाओं का प्रचार किया था और जो प्रायः संसार के सब धर्मों में समान थे, उनका सबसे अधिक स्थायी प्रभाव समाज पर है। धर्म विरोधी लोगों ने भी उनमें से अधिकांश को स्वीकार कर लिया है। परन्तु ये सिद्धान्त भी एक तार्किक छानबीन के बाद ग्रहण किये जा रहे हैं। इनके भी आपेक्षिक महत्व में आधुनिक विचारोंने काफ़ी परिवर्तन पैदा किया है और यही कहना चाहिये कि इन नैतिक सिद्धान्तों को भी आज की दुनियां बिलकुल नया रूप और नये प्रकार का आपेक्षिक महत्व दे रही है—जिससे उनका प्राचीन स्वरूप और महत्व बिलकुल बदल रहा है।

This is a very interesting book for girls and women they must read it.

(संसार में भिन्न भिन्न धर्म मानने वालों की संख्या)

(अंकों के साथ ००० लगा कर पढ़ें)

नाम धर्म	उत्तरी अमेरिका	दक्षिणी अमेरिका	यूरोप	एशिया	अफ्रीका	ओशनिया	कुल जोड़
१. ईसाई	४००००	६१०००	२२००००	७०००	२०००	१५००	३३१५००
रोमन केथोलिक	१०००	—	१२००००	२००००	३०००	—	१४४०००
कट्टर केथोलिक							
प्रोटेस्टेंट—	७५०००	६००	११५०००	७०००	३०००	६०००	२०६६००
कुल ईसाई	११६०००	६१६००	४५५०००	३४०००	८०००	७५००	६८२४००
२. यहूदी	४०००	१००	१००००	१०००	५००	३०	१५६३०

(अंकों में ००० लगा कर पढ़ें)

नाम धर्म	उत्तरी अमेरिका	दक्षिणी अमेरिका	यूरोप	एशिया	अफ्रीका	ओशनिया	कुल जोड़
३. मुसलमान	२०	—	५०००	१६००००	४४०००	—	२०६०२०
४. बौद्ध	१८०	—	—	१५००००	—	—	१५०१८०
५. कनफ्यूशियनिस्ट टाओइस्ट	६००	—	—	३५००००	—	—	३५०६००
६. शिन्तो मत	—	—	—	२५०००	—	—	२५०००
७. हिन्दू	१५०	—	—	२३००००	—	—	२३०१५०
८. प्रेतवादी (Animists)	५०	—	—	४५०००	९०५००	१००	१३५६५०
९. विविध मत	२५०००	२०००	५०००	१८०००	—	८७०	५०८७०

जातीयता तथा राष्ट्रीयता की लहर
(Nationalism)

राष्ट्रीयता के आन्दोलन के दो पहलू आज देखने में आते हैं। एक पहलू तो वह है जिसका जन्म फ्राँस की राज्यक्रांति से हुआ। समानता और स्वतन्त्रता इस क्रान्ति का सन्देश था। जिन जातियों को दूसरी जातियों ने पददलित किया हुआ था, उनमें इस सन्देश ने चेतना उत्पन्न की। यूरोप में इटली के स्वाधीनता आन्दोलन के नेता मेज़िनी के लेखों ने संसार में इस राष्ट्रीयता और स्वतंत्रता के भाव विशेष रूप से भर दिए। यह लहर धीरे-धीरे सारी दुनियां में फैल गई और एक-एक करके पराधीन जातियां स्वतन्त्र होने लगीं। यूरोप में बलकान प्रदेशों में कई जातियां टर्की के साम्राज्य से स्वतन्त्र हो गयीं। पोल और मध्य यूरोप की कई जातियां जातीयता की लहर में बह निकलीं। महायुद्ध में इन्हीं जातियों को सन्तुष्ट करने के लिए "स्वभाग्य निर्णय" के सिद्धान्त के नाम से राष्ट्रीयता का समर्थन किया गया। प्रत्येक जाति अपने भाग्य की खुद मालिक है। युद्ध के बाद यह लहर एशिया और अन्य संसार के देशों में भी फैल गई है और सब जातियां अपनी स्वाधीनता प्राप्ति के लिये उत्सुक हैं।

इस लहर का एक और रूप भी है। जातीयता और राष्ट्रीयता की भावना ने कई जगह संकुचित रूप धारण कर लिया है। जर्मनी इसकी एक जीवित मिसाल है। जर्मन लोगों की जातीयता

की भावना इतनी उग्र हो उठी है कि वह अपने जातीय अभिमान के कारण संसार की सब जातियों को तुच्छ समझने लगे हैं। जर्मनी से यहूदियों और दूसरी जातियों को बाहर निकाला जा रहा है। वहां जातीयता की भावना सीमा का अतिक्रमण कर के उग्र (Aggressive) हो उठी है।

भाषा, संस्कृति, मज़हब, विशेष राष्ट्रीय सीमाएं ये सब राष्ट्रीय भावनाओं को मजबूत करने वाले अंश हैं।

अन्तर्राष्ट्रीयता

जातीय और राष्ट्रीय सभी सीमाओं को तोड़ कर एक अन्तर्राष्ट्रीय 'सार्वभौम राज्य" कायम करने की प्रवृत्ति इस युग में बहुत तीव्र हो उठी है। वर्तमान वैज्ञानिक युग में हमारा जीवन एक अन्तर्राष्ट्रीय जीवन बन गया है और हम अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक बन गये हैं। दूर-दूर देशों की घटनाओं का असर हमारे जीवन पर पड़ता है, और इसलिए हमें उनसे बेहद दिलचस्पी हो गयी है अख़बार, तार, टेलीफ़ोन और रेडियो—निरन्तर क्षण-क्षण का समाचार लाते हैं। हमारा व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार है। न्यूयार्क में गेहूँ या कपास का भाव गिर जाने से या वियाना में किसी बैङ्क के फेल हो जाने से हम यहां बैठे दिवालिए हो जाते हैं या लंदन में इतनी-सी घटना से राजनीतिक सङ्कट उपस्थित हो सकता है। रेडियो पर एक जर्मन या आस्ट्रियन गायक के गान सुन कर हम उसके अनुयायी हो जाते हैं। रेडियो, चित्रपट,

साहित्य, विज्ञान, उद्योग व्यापार, राजनीति सब देशों और राष्ट्रों की भौगोलिक और राजनीतिक सीमाएं लाँघ कर अन्तर्राष्ट्रीय सम्पत्ति बन गये हैं। साम्यवादी दुनिया भर के मज़दूरों को एक सङ्गठन में बांध कर अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर क्रान्ति के स्वप्न देखते हैं। जब इङ्गलैंड और जर्मनी महायुद्ध में एक दूसरे पर बम बरसा रहे थे तो इङ्गलैंड के वैज्ञानिक जर्मनी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन की नई वैज्ञानिक खोजों का स्वाध्याय करते हुए उसकी तारीफ़ करते नहीं थकते थे। ये सब अन्तर्राष्ट्रीयता की प्रवृत्तियां हैं, और यह कल्पना कर लेना कुछ बेजा नहीं कि शीघ्र ही ये प्रवृत्तियां जातीयता और राष्ट्रीयता के तंग दायरों को छोड़ दें और हमें वर्तमान मशीनयुग की सत्वरगति और अकल्पनीय वेग का साथ देने के लिये उसी तरह की उपयुक्त अन्तर्राष्ट्रीय मैशीनरी की रचना करनी पड़े! 'राष्ट्रसंघ' की कल्पना इसी उद्देश्य से की गई थी, और अभी असफल हो जाने पर भी यही कल्पना भविष्य में कभी सफल हो सकती है।

जनतन्त्र या प्रजातन्त्र (Democracy)

प्राचीन जनतन्त्र—जनतन्त्र अंग्रेज़ी के 'डिमोक्रेसी' शब्द का अनुवाद है 'डिमोक्रेसी' का अर्थ है 'जनता का शासन'। 'डिमोक्रेसी' शब्द यूनानी भाषा से आया है। छठी, पांचवीं और चौथी सदी ईसा पूर्व में यूनान के अन्दर जनतन्त्र शासन प्रचलित था। भारतवर्ष में भी इससे मिलती-जुलती जन-

तन्त्र प्रणाली यहां के 'गण-राष्ट्रों' में प्रचलित थी, परन्तु प्राचीन यूनान के जनतन्त्र और आजकल के जनतन्त्र में) जैसा कि इङ्गलैंड, फ्रांस और अमेरिका में है) बहुत ज्यादा अन्तर है। उस समय सारी जनता खुद शासन करती थी—सब नागरिक एक जगह इकट्ठे होकर शासन सम्बन्धी प्रश्नों का निर्णय करते थे। यह जनता का प्रत्यक्ष (Direct) शासन था।

प्रतिनिधि तंत्र—आजकल जनता परोक्ष (Indirect) रूप से शासन करती है। जनता अपने प्रतिनिधि चुनती है—प्रत्येक नागरिक को मताधिकार प्राप्त है उससे राय ली जाती है कि वह किसे अपना प्रतिनिधि चुनना चाहता है। वे प्रतिनिधि, सभा या पार्लियामेंट में इकट्ठे होकर जनता की ओर से शासन संबन्धी सम्पूर्ण प्रश्नों का निर्णय करते हैं। वे जनता के प्रति उत्तरदाता हैं। शासन-सत्ता या प्रभुत्व (Sovereignty) जनता में रहती है, परन्तु प्रतिनिधि सभा के निर्वाचित सदस्य जनता के प्रतिनिधि रूप से उसका इस्तेमाल करते हैं। आजकल के जनतन्त्र में सम्पूर्ण बालग़ नागरिकों को मताधिकार रहता है। परन्तु प्राचीन यूनान में प्रत्येक व्यक्ति को नागरिक नहीं समझा जाता था। दास लोग नागरिक नहीं समझे जाते थे नागरिकता के अधिकार प्राप्त करने के लिये सम्पत्ति की भी शर्त थी। स्त्रियों को नागरिकता के अधिकार प्राप्त नहीं थे। यदि किसी आधुनिक जनतन्त्र राज्य में से किसी नागरिक को प्राचीन यूनान

के जनतन्त्र राज्य से ले जाया जावे तो वह उसे एक प्रकार का वर्गतन्त्र शासन (Oligarchy) ही समझेगा। क्योंकि उस में राज्य के अधिक ग़रीब, और महत्वशून्य व्यक्तियों को शासन प्रबन्ध में हिस्सा लेने का कोई अवसर न था। आधुनिक जनतन्त्र में हर एक नागरिक को यह हक हासिल हैं।

उत्तरदायी शासन—जैसा ऊपर कहा गया है आधुनिक जनतन्त्र जनता का परोक्ष (Indirect) शासन या प्रतिनिधि तन्त्र शासन (Representative or Parliamentary) Democracy) है परन्तु इतनी ही बात नहीं। प्रतिनिधि सभा से पृथक् एक मन्त्रिमण्डल या केबिनिट है, जो शासन के सम्पूर्ण अधिकार रखती है। यह मन्त्रिमण्डल का शासन (Cabinet Government) है। देश यह मन्त्रिमण्डल या तो अपनी सभा प्रतिनिधि सभा से प्राप्त करता है जैसा इंगलैंड आदि में है, अथवा प्रत्यक्ष जनता से प्राप्त करता है जैसा कि अमेरिका में प्रेज़िडेण्ट के चुनाव द्वारा होता है। दोनों हालतों में मन्त्रिमंडल का शासन उत्तरदायी शासन (Responsible Government) है। इस प्रकार आधुनिक जनतन्त्र के दो अंग हुए। प्रतिनिधि सभा और उत्तरदायी शासकवर्ग (Executive.)।

पार्टी या दल—परन्तु यदि जनता ने अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करना है तो चुनाव के लिये दो या दो से ज्यादा व्यक्ति चाहियें और दो या दो से ज्यादा व्यक्तियों में चुनाव किस आधार पर किया जा सकता है जब तक वे व्यक्ति किन्हीं जुदा जुदा

असूलों और नीतियों के समर्थक न हों। क्योंकि चुनाव में व्यक्तियों की अपेक्षा सिद्धान्तों और नीतियों का महत्व हमेशा ज्यादा है। इसलिये विविध सिद्धान्तों और नीतियों के आधार पर व्यक्ति विविध दलों या पार्टियों में विभक्त हो जाते हैं और ये पार्टियाँ ही चुनाव लड़ती हैं, और जनता के सामने इस बात की जिन्मेवारी लेती हैं कि यदि जनता ने उनकी नीति का और सिद्धान्तों का समर्थन करके उनके खड़े किये हुए व्यक्तियों को चुना तो वे शासन प्रबन्ध उन्हीं सिद्धान्तों और उसी नीति के अनुसार करेंगे। इसलिये आधुनिक जनतन्त्र का तीसरा अत्यावश्यक अंग दल या पार्टी है। जिस राज्य में सिर्फ एक ही दल हो वहां जनतन्त्र प्रणाली नहीं चल सकती। आधुनिक जनतन्त्र और फ़ासिस्ट तथा कम्युनिस्ट राज्यों की प्रणालियों में यही एक बड़ा भेद है। फ़ासिस्ट और कम्युनिस्ट राज्यों में शासन प्रबन्ध एक ही पार्टी के हाथ में है, और उस एक पार्टी के अतिरिक्त अन्य सब पार्टियाँ ग़ैर कानूनी हैं। जनतन्त्र शासन एक ऐसी प्रणाली है जिसमें इस तथ्य को स्वीकार किया जाता है कि मानव-व्यक्तियों में परस्पर मतभेद और विचारभेद स्वाभाविक और आवश्यक है, और इस स्वाभाविक भेद को मिटाने का अर्थ दिमाग़ी स्वतन्त्रता का विनाश है। क्योंकि विचारभेद स्वाभाविक है, इसलिये विभिन्न दल या पार्टियां भी स्वाभाविक और आवश्यक हैं। इसलिये जनतन्त्र प्रणाली का तीसरा अंग दलगत शासन

(Party Government) है। जो दल शासन की जिम्मेवारी लेता है—अन्य दल उसके विरोधी दल समझे जाते हैं, जो उसके कार्यों की आलोचना करते हैं, जनतन्त्र शासन में विरोधी दल की सत्ता इतनी ही आवश्यक है, जितनी शासक दल की। ज्यों ही शासक दल विरोधी दल को बिल्कुल समाप्त कर देगा त्यों ही जनतन्त्र शासन एक पार्टी का शासन या वर्गतन्त्र-शासन (Oligarchy) का रूप धारण कर लेगा जैसा कि फ़ासिस्ट और कम्युनिस्ट राष्ट्रों में है।

उपर्युक्त जनतन्त्र प्रणाली में कुछ बुराइयां भी उत्पन्न हो जाती हैं। जब तक पार्टी, जनता, प्रतिनिधि और मन्त्रिमण्डल अपनी अपनी सीमा में रहें और उसका उल्लंघन न करें, सब काम ठीक चलता है। परन्तु जब पार्टी अपनी सीमा का उल्लंघन कर जाय तो परस्पर झगड़े शुरू हो जाते हैं जिसका नतीजा यह होता है कि एक पार्टी सब को नष्ट करके अपना राज्य स्थापित कर लेती है। जनतन्त्र प्रणाली की सफलता के लिये जनता का शिक्षित होना, जनता का शासन कार्य में दिलचस्पी रखना और अपने अधिकारों की रक्षा की चिन्ता करना आवश्यक है। यदि जनता अपने अधिकारों की रक्षा के लिये चिंतित न हो तो उसकी असावधानता के कारण उसके चुने हुए प्रतिनिधि या शासकवर्ग अधिकारों का दुरुपयोग करने लगते हैं और धीरे-धीरे जनता को अधिकारों से वञ्चित कर देते हैं। जहां प्रतिनिधि

सभा शासन की जिम्मेवारी को महसूस न कर, वहां वह व्यर्थ के लम्बे वाद विवाद में समय खो देती है। आवश्यक और अनावश्यक में भेद नहीं कर सकती। गौण प्रश्नों को अनावश्यक महत्व देकर मतभेद को बढ़ा लेती है। ऐसे प्रतिनिधियों की उपस्थिति में मन्त्रिमण्डल बार बार बदलते रहते हैं, और शासन प्रबन्ध में स्थिरता नहीं आने पाती। मन्त्रिमण्डल या शासक वर्ग यदि जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व को न समझता हो तो वह उन सिद्धान्तों को अधिकारारूढ़ होकर त्याग देता है जिनके आधार पर जनता ने उसे चुना है, और अधिकारारूढ़ रहने के लिये अपने सिद्धान्तों को शिथिल कर देता है। जिस देश या राष्ट्र में जिस अंश तक जनतन्त्र शासन के ये चार अंग भलीभांति कार्य कर रहे हैं उसी अंश तक वहां जनतन्त्र प्रणाली को सफलता प्राप्त हो रही है।

शासन विधान

यह जनतन्त्र शासन का युग है। इस लिये संसार के अधिकांश देशों में जनतन्त्र सिद्धान्तों पर शासन होता है। बादशाहतें और राजतन्त्र शासन अब करीब करीब सारी दुनियां से उठ चुके हैं। इसलिए उसके ज़िक्र की यहां ज़रूरत नहीं। परन्तु वहां भी व्यवहार में सिद्धान्तों का पालन किसी देश में कम, कहीं ज्यादा है। शासन विधान या शासन की जो प्रणालियां प्रचलित

हैं, उनमें भी इसी लिये भेद है। परन्तु मूलभूत सिद्धान्त उन सब प्रणालियों के एक से हैं। सब देशों की शासन प्रणालियों और विधानों का जिक्र करना तो यहाँ कठिन है, और आवश्यक भी है। यहाँ हम चार जनतन्त्र देशों की प्रणाली का, जिन्हें जनतन्त्र प्रणाली की मिसाल कहा जा सकता है, संक्षेप से वर्णन करेंगे। परन्तु सामान्य बातें और भी समझ लेनी जरूरी हैं।

जनता के मौलिक अधिकार—प्रायः प्रत्येक जनतन्त्र विधान में जनता के मौलिक अधिकारों यथा भाषण स्वतन्त्र्य, धार्मिक स्वतन्त्रता, प्रेम की स्वतन्त्रता जलसे और सभाएं करने की आज़ादी आदि की घोषणा की जाती है। जनता की इस आज़ादी में सरकारें हस्ताक्षेप न कर सकें, इसलिए इस घोषणा को विधान में दर्ज कर दिया जाता है।

दो हाउस—व्यवस्थापिका सभाओं के कहीं दो हाउस होते हैं और कहीं एक। नीचे का हाउस हमेशा जनता द्वारा निर्वाचित होता है और इसलिये उसके अधिकार भी अधिक होते हैं। ऊपर के हाउस में कहीं सदस्य निर्वाचित और कहीं नामज़द होते हैं। अर्थ नीति और आयव्यय सम्बन्धी प्रश्नों में प्रायः सर्वत्र निचले हाउस का निर्णय अन्तिम होता है।

मताधिकार—जनतन्त्र शासन में प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के मताधिकार मिलना आवश्यक है और ऐसा कई जगह है भी। परन्तु बहुत जगह अभी मताधिकार के सम्बन्ध

में कई तरह की शर्तें हैं और जो लोग शर्तों को पूरा नहीं कर सकते वे मताधिकार से वंचित रहते हैं। ये शर्तें जायदाद की, टैक्स की अथवा शिक्षा-सम्बन्धी होती हैं। इस हद तक हम इस शासन को पूर्णतया जनतन्त्र या जनता का शासन नहीं कह सकते।

गुप्तमत—यह आवश्यक है कि मत हमेशा गुप्त रीति से लिया जाय। क्योंकि सब के सामने मत देने में निर्वाचक पर कई प्रकार के प्रभाव पड़ते रहते हैं और वह अपनी राय का बेखटके इस्तेमाल नहीं कर सकता।

ग्रेट ब्रिटेन का शासन

ग्रेट ब्रिटन के शासन को "मर्यादित राजतन्त्र" (Limited Monarchy) कह सकते हैं, जहां शासन तो राजा के नाम से होता है परन्तु उस के अधिकार मर्यादित हैं। उस के सलाहकार जनता की चुनी हुई व्यवस्थापिका सभा पार्लियामैंट के नेता होते हैं, और वह अपनी सलाह के बिना कोई काम नहीं कर सकता, पार्लियामैंट की किसी इच्छा की अवहेलना नहीं कर सकता।

राजा वंशानुगत होता है। सिर्फ प्रोटेस्टेन्ट मत को मानने वाला व्यक्ति ही राजा बन सकता है। जब तक उत्तराधिकारी पुरुष विद्यमान हो, स्त्री गद्दी पर नहीं बैठ सकती। पार्लियामैंट जब कोई कानून पास करती है तो उसे राजा के पास स्वीकृति के लिये पेश किया जाता है। राजा की स्वीकृति एक रिवाज मात्र है क्योंकि प्राय: वह कभी पार्लियामैंट की इच्छा के विरुद्ध नहीं जाता परन्तु उसे वैसा

करने का अधिकार तो है क्योंकि कानूनी तौरपर उसके अधिकारों पर कोई सीमा या मर्यादा नहीं। वह कानून से ऊपर है, उसका व्यक्तित्व सब कानूनी बन्धनोंसे आज़ाद है, उस पर वैय्यक्तिक रूप से क़ोई मुकद्दमा नहीं चल सकता। उसकी मोटरकार पर कोई नंबर नहीं होता और उसकी रफ़्तार पर भी कोई पाबन्दी नहीं है। फिर भी उसे पार्लियामैंट की बात माननी होती है। यदि वह नहीं मानता तो उस के मन्त्री, जो पार्लियामैंट के प्रतिनिधि हैं त्यागपत्र दे जाँयगे - वह जिसे भी मन्त्री बनायेगा उसे पार्लियामैंट का सहयोग प्राप्त नहीं होगा। इतना ही नहीं, पार्लियामैंट राज्य का खर्चा चलाने के लिये राजा को एक पाई भी नहीं देगी। जब तक राजा पार्लियामैंट की स्वीकृति न प्राप्त करले तब तक किसी से टैक्स के रूप में एक कोड़ी वसूल नहीं कर सकता। पार्लियामैंट के ये अधिकारी एक लम्बे अर्से में एक-एक करके स्थापित होते गये हैं। इस लिये राजा कभी पार्लियामैंट से झगड़ा मोल नहीं लेता। ज्यादा से ज्यादा वह पार्लियामैंट को तोड़ कर नया चुनाव करा सकता है। पर आख़िर जो भी नये प्रतिनिधि पार्लियामैंट में आयेंगे, उनकी बात उसे माननी ही होगी। इस लिये उस के अधिकार मर्यादित हैं और पार्लियामैंट के अधिकार अमर्यादित। पार्लियामैंट जो चाहे कानून पास कर सकती है।

पार्लियामैंट के दो हिस्से हैं एक 'हाउस आफ़ कामन्स' कहलाता है और दूसरा हाउस आफ़ लार्ड्स'। हाउस आफ़ लार्ड्स' में संभ्रान्त व्यक्ति हैं और उन सदस्यों का सन्मान

ज्यादा है पर उन के अधिकार कुछ नहीं। अधिकार 'हाउस आफ़ कामन्स' के पास हैं। कोई प्रस्ताव हाउस आफ़ कामन्स में पास होने के बाद 'हाउस आफ़ लार्डस' में भेजा जाता है। बजट और खर्चे के बिल 'हाउस आफ़ लार्डस' पास करे या न करे, राजा की स्वीकृति मिलते ही वे पास समझे जाते हैं। बाकी बिल यदि 'हाउस आफ़ लार्डस' रद्द कर दे; परन्तु हाउस आफ़ कामन्स यदि लगातार तीन बार उन्हें पास कर दे तो वे पास हो जाते हैं। इसलिये हाउस आफ़ लार्डस के हाथ में सिर्फ़ इतना है कि किसी प्रस्ताव पर विचार को लम्बा करदे और कुछ नहीं। 'हाउस आफ़ लार्डस' के सदस्यों को राजा नामज़द करता है या वंशानुगत होते हैं। परन्तु यह सब भी राजा मन्त्रिमण्डल की अनुमति से करता है। इनकी इस समय संख्या ७४० है। 'हाउस आफ़ कामन्स' में ६०५ सदस्य हैं। जिन्हें जनता चुनती है। ७० हज़ार की आबादी के पीछे एक मैंबर होता है चुनाव का हक प्रत्येक बालिग़ (जिस की आयु २१ साल की हो) पुरुष और स्त्री को है। हाउस आफ़ कमान्स के प्रत्येक सदस्य को पहले सालाना ४०० पौंड मिलते थे। परन्तु जुलाई १६३७ से यह बढ़ा कर ६०० पौंड सालाना कर दिया गया है। 'हाउस' में कई बहुत पुराने रिवाज भी चलते आ रहे हैं। अधिवेशन के शुरू होने से पहले पादरी प्रार्थना करता है।

'हाउस आफ़ कामन्स' में बहुमत का नेता प्रधान मन्त्री

बनता है। वही बाकी मन्त्रियों का चुनाव करता है और राजा इस मन्त्रिमण्डल को मंजूर करता है। राजा को ओर से तमाम शासन की जिम्मेवारी मन्त्रिमण्डल की होती है, वह पार्लियामैंट के सामने उत्तरदाता है। पार्लियामैंट जब तक उसका बहुमत रहे मन्त्रिमण्डल क़ायम रहता है। बहुमत न रहने की अवस्था में वह पार्लियामैंट से अपनी बात नहीं मना सकता और उसे त्याग-पत्र दे देना पड़ता है—या राजा को कह कर वह पार्लियामैंट का नया चुनाव करा सकता है। परन्तु उसकी सत्ता पार्लियामैंट के विश्वास पर ही निर्भर है। इस समय सन् १६३८ में मन्त्रिमण्डल या केबिनेट में २१ मन्त्री हैं। यह संख्या आवश्यकतानुसार घटती बढ़ती रहती है।

वेतन—१६३० में वर्तमान राजा के कुल व्यय के लिये पार्लियामैंट ने ४ लाख १० हज़ार पौंड वार्षिक नियम किये थे, जिसमें से १ लाख दस हज़ार उसके निजी खर्च के लिए और बाकी राज-महल के कार्यकर्त्ताओं के वेतन आदि के लिए। प्रधान-मन्त्री को दस हज़ार पौंड प्रतिवर्ष मिलते हैं।

फ्रांस का शासन

फ्रांस में सन् १८७० में जनता ने नैपोलियन तृतीय को गद्दी से उतार कर लोकतन्त्र शासन स्थापित किया। शासन का सब अधिकार जनता की निर्वाचित्त व्यवस्थापिका सभा के हाथ में है जिसके दो हिस्से हैं। 'सीनेट' और 'चेम्बर आफ़ डेपुटीज़'।

'सीनेट' और चेम्बर' इकट्ठे बैठकर बहुमत से सात साल के लिए राष्ट्र के 'प्रेज़िडेण्ट' का चुनाव करते हैं। उसके कर्तव्य उसी प्रकार के हैं जैसे—इङ्गलैण्ड में राजा के। प्रेज़िडेण्ट ही विदेशों से संधियां करता है, पर स्वयं युद्धघोषणा नहीं कर सकता। नाहीं फ्रांस की सीमासम्बन्धी कोई सन्धि कर सकता है जब तक व्यवस्थापिका सभा की अनुमति न ले ले। प्रेज़िडेण्ट की प्रत्येक आज्ञा के साथ किसी न किसी मन्त्री के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं। प्रेज़िडेण्ट 'चेम्बर आफ़ डेपुटीज़' को तोड़ कर नया चुनाव कर सकता है। पर सीनेट की मंजूरी लिए बगैर नहीं। सीनेट को भी वह सीनेट की राय से ही भङ्ग कर सकता है। हम देख चुके हैं कि इङ्गलैंड के राजा को पार्लियामैंट भङ्ग करने का पूरा अधिकार है—पर हमेशा 'हाउस आफ़ कामन्स' ही भङ्ग होता है। हाउस आफ़ लार्डस कभी भङ्ग नहीं होता।

प्रेज़िडेण्ट प्रधान मन्त्री को नियुक्त करता है जो अपना मन्त्री मण्डल चुन लेता है जिसे प्रेज़िडेण्ट मञ्जूर कर लेता है। मन्त्रियों की संख्या बदलती रहती है। मन्त्री प्रायः सीनेट या चेम्बर में से ही होते हैं। पर यह कोई आवश्यक नहीं। इङ्गलैंड में यह जरूरी है। फ्रांस में मन्त्रीमण्डल अपनी सामान्य नीति के लिए व्यवस्थापिका सभा के प्रति जिम्मेवार है, परन्तु मन्त्री अपने कार्यों के लिये वैयक्तिक रूप से जिम्मेवार हैं। इङ्गलैंड में मन्त्रीमण्डल सामूहिक रूप से जिम्मेवार है। एक मंत्री की ग़लती से

सारा मन्त्रीमण्डल भङ्ग हो जाता है। पिछले दिनों इङ्गलैंड में भी ऐसे उदाहरण हुए हैं, जब मन्त्री खुद इस्तीफ़ा देकर मन्त्री-मण्डल को कठिनाई से बचा देते हैं।

'चेम्बर आफ़ डेपुटीज़' चार साल के लिए चुना जाता है। प्रत्येक बालग़ (२१ साल से ऊपर) वोट दे सकता है। परन्तु डिपुटीज़ वही बन सकते हैं, जिनकी आयु २५ वर्ष से ऊपर हो और फ्रान्स के वासी हों। इस समय चेम्बर में ६१८ डेपुटीज़ हैं।

सीनेट में ३१४ सदस्य हैं—जो नौ साल के लिए चुने जाते हैं। ४० साल से ऊपर की उमर के व्यक्ति ही सीनेट के सदस्य बन सकते हैं। इनका चुनाव परोक्ष रीति से होता है। राज्यच्युत घरानों का कोई राजकुमार व्यवस्थापिका सभा का सदस्य नहीं बन सकता।

सीनेट और डेपुटियों को ६२,००० फ्रांक प्रतिवर्ष मिलते हैं। दोनों सदस्यों को फ्रांस की सीमाओं के अन्दर कहीं भी रेल में मुफ्त ले जाया जाता है—प्रेज़िडेण्ट को १८,००,००० फ्रांक वार्षिक मिलते हैं। इसके अतिरिक्त इतना ही अपने खर्च के लिए भी मिलता है।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका—अमेरिका भी पहले इङ्गलैंड का एक उपनिवेश था। सन् १७७६ में अमेरिका ने अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा की। १७८२ में इंग्लैण्ड ने उसकी स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली।

संयुक्तराष्ट्र अमेरिका ४८ स्वतन्त्र राज्यों का एक संघ है। ये राज्य अपने आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्र हैं। उनकी अपनी व्यवस्थापिका सभाएं और चुने हुए 'गवर्नर' (प्रेज़िडेन्ट की तरह) हैं। इन राज्यों के लिये यह ज़रूरी है कि इनका शासन लोकतन्त्र के सिद्धान्तों पर हो। इन सब राज्यों का संघ होने से ही अमेरिका को 'संयुक्त राष्ट्र' अमेरिका कहते हैं।

संयुक्त राष्ट्र के विधान में यह विशेषता है कि शासन के तीनों अङ्ग—शासक वर्ग, व्यवस्थापिका सभा और न्यायालय भली भाँति विभाजित हैं, और विधान द्वारा हरएक की अधिकार सीमाएं और कर्तव्य निश्चित कर दिये गये हैं।

शासन कार्य चलाने की जिम्मेवारी प्रेज़िडेन्ट पर है। जिसे चार साल के लिये चुना जाता है। चुनाव प्रत्यक्ष नहीं परोक्ष होता है—अर्थात् जनता प्रेज़िडेन्ट को स्वयं नहीं चुनती, बल्कि संयुक्त राज्य के प्रत्येक राज्य की जनता अपने प्रतिनिधि चुनती है जो बैठकर प्रेज़िडेन्ट और वाइस प्रेज़िडेन्ट का चुनाव करते हैं। प्रेज़िडेन्ट बनने के लिये यह आवश्यक है कि वह व्यक्ति संयुक्त राष्ट्र का नागरिक हो। कम से कम १४ साल से वहाँ रह रहा हो, कम से कम ३५ वर्ष की आयु हो। प्रेज़िडेन्ट के साथ ही वाइस प्रेज़िडेन्ट का चुनाव भी हो जाता है और प्रेज़िडेन्ट के त्यागपत्र या मृत्यु आदि द्वारा स्थान रिक्त होने पर वाइसप्रेज़िडेन्ट उतने काल के लिये, जितना शेष रह गया हो, उसके स्थान की पूर्ति करता है। प्रेज़िडेन्ट को ७५ हज़ार डालर प्रति वर्ष वेतन मिलता

है और २५ हज़ार डालर सफ़र खर्च आदि के लिये मिलता है। वाइसप्रेज़िडेन्ट को १५ हज़ार डालर वेतन।

सेना का अध्यक्ष प्रेज़िडेन्ट है। वाइस प्रेज़िडेन्ट सीनेट का प्रेज़िडेन्ट भी है। प्रेज़िडेन्ट व्यवस्थापिका सभा के पास किये हुए कानून पुनर्विचार के लिये वापस भेज सकता है। उस हालतमें यह आवश्यक हो जाता है कि वह कानून तभी पास समझा जाय अगर दोनों हाउस $\frac{2}{3}$ बहुमत से उसे फिर पास करें। प्रेज़िडेन्ट विदेशों से संधियां सीनेट की स्वीकृति लेकर कर सकता है। सीनेट की सलाह से सबसे बड़ी अदालत 'सुप्रीम कोर्ट' के लिये जज मुकर्रर करता है। वह किसी की सज़ा माफ़ कर सकता है। अमेरिका के प्रेज़िडेन्ट की ताकतें बहुत ज्यादा हैं। शासन की सम्पूर्ण ज़िम्मेवारी उसकी है, और उसका मंत्रिमण्डल नहीं, बल्कि वह खुद ज़िम्मेवार है। दुनिया में अमेरिका के प्रेज़िडेन्ट की ताकत सबसे ज्यादा है उसके नीचे ५ लाख के करीब सिविल-सर्वेन्ट शासन की मशीन को चला रहे हैं।

प्रेज़िडेन्ट १० व्यक्तियों की एक 'केबिनेट' मुकर्रर करता है बशर्ते कि सीनेट भी उनके लिये अपनी स्वीकृति दे। शासन के प्रत्येक विभाग का एक-एक अध्यक्ष होता है। प्रत्येक मन्त्री को १५ हज़ार डालर मिलते हैं। ये मंत्री तब तक पद पर रहते हैं जब तक प्रेज़िडेन्ट का उन पर विश्वास बना रहे। मंत्रिमण्डल की कोई सामूहिक ज़िम्मेवारी नहीं है। जनता के प्रति प्रेज़िडेण्ट ही ज़िम्मेवार है।

व्यवस्थापिका सभा को "कांग्रेस" कहते हैं, जिसके दो हिस्से हैं—एक 'सीनेट' और दूसरा "हाउस आफ़ रिप्रेज़ेन्टेटिव्स" या प्रतिनिधि सभा। सीनेट में प्रत्येक राज्य के दो सदस्य होते हैं जिन्हें ६ साल के लिये प्रत्येक राज्य की जनता प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुनती है। सीनेटर कम से कम ६ वर्ष से संयुक्त राष्ट्र का नागरिक रहा हो—३० वर्ष से कम आयु का न हो और उसी राज्य में रहता हो जहां से वह चुनाव के लिये खड़ा होना चाहता है। विदेशी संधियों के लिये सीनेट की स्वीकृति आवश्यक है। प्रेज़िडेण्ट ऊँचे ओहदों की जो नियुक्तियां करता है उनमें भी सीनेट दख़ल दे सकती है और ख़ास व्यक्तियों को पदच्युत कर सकती है। "हाउस आफ रिप्रेज़ेन्टेटिव्स" जिन व्यक्तियों पर अभियोग लगाये, उनकी अपील सुन सकती है।

"हाउस आफ़ रिप्रेज़ेन्टेटिव्स" के सदस्य दो साल के के लिये चुने जाते हैं। चुनाव का हक उन सब लोगों को है। जिन्हें अपने राज्य की व्यवस्थापिका सभा के चुनावका हक प्राप्त है। यह हक प्रत्येक राज्य में जुदा-जुदा है। परन्तु निर्वाचक २१ साल की आयु का होना चाहिए, वहीं एक नियत काल से निवास कर रहा हो—(काल की अवधि कहीं कम है और कहीं ज्यादा है) किसी किसी राज्य में विशेष टैक्स देने की भी शर्त है। परन्तु विधान के अनुसार जाति, रंग या लिंग (Sex) भेद के आधारपर कोई भेद भाव नहीं रखा जा सकता। १६२० के

बाद से स्त्रियों को भी वे सब अधिकार प्राप्त हो गये हैं जो पुरुषों को प्राप्त हैं। किस राज्य से कितने प्रतिनिधि आवें यह वहां की दश वार्षिक जन संख्या को देख कर निश्चित किया जाता है। इस समय कुल ४३५ सदस्य हैं। प्रतिनिधि की आयु कम से कम २५ साल होनी चाहिये। सात साल से संयुक्तराष्ट्र का नागरिक रहा हो। जहां से खड़ा होता है, उसी राज्य का निवासी हो।

सीनेटर और प्रतिनिधि का वेतन १० हज़ार डालर वार्षिक है।

विधान में परिवर्तन करने के लिये यह आवश्यक है कि परिवर्तन का प्रस्ताव कांग्रेस में दो तिहाई बहुमत से पास हो और फिर तीन चौथाई (अर्थात ३६) राज्यों की व्यवस्थापिका सभाएं उसे स्वीकृत करलें। व्यवहार में अन्य देशों की अपेक्षा अमेरिका में विधान को बदलना ज़्यादा कठिन है।

स्विटज़रलैंड

स्विट्ज़रलैंड का लोक तन्त्र बहुत पुराना है। प्रेज़िडेण्ट का चुनाव हर साल होता है। फ्रांस की तरह व्यवस्थापिका सभा के दोनों हाउस मिल कर प्रेज़िडेंट चुनते हैं।

व्यवस्थापिका सभा या 'फेडरल एसेम्बली' के एक हाउस 'स्टेंडेराट' (Council of State) और दूसरी को 'नैशनलराट' (National Council) कहते हैं। पहली में ४४ सदस्य हैं।

जिन्हें संघ के २२ 'कैण्टन' या प्रदेश चुनते हैं। ये कैण्टन अपने आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्र हैं। इन सदस्यों का वेतन भी ये कैण्टन अपनी अपनी हैसियत के मुताबिक देते हैं। उनका कार्य काल भी कैण्टन की मर्ज़ी पर है। नैशनलाट में १८७ प्रतिनिधि स्विट्ज़रलैंड की जनता के हैं। वे चार साल के लिये चुने जाते हैं, २२ हज़ार व्यक्तियों के पीछे एक प्रतिनिधि चुना जाता है। सदस्यों को ३० फ्रांक प्रतिदिनके हिसाबसे उन दिनों के लिये वेतन मिलता है, जिन दिनों में वे उपस्थित रहे हों। चुनाव का हक प्रत्येक बालिग़ को है, जिसकी उमर २१ साल से ऊपर हो। प्रत्येक वोटर प्रतिनिधि भी बन सकता है। फेडरेल असेम्बली के पास किए हुए कानून के सम्बन्ध में यदि ३० हज़ार व्यक्ति या ८ कैंटन यह कहें कि उस पर जनता की आम राय ली जावे तो आम राय ली जाती है। प्रत्येक व्यक्ति 'हां' या 'न, में जवाब देता है। बहुमत से निर्णय हो जाता है। इसे "रिफ्रेंडम" कहते हैं।

फेडरल एसेम्बली एक फेडरल कौंसिल [बुंडेसराट] का निर्वाचन करती है। यह चार साल के लिए होता है। सात सदस्य चुने जाते हैं। यह फेडरल कौंसिल ही शासन का सब कार्य चलाती है। यही कैबिनेट है। परन्तु इसका सामूहिक उत्तरदायित्व नहीं है। स्विट्जरलैंड का मन्त्रिमण्डल किसी ख़ास पार्टी का भी नहीं होता। प्रेज़िडेण्ट और मन्त्रिमण्डल बाकी देशों की अपेक्षा कमज़ोर हैं और सारी ताकत फेडरल ऐसेम्बली के हाथ में है।

सोशलिज़्म और कम्युनिज़्म
या
समाजवाद और साम्यवाद

समाजवाद और साम्यवाद की आजकल बहुत चर्चा है। साम्यवाद या कम्युनिज्म का जन्मदाता कार्लमार्क्स (१८१८-१८८३) था। परन्तु समाजवाद या सोशलिज्म कार्लमार्क्स से पहले भी था, और उस का जन्मदाता राबर्ट ओवेन (१७७१-१८५८) था, जिस ने १८३० के आस पास पहले पहल 'समाजवाद" शब्द का प्रयोग किया। परन्तु आधुनिक समाजवाद या "वैज्ञानिक समाजवाद" का सब से अधिक प्रचार फ्रेडरिक ऐंजेल और कार्लमार्क्स ने किया। १८६७ में मार्क्स ने अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ "कैपिटल" (पूंजी) लिखा। इस ग्रन्थ ने संसार के विचारों में अभूतपूर्व क्रान्ति की। यह एक वैज्ञानिक ग्रन्थ था और इस में समाजवाद के विचार बड़े तर्क के साथ समझाये गये थे। मार्क्स के विचार मध्य यूरोप में, विशेष रूप से जर्मनी और आस्ट्रिया में फैले और वहां वह 'सोशल डिमाक्रेसी' (समाजवादी लोकसत्ता) के नाम से मशहूर हुआ।

इस समय समाजवादियों के कई सम्प्रदाय बन चुके हैं। इस बात में तो सभी सहमत हैं कि उत्पत्ति और बंटवारे के साधनों अर्थात् खानों, कारखानों, रेलों और बैंकों आदि पर राज्य का

अधिकार होना चाहिए और उन्हें किसी व्यक्ति की निजी जायदाद न बनने देना चाहिए। क्योंकि व्यक्ति अपने लाभ के लिए इन्हें इस्तेमाल करते हैं। नतीजा यह होता है कि—इन के मालिक तो मालामाल हो कर मौज़ लूटते हैं और बाकी सब लोग इन की मज़दूरी करते हैं और पेट के लिए इन के गुलाम बन जाते हैं। इसमें मज़दूर मालिक के झगड़े बढ़ते हैं, दोनों वर्गों में युद्ध होता है। यदि इन वस्तुओंपर मे स्वामित्व के अधिकार छीन लिए जांय और राज्य ही इन का मालिक होजाय, तो कोई मालक न रह कर सब श्रमी हो जांयगें—और वर्ग या श्रेणियां न रहने से वर्ग युद्ध का अन्त हो जायगा। समाजवाद की मूल कल्पना यही है।

अब सवाल यह उठता है कि इस उद्देश्य पर पहुँचा कैसे जाय। रास्ता क्या हो? इस विषय पर कई दल हो गए हैं। एक दल का विचार है कि यह काम जनता में आन्दोलन करने से, राज्य की व्यवस्थापिका सभाओं में अपना बहुमत बनाकर धीरे-धीरे सुधार करते जाने से हो जायगा। इंग्लैण्ड में लोग अधिकांश इसी विचार के हैं। दूसरे दल ऐसे हैं जिन का पार्लियामैंटों पर विश्वास नहीं! उन का कहना है कि पार्लियामैंटों और शासन संस्थाओंपर पूंजीपतियों का पूरा कब्ज़ा है इसलिये वहां कामयाब होना असम्भव है। अतः यह दल संसार के मज़दूरों की संगठित क्रांति में विश्वास रखता है। इसलिए पहला दल सुधार-वादी और दूसरा कार्यकारी कहलाता है। दूसरे दल में भी दो भेद हैं। एक तरफ रूस के साम्यवादी कम्युनिस्ट हैं और दूसरी

तरफ़ जर्मनी आस्ट्रिया आदि देशों के लोक सभा को मानने वालेसमाजवादी (Socialist) हैं। महायुद्ध के बाद लोक-सभावादी, समाज वादी क्रान्ति करने में असफल रहे और युद्ध के बाद उजड़ते हुए राजसिंहासनों पर अधिकार नहीं कर सके, इस लिये संसार की नज़रों में इनका आदर कम हो गया। दूसरी तरफ़ रूस में भी लोक सत्ता वादी थे—परन्तु लेनिन ने अपने बोल्शेविक दल का सङ्गठन ऐसी मज़बूती के सांथ किया हुआ था कि वक्त पर उसकी सङ्गठन शक्ति काम आयी और आसानी के साथ इस दल ने रूस शासन पर अधिकार कर लिया।

मार्क्स ने समाजवाद की वैज्ञानिक व्याख्या की। उसने इतिहास के गहरे अध्ययन के साथ यह सिद्ध किया कि भिन्न-भिन्न समयों में जीवन सामग्री जुटाने और दौलत पैदा करने के तरीके जैसे-जैसे बदलते हैं उसी के अनुसार समाज की रचना बदलती रहती है। दौलत पैदा करने के साधनों और तरीकों के अनुसार लोगों की जिन्दगी हो जाती है और उसी के अनुसार उन की रचना, उनके कानून, रीति रिवाज और विचार भी बदल जाते हैं। साथ ही मार्क्स ने बतलाया कि दौलत पैदा करने के साधनों पर जिस वर्ग का अधिकार रहता है, समाज में उसी की प्रधानता रहती है। वह दूसरे वर्ग की मेहनत का अनुचित लाभ उठाता है, और मेहनत करने वाले को अपनी मेहनत का पूरा बदला नहीं मिलता। इस लिये एक वर्ग शोषित वर्ग, युद्ध या श्रेणी संघर्ष लगा

रहता है। यह श्रेणी संघर्ष मानव जाति की उन्नति में बाधक है इसलिये उसका अन्त इस तरह से हो सकता है कि उत्पत्ति के साधनों पर सारे समाज का—या उसकी ओर से राज्य का—अधिकार रहे। इतिहास की इस व्याख्या को "इतिहास की भौतिक व्याख्या" (Matenalistic interpretation of History) कहते हैं। मार्क्स ने सारे इतिहास की सैकड़ों मिसालें देकर इस सिद्धान्त की व्याख्या की। श्रेणी संघर्ष कोई आज की चीज़ नहीं, वह किसीका पैदा किया हुआ नहीं, न किसीके पैदा किये से यह पैदा हो सकता है। यह वर्तमान समाज के आर्थिक संगठन और बँटवारे का अवश्यम्भावी परिणाम है और अनिवार्य है। इसमें किसी व्यक्ति का दोष नहीं—न यही ज़रूरी है कि कोई जान बूझ कर लूटता है। यह तो प्रणाली का दोष है।

मार्क्सवाद का आधुनिक युग में सब से बड़ा व्याख्याकार लेनिन हुआ। उसने इसे व्यावहारिक रूप भी दिया। रूस में साम्यवादियों की क्रान्ति सफल होने के कारण रूसी साम्यवादियों (Communists) के हाथमें ही इस आन्दोलनका नेतृत्व आ गया और रूस के साम्यवादी दल के सिद्धान्त ही असली साम्यवाद समझे जाने लगे।

बोल्शेविज़्म— रूस में इस सफलता का श्रेय जैसे ऊपर कहा जा चुका है लेनिन के बोल्शेविक दल को है। इसलिये कई बार साम्यवाद को 'बोल्शेविज्म' का नाम दिया जाता है।

रूस के लोकसत्तावादी समाजवादियों की एक सभा १९०३ में ब्रसेल्स में हुई। उसमें इस विषय पर बहस छिड़ गई कि दल में मैंबरों की भर्ती का दरवाज़ा बिलकुल खुला रखा जाय और हर कोई उसमें ले लिया जाय या विशेष प्रकार के व्यक्ति ही दल में लिये जांय लेनिन का विचार था कि—दल में बिना सोचे समझे भर्ती करते जाने का कोई लाभ नहीं। वही व्यक्ति लिए जांय जो क्रान्ति में विश्वास रखते हों और स्वयं क्रान्ति में हिस्सा लेने को तैयार हों। साथ ही ऐसे सदस्यों पर नियन्त्रण बहुत कठोर रहना चाहिए ताकि वक्त पर वे परीक्षा में पूरे उतरें। पार्टी की खुली कांग्रेस में लेनिन का पक्ष हार गया पर कमेटी में उसका बहुमत हो गया। इसलिए उसका दल "बोल्शेविक दल" (बहुमतवाला दल) कहलाने लगा। उपर्युक्त मतभेद का कारण यह था कि लेनिन का विचार था कि साम्य-वाद को लाने का बेहतर तरीका यह है कि श्रमीवर्ग (प्रोलेटेरियट) का एकाधिपत्य (डिक्टेटरशिप) कायम की जाय। यह ज़रूरी नहीं कि क्रान्ति के लिए उस वक्त की इन्तज़ार की जाय जब तक कि मज़दूर और किसान श्रमीवर्ग साम्यवाद के सिद्धान्तों को समझ कर क्रान्ति के लिए तैयार हो लें। शासकवर्ग कभी ऐसा अवसर न आने देंगे। इसलिए सशस्त्र क्रान्ति द्वारा पहले श्रमियों का प्रभुत्व कायम किया जाय और फिर शासन अपने हाथ में लेकर वह हालात पैदा किये जांय जिनसे पूर्ण साम्यवाद सम्भव हो सके। इस परिवर्तन काल में मध्यवर्ग के

लोगों और छोटे ज़मींदारों को कुछ रियायतें भी देनी पड़ें तो दे देनी चाहिएँ।

रूस के वर्तमान साम्यवादी नेताओं के कथनानुसार अभी रूस में समाजवाद या सोशलिज़्म आया है साम्यवाद या कम्युनिज़्म नहीं। समाजवाद साम्यवाद की सीढ़ी है। स्टालिन ने दोनों में मतभेद इस प्रकार बतलाया है कि समाजवाद या सोशलिज़्म में उत्पत्ति के बड़े बड़े साधन राज्य के अधिकार में होते हैं, पर छोटे पूञ्जीपति और छोटे ज़मींदार भी कुछ रह जाते हैं। मेहनत हर कोई अपनी शक्ति भर करता है और मेहनत की मज़दूरी हर किसी को उसके काम की मात्रा और किस्म के अनुसार मिलती है। पर साम्यवाद या कम्युनिज़्म में सम्पूर्ण सम्पत्ति राष्ट्र की है, हर कोई मेहनत करता है, पर उसे मेहनत के बदले वेतन नहीं मिलता बल्कि जितनी उसकी आवश्यकता हो उसके अनुसार मिलता है।

रूस में अभी सब सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण नहीं हुआ—भूमि पर अभी कुछ व्यक्तियों का और कुछ जगह किसानसंघों (Collectives) का स्वामित्व है। परन्तु सामूहिक सुखों में बहुत वृद्धि हुई है।

'कम्युनिस्ट पार्टी'—बोल्शेविक पार्टी का नाम अब कम्युनिस्ट पार्टी है। १६३७ में कई लोग पार्टी में से निकाले गए। अब हाल ही में पार्टी के सङ्गठन को अधिक लोक सत्तात्मक

बनाया गया है। पार्टी के चुनावों में भी गुप्त रीति से वोट लेने का तरीका जारी किया गया है। इस समय पार्टी के १३० लाख के लगभग सदस्य हैं।

सोविएट यूनियन—इस राज्य का पूरा नाम "यूनियन आफ़ सोविएट सोशलिस्ट रिपब्लिक" है जिसका अंग्रेज़ी में संक्षेप करके 'यू० एस० एस० आर०' भी कहते हैं। संसार में यही एक राज्यहै जिसमें श्रमी श्रेणी का एकाधिपत्य (Dictatorship of Proletariot) कायम है।

५ दिसम्बर सन् १९३६ को नया विधान जारी हुआ जिसे "स्टालिन का विधान" कहते हैं।

यह एक 'संघ राज्य' (फेडरेशन) है, जिसमें अपनी मर्ज़ी से ११ स्वतन्त्र राज्य "सोविएट सोशलिस्ट रिपब्लिक्स" (पंचायती सोशलिस्ट लोकतन्त्र राज्य) सम्मिलित हैं, जिन्हें 'यूनियन' या संघ से जुदा होने की पूरी आज़ादी है, उनके अपने विधान हैं, पर वे भी संघ के विधान की ही तरह के हैं।

विधान की पहली ही धारा में घोषणा की गयी है कि 'यूनियन' मज़दूरों और किसानों की सोशलिस्ट हकूमत है। बारहवीं धारा में लिखा है कि प्रत्येक नागरिक का फ़र्ज़ है कि वह मेहनत करे क्योंकि यूनियन का सिद्धान्त है कि "जो मेहनत नहीं करेगा, उसे खाने को भी नहीं मिलेगा।"

व्यवस्थापिका सभा को 'सुप्रीम कौंसिल' कहते हैं जिसके

दो हाउस हैं। "कौंसिल आफ़ यूनियन" और 'कौंसिल आफ़ नैशनेलिटीज़" (जातियों कीसभा) 'कौंसिल आफ़ यूनियन' का चुनाव सारी यूनियन के नागरिक करते हैं। प्रति तीन लाख की आबादी के लिये एक मैम्बर होता है। "कौंसिल आफ़ नेशनेलिटीज़" में संघ के स्वतन्त्र राज्यों (सोविएट सोशलिस्ट रिपब्लिक्स) की "सुप्रीम कौंसिलें" (वहां की व्यवस्थापिका सभाएं) अपने प्रतिनिधि भेजती हैं।

सुप्रीम कौंसिल के दोनों हाउस मिल कर एक 'कौंसिल' चुनते हैं इसे सुप्रीम कौंसिल का 'प्रिसिडियम" कहते हैं। प्रिसिडियम का अध्यक्ष, (चेयरमैन) चार उपाध्यक्ष, मन्त्री और उनके अतिरिक्त ३१ सदस्य चुने जाते हैं। अन्य देशों में जो अधिकार और कर्तव्य प्रेज़िडेन्ट या मर्यादित लोकतन्त्र में राजा के होते हैं प्रायः वही इस 'प्रिसिडियम' के हैं। वह 'सुप्रीम कौंसिल' के अधिवेशन बुलाता है, यदि दोनों हाउस एक मत न हो सकें तो उन्हें भंग करके 'सुप्रीम कौंसिल' का नया चुनाव कराता है। किसी सवाल पर जनमत संग्रह (रिफ़रेण्डम) करा सकता है। कानून विरुद्ध होने पर "कौंसिल आफ़ पीपल्स कमिस्सर्स" (मंत्रिमंडल) के फ़ैसलों और आज्ञाओं को रद्द कर सकता है, किसी व्यक्ति की सज़ा माफ़ कर सकता है, युद्ध घोषणा कर सकता है।

शासन प्रबन्ध को चलाने की ज़िम्मेवारी "कौंसिल आफ़ पीपल्स कमिसर्स" या मन्त्रिमंडल पर है जो कि 'सुप्रीम कौंसिल'

के प्रति जवाबदेह हैं। सुप्रीम कौंसिल ही इसे नियुक्त करती है। इसके आठ सदस्य होते हैं और उन्हीं में से एक अध्यक्ष चुना जाता है, पर मन्त्रिमंडल की सामूहिक ज़िम्मेवारी नहीं—हर एक वैयक्तिक रूप से 'सुप्रीम कौंसिल' को जवाबदेह है।

सबसे बड़ी अदालत 'सुप्रीम कोर्ट' का चुनाव भी सुप्रीम कौंसिल करती है।

'यूनियन कौंसिल' के चुनाव के लिये यूनियन के हर एक १८ साल या ज्यादा आयु के नागरिक को मत देने का अधिकार है। किसी जाति, धर्म, रंग, लिंग आदि का भेद नहीं। वोट गुप्त पर्चियों द्वारा लिया जाता है।

कम्युनिस्ट पार्टी—सारे शासन का प्राण कम्युनिस्ट पार्टी है। राज्य के प्रादेशिक विभागों के बराबर ही कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन की शाखाएं बनी हुई हैं। स्थानीय मैम्बर सूबे के लिये, और सूबे के सारी यूनियन के लिये प्रतिनिधि और अधिकारी चुनते हैं। सारी यूनियन की केन्द्रीय कांग्रेस "सैन्ट्रल एग्ज़ीक्यूटिव" (केन्द्रीय कार्यकारिणी) चुनती है। केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी अपने कार्य संचालन के लिये पांच मन्त्री नियुक्त करती है, जिनमें एक प्रधान मंत्री होता है। प्रधान मंत्री ही कम्युनिस्ट दल का प्रधान नेता है। पांचों मन्त्री इसी प्रकार आपस में विभाग बांट लेते हैं, जिस प्रकार 'पीपल्स कमिसर्स' या सरकारी मंत्रिमंडल ने बांटे होते हैं, और कम्युनिस्ट पार्टी के ये मन्त्री ही उस

विभाग के सरकारी मन्त्रियों का नियंत्रण और नीति निर्देश करते हैं। राज्य के प्रायः सब विभागों के अध्यक्ष कम्युनिस्ट दल के सदस्य हैं इसलिये पार्टी को उनका नियन्त्रण करने में कठिनाई नहीं होती। सोविएट शासन के प्रत्येक सरकारी विभाग की पीठ पर कम्युनिस्ट पार्टी का इसी के बराबर का विभाग बैठा हुआ है। परोक्ष रूप से सारे शासन की लगाम इस प्रकार कम्युनिस्ट दल के हाथ में है। कारखानों में, खेतों में, व्यापारी संस्थाओं में सब जगह कम्युनिस्ट दल के सदस्य फैले हुए हैं, और वे इसी प्रकार अन्दर से सब का नियंत्रण करते हैं।

इसलिये शासन विधान के रहते भी 'कम्युनिस्ट पार्टी' का ही सारे देश में एकाधिपत्य हैं। कम्युनिस्ट पार्टी की 'सैंट्रल एग्ज़ीक्यूटिव' कमेटी (केन्द्रीय कार्यकारिणी) का प्रधान मन्त्री जोज़ेफ़ स्टालिन है। इस लिये वही सारे रूस का एकाधिपति या डिक्टेटर समझा जाता है। वैसे स्टालिन के पास कोई सरकारी ओहदा नहीं। सिर्फ़ वह 'प्रिसिडियम' का एक मामूली सदस्य है।

पार्टी का नियन्त्रण बहुत कठोर है। लेनिन ने शुरू से ही ऐसा रखा था। पार्टी के अन्दर कोई मैम्बर अपनी जुदा पार्टी या धड़ा नहीं बना सकता। बहस में हर कोई अपनी स्वतन्त्र राय पेश कर सकता है, पर फैसला हो जाने के बाद सब को पार्टी का फैसला मानना होता है। पार्टी के असूलों और नियमों के प्रति वफ़ादार साबित न होने पर मैम्बर को पार्टी से निकाल दिया जाता है।

सोविएट यूनियन के विधान में कुछ और भी बातें हैं जो अन्य देशों के विधानों में नहीं हैं। विधान में लिखा है कि प्रत्येक नागरिक का अधिकार है कि राज्य उसे काम करने के लिये दे। विधान इस बात की गारंटी करता है कि प्रत्येक व्यक्ति को मुनासिब वेतन पर काम दिया जायगा। इसलिये रूस में बेकारी नहीं। आराम करने का भी प्रत्येक नागरिक को अधिकार है। इसके अनुसार काम के घण्टे कम कर दिये गये हैं और हर साल सवेतन अवकाश देने का नियम है। श्रमियों के आराम के लिये राज्य ने स्वास्थ्यगृह (Sanitorium) विश्रान्तिगृह तथा क्लबें बनायी हैं। विधान के अनुसार बुढ़ापे, बीमारी, और अशक्त हो जाने की अवस्था में राज्य से जीवन निर्वाह प्राप्त करने का हर कोई हकदार है। प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य और निश्शुल्क है। परन्तु उच्च शिक्षा देने की जिम्मेवारी भी राज्य पर है। स्त्रियों और पुरुषों के अधिकार बराबर हैं। नागरिकों को भाषण देने, प्रेस, सभा करने, जलूस निकालने और धार्मिक कार्यों में स्वतन्त्रता है।

यह ठीक है कि अभी सोविएट शासन अपने साम्यवादी आदर्श तक नहीं पहुँचा। उसके चारों ओर देशों में जो हालात हैं उनके असर से वह बच न सकता था। इस लिए वहां के नेता अब स्वीकार करते हैं कि यह सम्भव नहीं कि कोई देश अकेला व्यवहार में पूर्ण साम्यवादी बन कर मार्क्स के सिद्धान्तों पर पूरा

उतर सके। मार्क्स का वाद एक अन्तर्राष्ट्रीय वस्तु है और "एक राष्ट्र का साम्यवाद" उसके साथ मेल नहीं खाता। जब तक सारा संसार इन सिद्धान्तों को न अपनाये मध्यमार्ग का अवलम्बन आवश्यक होगा।

फ़ासिज़्म

"फ़ासिज्म" शब्द लेटिन शब्द "फ़ासेस" (Fasces) से निकला है। 'फ़ासेस' एक अधिकार चिन्ह था। बेंत के एक बंडल के बीच में कुल्हाड़ा रख कर सब को एक लाल तस्मे से बांध दिया जाता था। रोमन मजिस्ट्रेटों के अनुचर उनके पीछे यह अधिकार चिन्ह लेकर चलते थे। आजकल 'फ़ासी' (Fasci) इटली की ज़बान में उस जन समूह को कहते हैं जो एक राजनीतिक संगठन में बंधे हुए हों। १६१६ के बाद 'फ़ासिज्म' शब्द से उन सिद्धांतों का ग्रहण होता है जो इटली के एक विशेष राजनीतिक दल के सिद्धांत हैं। इस दल का नेता बेनिटो मुसोलिनी है। अक्टूबर १६२२ में इटली का शासन इस दल के अधिकार में आया था—और आजतक यही दल वहां अधिकाराल्ढ़ है। आज कल इसी प्रकार के सिद्धान्तों को मानने वाले दल और देशों में भी उत्पन्न हो गये हैं, और इस समानता के कारण उन्हें भी "फ़ासिस्ट" कहा जाता है। इस लिये अधिक व्यापक अर्थों में 'फ़ासिज्म' का अभिप्राय वे सिद्धान्त हैं जिनका उद्देश्य राजनीतिक क्षेत्र में एक संकुचित और उद्दण्ड (aggressive) प्रकार की

राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय एकता का समर्थन करना है, सम्पूर्ण राष्ट्रीय शक्ति का अत्यधिक केन्द्रीकरण करके उसे एक पार्टी और उसके नेता के अधिकार में दे देना है, तथा जिसका मन्तव्य प्रत्येक प्रकार से कम्युनिस्ट सिद्धांतों और कम्युनिज़्म के प्रचार का विरोध करना है। इन व्यापक अर्थों में जर्मनी का "नैशनलसोशलिज़्म" या नाज़ीइज़्म भी इसी कोटि में आ जाता है। यद्यपि नाज़ीइज़्म में कई अंशों में भिन्नताएं भी हैं।

'फ़ासिज़्म' का आधारभूत सिद्धान्त शासक वर्ग में राज्य के अधिकारों का केन्द्रीकरण है और इस दृष्टि से वह जनतन्त्र प्रणाली के विपरीत है, क्योंकि जनतन्त्र प्रणाली में सम्पूर्ण अधिकारों की स्वामिनी जनता और उसके प्रतिनिधियों की सभा है, और शासकवर्ग उसके प्रति उत्तरदाता हैं। अधिकारों के केन्द्रीकरण के लिए 'फ़ासिस्ट' शासक सिर्फ एक ही पार्टी की सत्ता और आवश्यकता स्वीकार करते हैं। एक समय में एक पार्टी अधिकारारूढ़ रह सकती है। जब जनता का बहुमत एक पार्टी को अधिकार दे दे तो बाकी पार्टियों को भंग हो जाना चाहिए। फ़ासिस्ट लोग जनतन्त्र प्रतिनिधि सभाओं को बहुत तुच्छ दृष्टि से देखते हैं और उनकी वादविवाद प्रणाली का मज़ाक उड़ाते हैं। उनकी सम्मति में 'ये वाद विवाद अधिकांश वितण्डा होते हैं और राज्य की शक्ति का अपव्यय करके राष्ट्र को कमज़ोर करते हैं।" इसलिए "एक दल प्रणाली" (Single Party system) फ़ासिज़्म

का आवश्यक अंश है। यह पार्टी चाहे कोई भी हो, परन्तु इसका आदर्श हमेशा राष्ट्रीय एकता, दलभेद को वश में रखना, श्रेणी युद्ध न होने देना और राष्ट्र के विभिन्न प्रादेशिक स्वार्थों को बढ़ने न देना होना चाहिए। इसके लिए इसे दृढ़ता और कठोरता के साथ शासन करना चाहिए। इसलिए इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य को सब अधिकार प्राप्त हैं, और वह जनता के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में राष्ट्रीयशक्ति को अक्षुण्ण बनाये रखने के उद्देश्य से दखल दे सकता है। १९२६ से फ़ासिज़्म सङ्घात्मक (Corporative) समाज में विश्वास करता है। आर्थिक क्षेत्र में इसका अर्थ यह है कि एक व्यवसाय के मालिक और मज़दूर एक सङ्घ या "गिल्ड" में संगठित हों और इस संघ के द्वारा अपने सम्बन्धों को नियमित करें और परस्पर झगड़ों को रोकें ताकि राष्ट्रीय व्यवसाय को सब मिल कर उन्नत कर सकें। राष्ट्रीय व्यवसाय की उन्नति के लिए मालिक और मज़दूर दोनों राष्ट्र के प्रति ज़िम्मेवार हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में फ़ासिज़्म राष्ट्रवाद और शक्तिशाली राष्ट्रों के विस्तार के सिद्धान्त पर ज़ोर देता है। शक्तिशाली राष्ट्रों को संसार के असभ्य, अर्धसभ्य या अवनत राष्ट्रों में फैलने का पूरा अवसर मिलना चाहिए—इस दृष्टि से फ़ासिज़्म उग्र साम्राज्यवाद का पोषक है। इटली ने इस सिद्धान्त के अनुसार ही अबीसीनिया पर अधिकार कर लिया है। अपने सब व्यवसायों को इस

प्रकार से सङ्गठित किया है कि युद्ध के समय सबको सैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपयोग में लाया जा सके और अपने इस अन्तर्राष्ट्रीय आदर्श से राष्ट्रसंघ के उद्घोषित आदर्शों को विपरीत समझ कर वह राष्ट्रसंघ से जुदा हो रहा है।

इटली की फ़ासिस्ट पार्टी की "ग्रांड कौंसिल" सब से बड़ी राष्ट्रीय सभा है। मुसोलिनी उसका प्रधान है। पार्टी में २० लाख के करीब बाकायदा सदस्य हैं, और पार्टी की अपनी फौज है जिसमें २ लाख सिपाही हैं। पार्टी का नेता ही शासन का प्रमुख व्यक्ति या प्रधान मन्त्री है। उसका पद स्थायी है, और उसकी शक्ति अपरिमित है। १९२८ के कानून के अनुसार चेम्बर आफ़ डेप्युटीज़ के सदस्य फ़ासिस्ट पार्टी में से भर्ती किए जाते हैं। परन्तु इसके साथ ही व्यवसाय संघों (Corporations) की राष्ट्रीय सभा कायम है जो कुछ अर्से के बाद चेम्बर आफ़ डेप्युटीज़ का स्थान ग्रहण कर लेगी। १९३४ से ये संघ बाकायदा कायम किए गये हैं और तब से २२ संघ कार्य कर रहे हैं। मालिकों और मज़दूरों की ट्रेड यूनियनें मिलाकर 'सिंडीकेट' बनाई जाती हैं, जो सरकार द्वारा स्वीकृत होती हैं और सरकार उन पर नियन्त्रण रखती है।

जर्मनी का "नाज़ीइज़्म" या 'नैशनल सोशलिज़्म' नाम भी फ़ासिज़्म से मिलता जुलता है। 'नाज़ी' पार्टी का पूरा नाम "नैशनल सोशलिस्ट जर्मन वर्कर्ज़ पार्टी" है। जिसमें प्रथम और

अन्तिम अक्षरों को मिला कर "नाटी" और उसका जर्मन उच्चारण "नाज़ी" बन गया है। इस दल के सिद्धान्तों की एक विशेषता यह है कि इसका आधार उग्र जर्मन जातीयता की भावना पर है। ग़ैर जर्मन-नानआर्यन और विशेषतः यहूदी लोगों से यह दल अत्यन्त घृणा उत्पन्न करता है। इटली के फासिज़्म में अभी तक जातीय भावना नहीं थी, यद्यपि अभी हाल ही में मुसोलिनी ने भी यहूदी जाति के विरुद्ध जिहाद करदी है। नाज़ी दल के नेता हिटलर ने अपनी पुस्तक 'मेनकेम्फ' (१६२५—२६) में एक प्रोग्राम रखा था। इस प्रोग्राम का उद्देश्य सम्पूर्ण जर्मन जाति को एक करके एक महान "जर्मन राष्ट्र" की स्थापना है। इस राष्ट्र के नागरिक सिर्फ वही हो सकेंगे जो विशुद्ध जर्मन रक्त के हैं। बाकी जातियां इस राष्ट्र की अतिथि के रूप में रह सकेंगी।

नाज़ी जर्मनी

६ नवम्बर १६१८ में जर्मनी के सम्राट् विलियम कैसर ने सिंहासन त्याग किया और ३१ जुलाई १६१६ में 'वीमर' में 'नैशनल एसेम्बली' (जो कि विधान तैयार करने के लिये बुलाई गई थी) ने लोकतन्त्र शासन के सिद्धान्तों के अनुसार जर्मनी का विधान तैयार किया। इसे 'वीमर विधान' कहते हैं। जर्मनी में संघ शासन (फीडरेशन) कायम किया गया। व्यवस्थापिका सभा या "रीचस्टैग" (Reichstag) जनता के निर्वाचन से चुनी जाती है। प्रत्येक बालग़ को वोट का हक दिया गया।

राज्य का प्रमुख प्रेज़िडेन्ट होता है जिसे जनता सात साल के लिये चुनती है । प्रेज़िडेन्ट मन्त्रिमंडल को नियुक्त करता है, पर यह आवश्यक है कि मन्त्रिमंडल पर रीचस्टैग को विश्वास हो। १९२५ में फील्ड मार्शल वान हिंडेनबर्ग प्रेज़िडेन्ट चुना गया और १९३२ में कार्य-काल समाप्त होने पर फिर उसे ही प्रेज़िडेन्ट चुना गया। १९३३ के आरम्भ में रीचस्टैच में बहुमत हो जाने से वान हिंडनबर्ग ने हिटलर को मन्त्रिमंडल बनाने को कहा। जर्मनी में मन्त्रिमंडल के मुखिया को प्रधान मन्त्री न कह कर चांसलर कहते हैं। हिटलर चांसलर बन गया। हिटलर ने पहला काम यह किया कि 'रीचस्टैग' में मार्च १९३३ में एक कानून पास कराया जिसके अनुसार मंत्रिमंडल को अख्तियार दिया गया कि वह जो कानून चाहे बनाये और अपनी मर्ज़ी से फ़रमान (Ordinance) जारी कर सके। उसे यहां तक अधिकार हो कि विधान की धाराओं के विरुद्ध भी फ़रमान निकाल सके। 'वीमर' विधान के अनुसार प्रत्येक नागरिक को भाषण, लेख, सभा करने, जायदाद वग़ैरा की पूरी आज़ादी दीगयी थी। हिटलर ने इस विधान की धारा को स्थगित कर दिया और इसके द्वारा कम्युनिस्टों को कुचलना शुरू किया। उसके बाद और बहुत से कानून मंत्रिमण्डल ने अपनी मर्ज़ी से पास किये। अगस्त १९३४ में हिंडनबर्ग की मृत्यु हो गयी और मंत्रिमंडल ने घोषणा निकाली कि अब से प्रेज़िडेन्ट और चांसलर के पद इकट्ठे हिटलर के पास रहेंगे। हिटलर ने

अपने आपको प्रेज़िडेन्ट के स्थान पर "फ़ुहरर" (नेता) कहलाना ज्यादा अच्छा समझा। अब उसका पद जर्मनी का "फ़ुहरर और चांसलर" है। जनवरी १९३७ में "रीचस्टैग" ने १९३३ वाले कानून की अवधि अप्रैल १९४१ तक बढ़ा दी। इस कानून को "एनेबलिंग एक्ट" कहते हैं—जिसका अर्थ है "अधिकार देने वाला कानून"।

इस कानून का उपयोग करके हिटलर ने सारे जर्मनी को इकट्ठा कर दिया है। अब जर्मनी का शासन संघ शासन न होकर अत्यन्त केन्द्रीकृत (Centralised) शासन है। राजनीतिक, आर्थिक, व्यावसायिक, व्यापारिक और संस्कृति सम्बन्धी सम्पूर्ण क्षेत्रों में राज्य का दख़ल है। कानून के प्रति पहले सब समान थे—परन्तु अब आर्य जाति के लोगों को नागरिकता के पूर्ण अधिकार हैं। यहूदी या अन्य जातियों का दर्जा नीचे है। पुलिस को अधिकार है, जिसे जब चाहे गिरफ़्तार कर ले। कोई राजनीतिक दल सिवाय नाज़ी दल के जर्मनी में बन नहीं सकता। 'रीच' कहने को अभी कायम है, पर उसमें सब हिटलर के समर्थक हैं। सिद्धान्ततः वीमर विधान अभी जारी है, और हिटलर सारी शक्ति जनता से प्राप्त करता है। नाज़ी सिद्धान्त जनता की शक्तिको तो मानता है और उसका सन्मान भी करता है, परन्तु जनता की बुद्धि और योग्यता पर उसका विश्वास नहीं। उसके अनुसार जनता सिर्फ़ अपना नेता चुन सकती है, और जब एक बार नेता

चुन ले तो उसके पीछे उसे पूरे नियंत्रण के साथ चलना चाहिये।

वर्तमान समय में व्यवहार में जो शासन विधान है उसमें राष्ट्र की सम्पूर्ण जिम्मेवारी नेता पर है। वह और उसके मंत्री सब शासन कार्य चलाते हैं। जर्मनी के १७ प्रादेशिक राज्य अब केवल मामूली ज़िले बन गये हैं, जिनका सम्पूर्ण शासन केन्द्रीय सरकार की मर्ज़ी से होता है। इतना ही नहीं, इन प्रादेशिक राज्यों के नये टुकड़े किये जा रहे हैं और उन्हें शासन कार्य की सुविधा के अनुसार नये सिरे से विभक्त किया जा रहा है।

इटली

इटली का शासन भी इंग्लैण्ड की तरह बादशाह के नाम पर होता है। परन्तु बादशाह को कुछ भी अख्तियार नहीं। प्रधान मन्त्री ही सब काम करता है। इस समय इटली का प्रधान मंत्री बेनिटो मुसोलिनी इटली का एकाधिपति या डिक्टेटर है। प्रधान मंत्री बादशाह के प्रति उत्तरदाता है, और बाकी मन्त्री प्रधान मंत्री के प्रति। प्रधान मंत्री बाकी मंत्रियों की नियुक्ति भी कर सकता है और पदच्युति भी।

व्यवस्थापिका सभा नाममात्र को है। व्यवस्थापिका सभा के दो हाउस हैं सीनेट और दूसरा चेम्बर आफ डेप्युटीज़। सीनेट में इंग्लैण्ड की लार्ड सभा की तरह राजवंश के संभ्रान्त व्यक्ति राजा के बनाये हुए लार्ड, उच्च अधिकारी, विज्ञान या साहित्य में

ख्याति लाभ करनेवाले व्यक्ति नामज़द किये जाते हैं। संख्या निश्चित नहीं है। अक्टूबर १६३७ में इनकी संख्या ३७६ थी।

१६२८ में चुनाव का सारा तरीका बदल दिया गया। २१ वर्ष से ऊपर सब पुरुषों को मताधिकार प्राप्त है जो कि १०० लिरा तक टैक्स देते हों या किसी सरकारी नौकरी में वेतन या पैन्शन ले रहे हों।

चेम्बर आफ़ डेपुटीज़ में ४०० सदस्य हैं जिनका चुनाव ५ सालों के लिये होता है। कमसे-कम २५ वर्ष की आयु होनी चाहिये। देश को जुदा जुदा निर्वाचन क्षेत्रों में बांटा हुआ नहीं है, बल्कि सारा देश एक ही निर्वाचन क्षेत्र है। नैशनल सिंडीकेट मैम्बरों की एक लिस्ट पेश कर सकती है। कई राष्ट्रीय संस्थाओं को भी इस प्रकार की छोटी बड़ी फ़हरिस्तें बना कर पेश करने का हक है। इन फ़हरिस्तों में से देश की सब से बड़ी "फ़ासिस्ट ग्रांड कौंसिल" ४०० मैम्बरों के नाम चुन लेती है और अपनी इस लिस्ट पर वोटरों से राय मांगती है। प्रत्येक वोटर को लिस्ट के हक में या खिलाफ़ वोट देना होता है यदि इसे जनता मंजूर न करे तो चुनाव फिर होता है।

प्रत्येक डिपुटी को प्रतिवर्ष २१ हज़ार लिरा मिलता है। पिछले चुनाव १६३४ में हुए थे, जिनमें कुल वोटरों में से ६५.५६ फ़ी सदी ने वोट दिया था और देने वालों में से ६६०८४ फ़ी सदी ने फ़ासिस्ट कौंसिल की लिस्ट के हक में मत दिया था।

इटली में भी व्यवस्थापिका सभाने प्रधान मन्त्री को असीम अधिकार दे दिये हैं। व्यवस्थापिका सभा सामान्य नीति निर्धारित करती है और उन्हें व्यवहारिक रूप देनेका काम प्रधान मन्त्रिमंडल पर छोड़ देती है जो फ़रमान और हुक्म निकाल कर उनकी तफ़सील का फैसला करती है।

श्रमियों को नियन्त्रण में लाने के लिये श्रमिक संघों (Syndicates) को कुछ कानूनी अख्तियार दिये हुए हैं। कृषि व्यवसाय, व्यापार, बैंक, इंश्योरेंस इनमें काम करने वाले श्रमियों के श्रमिक संघ हैं। इसी के मुकाबले में कृषि व्यवसाय आदि के मालिकों के भी जुदा जुदा संघ और मुकामी संघों को मिलाकर बड़े संघ हैं। १६३४ के नवम्बर में कानून के ज़रिये इस प्रकार के २२ संघ बनाये गये। मज़दूरों और मालिकों के संघ मिलकर सब झगड़े तय करते हैं। इन संघों को चेम्बर आफ़ डिपुटीज़ के लिये फ़हरिस्तें देने का अधिकार प्राप्त है। १६२७ में मुसोलिनीने घोषणा की कि राज्य को इस बात का हक है कि वह राष्ट्रीय सम्पत्ति को उत्पन्न करने वाली शक्तियों- पूंजी और श्रम-का भली भांति नियन्त्रण करे, उन में समानता और सहयोग पैदा करे ! श्रमियों और मालिकों के संघ आपस में सामूहिकरूपसे समझौते और ठेके करते हैं। न मज़दूर हड़ताल कर सकते हैं न मालिक उन के लिये दरवाज़े बन्द कर सकते हैं। राज्य को जनता के प्रत्येक काम में दखल देने का अधिकार प्राप्त है।

जापान

जापान का राजनीतिक दृष्टिकोण भी बहुत बातों में फ़ासिस्टों और नाज़ियों से मिलता है । राजा के अधिकार और उसकी शक्तियां असीमित समझी जाती हैं और उसे "परमात्मा का पुत्र" समझा जाता है । बादशाह के प्रति अगाध और अन्ध-भक्ति जापानियों के दिलों में है । इसके बावजूद जापान लोकतन्त्र की लहर से बच नहीं सका और राजा के अधिकार सीमित हो गये हैं । यद्यपि जापान का शासक वर्ग लोकतन्त्र के सिद्धान्तों और भावनाओं का बहुत समर्थक नहीं है, और प्रतिगामी विचारों का प्रतिनिधि है, परन्तु जापानी जनता में उठती हुई स्वतन्त्रता और लोकसत्ता की भावनाओं की बिलकुल उपेक्षा करने की उसमें शक्ति नहीं । इस लिये जर्मनी और इटली की अपेक्षा जापान में शासन ज्यादा लोकतन्त्र के नज़दीक है । एक फ़र्क और भी है । जर्मनी और इटली के एकाधिपति (डिक्टेटर) यूरोप की विशेष प्रकार की राजनीतिक परिस्थितियों की वजह से वहां के बढ़ते हुए संकुचित परन्तु उग्र राष्ट्रवाद के प्रतिनिधि होने के कारण जनता के नायक (Hero) बन गये हैं और राष्ट्रवाद के अंधे जोश में जनता ने अपने सम्पूर्ण अधिकार अपने नायक के चरणों में निछावर कर दिये हैं । हिटलर और मुसोलिनी दुनियां के लिये कैसे ही बुरे हों, पर जर्मनी और इटली की जनता में उनका बहुत प्रभाव है, जनता पर इस प्रभाव के बल पर ही वे अपरिमित अधि-

कारों का उपभोग कर रहे हैं। जापान को न तो यूरोप के इन राष्ट्रों की तरह कोई ख़तरा है और न वहां पर कोई एक व्यक्ति ऐसा नायक बना हुआ है। वह सिर्फ़ अपने साम्राज्यविस्तार की धुन में है। अपने पड़ोसी रूस से उसे भय हो सकता था—मगर जब से रूस में समाजवादियों का शासन हुआ है, उसे यह विश्वास है कि खुद वह रूस से छेड़छाड़ करे तो करे, रूस उससे व्यर्थ ही में नहीं उलझेगा क्योंकि रूस की नीति साम्राज्य बनानेकी नहीं-और फिलहाल रूस के पास अपने देश में ही फैलने के लिये काफ़ी गुंजाइश है।

जापानी भी उग्र राष्ट्रीयता के उपासक हैं और इसलिये राजा और राज्य के हाथों में अधिक शक्ति रखना चाहते हैं। वहां का शासक वर्ग प्रायः अपनी 'फ़ासिस्ट' मनोवृत्तियों का परिचय देता रहता है और इसका असर वहां की शासन प्रणाली पर भी है।

जापान के शासन के सब अधिकार बादशाह को प्राप्त हैं। वह व्यवस्थापिका सभा या 'डाइट' की सलाह से कानून बना सकता है। प्रतिनिधि सभा को भंग कर सकता है। विशेष अवस्थाओं में विशेष आज्ञाएं जारी कर सकता है, पर बाद में यदि 'डाइट' उन पर अपनी स्वीकृति की मुहर न लगा दे तो वे आज्ञाएं रद्द समझी जाती हैं। प्रत्येक कानून के लिये डाइट की सहमति अवश्य होनी चाहिये।

डाइट के दो हाउस हैं। "हाउस आफ़ पीयर्स" और "हाउस आफ़ रिप्रेज़ेन्टेटिव्स" या प्रतिनिधि सभा। उपरला हाउस 'हाउस आफ़ पीयर्स' है जिसमें ४०४ सदस्य हैं। इसमें राजकीय 'श के सदस्य, पीयर्स के चुने हुए प्रतिनिधि, राजा द्वारा नामज़द सदस्य, आदि होते हैं। इस हाउस को निचले हाउस द्वारा रद्द किये हुए खर्चों को मंजूर करने का भी अख्तियार है।

प्रतिनिधि सभा के चुनाव का हक १९२५ के बादसे प्रत्येक पुरुष को मिल गया है। इसके ४६६ सदस्य हैं जो चार साल के लिये चुने जाते हैं। १३२ लाख के पीछे एक मैम्बर प्रतिनिधि सभा का मैम्बर बनता है।

बादशाह मन्त्रिमण्डल को नियुक्त करता है पर मन्त्रि-मण्डल 'डाइट' के प्रति ज़िम्मेवार है। डाइट का अधिवेशन हर साल होता है। डाइट के पास किये हुए प्रस्तावों को बादशाह रद्द नहीं कर सकता—पर यह सिर्फ़ रिवाज बन गया है, अन्यथा राजा को हक हासिल है।

(८)

साम्राज्यवाद

साम्राज्यवाद उस वाद का नाम है जिसका उद्देश्य दुनियां में साम्राज्य कायम करना, उस पर शासन करना और उसे शक्ति-शाली बनाये रखना है। इसके द्वारा भिन्न भिन्न संस्कृति, मज़हब और राजनीतिक आदर्शों वाली कौमों की आज़ादी और राष्ट्रीय

स्वतन्त्रता को छीन कर एक व्यक्ति, समुदाय या कौम अपनी इच्छा के अधीन करके रखा जाता है। साम्राज्यवाद इस प्रकार के जबर्दस्ती शासन का औचित्य ही सिद्ध नहीं करता, बल्कि इसे एक चरम राजनीतिक आदर्श मानता है। साम्राज्यवाद का सिद्धान्त वहुत पुराना है। भारतवर्ष में सार्वभौम चक्रवर्ती सम्राट होना राजनीतिक महत्वाकांक्षा की आखिरी सीमा समझी जाती थी। युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ इसी उद्देश्य से रचा था। मौर्यों और गुप्त राजाओं के विशाल और शक्तिशाली साम्राज्यों का इतिहास हम पढ़ते हैं। मुसलमानों के समय में मुग़ल साम्राज्य और उसके बाद मराठों का साम्राज्य अत्यन्त शक्तिशाली थे। सिकन्दर ने यूरोप और एशिया में अपना विस्तृत साम्राज्य कायम किया था। भिन्न भिन्न कौमें 'फ़िडरेशन' या संघों में भी इकट्ठी होती हैं। परन्तु फ़िडरेशन और साम्राज्य में यह फ़र्क है कि फ़िडरेशन में कौमें अपनी मर्ज़ी से सामान्य उद्देश्यों और भावनाओं को लेकर इकट्ठा होती हैं और उनमें कोई शासक या शासित कौम नहीं होती। परन्तु साम्राज्यवाद में एक कौम शासक होती है जो दूसरों को मजबूर करके उस 'संघ' में शामिल करती है। उसमें सब कौमों के अधिकार समान नहीं होते। साम्राज्यका मूल किसी न किसी प्रकार की जबर्दस्ती पर स्थित है।

आजकल यूरोप के कई देशों ने अपने साम्राज्य कायम किये हुए हैं। जिनमें इंग्लैण्ड का साम्राज्य सबसे बड़ा है। किस

किस देश ने कितना कितना साम्राज्य कायम किया हुआ है यह नीचे की तालिका में दिया है।

साम्राज्य	विस्तार (वर्ग मील)	आबादी
ग्रेट ब्रिटेन	१,३१,७०,८६०	५१,७३,८०,६७०
फ्रांस	४४,६४,६१०	१०,७८,५३,०००
इटली	१५,५६,६०८	५,३४,१०,०००
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	४३,६७,०२१	१४,३७,००,००५
जापान	७,२३,४७७	१२,८३,७८,०००
नीदरलैण्ड्स	८,०२,१६६	७,५१,५७,०००
पुर्तगाल	८,४५,७५०	१,६५,५५,०००
स्पेन	३,२५,३०३	२,५७,७४,८४०
बेलजियम	६,५०,२७५	२,१०,७०,०००
डेनमार्क	६३,८५६	३७,२७,०००

आजकल का साम्राज्यवाद पुराने साम्राज्यों से भिन्न है। यद्यपि मूलभूत विचार और सिद्धान्त एक से हैं। अभी तक दुनियां को सभ्य और सुशिक्षित बनाने का "दैवीय मिशन" का विचार साम्राज्यवादियों के दिमाग़ में है। परन्तु आजकल मुख्य प्रेरणाशक्ति व्यापार और आर्थिक प्रभुत्व की इच्छा है। सस्ते दामों कच्चा माल ख़रीदने के लिये और तैयार किये हुए माल को मंहगे दामों बेचने के लिये पूंजीवादी बाज़ार चाहते हैं और इसलिये निर्बल देशों को अपने साम्राज्य के अधीन रखते हैं।

साम्राज्यवाद दूसरे देशों पर सिर्फ प्रभुत्व की कोशिश नहीं करता। कई दफ़ा अन्य प्रकार से भी अपनी शक्ति प्रकट करता है। चीन और जापान में व्यापार के लिए दरवाज़े ज़बर्दस्ती खुलवाए गये थे। इनके बन्दरगाहों में अपने देशवासियों के लिये विशेषाधिकार भी ज़बर्दस्ती प्राप्त किये गए। कई देशों को तो ज़बर्दस्ती कर्ज़ लेने पर मजबूर किया गया। ये सब राजनीतिक साधनों की सहायता से हुआ। जहां साम्राज्यवाद देश को सम्पूर्ण रूप से अपने अधीन न कर सका, वहां विशेषाधिकार, सलाहकार, रक्षा का भार आदि के बहानों से राष्ट्र के प्रभुत्व को सीमित कर दिया गया।

महायुद्ध ने साम्राज्य विरोधी भावना को जागृत किया। कई कौमों को वास्तविक राष्ट्रीय स्वतन्त्रता मिली। आयर्लैण्ड, मिश्र और हिन्दुस्तान के राजनीतिक दृष्टिकोण और मनोवृत्ति में अभूतपूर्व क्रांति उत्पन्न हो गयी। टर्की का साम्राज्य टूटा। यद्यपि टर्की के साम्राज्य से पृथक होने वाले देशों को पूर्ण स्वाधीनता न मिली। वे टर्की की गुलामी से छूट कर अंग्रेज़ों या फ्रांस के लोगों की गुलामी में जा फंसे। पर राष्ट्रीयता की लहर उनमें भी बड़े वेग से फूट निकली। आज अरब में राष्ट्रीयता की भावना बहुत ही प्रबल हो चुकी है। चीन में विदेशियों की गुलामी से लोगों को सख्त घृणा पैदा हो गई है।

साम्राज्य विरोधी कान्फ्रेन्स—१९२७ में ब्रुसेल्स में २७

देशों ने मिलकर एक "साम्राज्य विरोधिनी संस्था" की स्थापना की। रूस का रुख क्रांति के बाद से हमेशा पराधीन देशों के साथ सहानुभूति का रहा और "कम्युनिस्ट इंटर्नेशनल" से कुछ देशों को कई तरह की मदद भी मिली। उसकी प्रेरणा पर साम्यवादी और राष्ट्रवादी लोग इकट्ठे मिल कर और "सम्मिलित सान्मुख्य" (United Front) बना कर साम्राज्यवाद के विरुद्ध लड़ रहे हैं।

साम्राज्यवाद मरा नहीं। जापान, इटली और जर्मनी ने साम्राज्यवाद को बहुत उग्ररूप में पुनर्जीवित कर दिया है। इसमें शक नहीं कि आजकल साम्राज्य को स्थिर रखने के लिए एक बहुत बड़ी सेना, तोपखानों और हवाई व समुद्री जहाज़ों की ज़रूरत है और इसलिए साम्राज्य रखने के खर्चे इस कदर बढ़ गये हैं कि समझदार राजनीतिज्ञ सोच में पड़ जाते हैं कि आया साम्राज्य रखने के लिये जितने खर्चे बर्दाश्त करने पड़ते हैं उनका उससे लाभ भी होता है ! परन्तु जब पूंजीपतियों के सामने अपने माल की बिक्री, लाभ, बाज़ारों पर एकाधिपत्य, सस्ती मज़दूरी आदि के सवाल आते हैं, तो साम्राज्य के सिवाय उन्हें कोई चारा नहीं दिखाई देता। इस लिए जब तक पूंजीवाद ज़िन्दा है, साम्राज्यवाद मर नहीं सकता।

ब्रिटिश साम्राज्य

ग्रेट ब्रिटेन पृथिवी के अत्यन्त विशाल साम्राज्य का स्वामी

है। इस साम्राज्य का विस्तार लगभग १ ३३,५५,४२६ वर्ग मील है जो संसार के कुल स्थल भाग का चौथा हिस्सा है। साम्राज्य की आबादी ५०,०७,७४,००० है जो दुनियां की कुल आबादी का चौथाई हिस्सा है। यह स्मरण रखना चाहिये कि हिन्दुस्तान सारे साम्राज्य के क्षेत्रफल का सातवां हिस्सा (१८ ०८,६७६ वर्ग मील) है और यहां की आबादी ३५,२८ ३७,७७८ है।

इस समय संसार की कुल ऊन की पैदावार का ४४ फ़ीसदी, सोने की पैदावार का ७० फ़ीसदी, ८८फ़ीसदी निकल, ६० फ़ीसदी रबड़, ५२ फ़ीसदी चावल और ९९ फ़ीसदी जूट ब्रिटिश साम्राज्य में ही पैदा होते हैं।

ब्रिटिश साम्राज्य में बहुत से राष्ट्र हैं। परन्तु साम्राज्य में स्थिति के लिहाज़ से उन की पांच श्रेणियां की जा सकती हैं।

१—ग्रेट ब्रिटेन और उत्तरी आयर्लैंड जो कि साम्राज्य का केन्द्र है।

२—उपनिवेश या "डोमिनियन"। कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका और आयर (आयर्लैंड का स्वतन्त्र राज्य।) न्यूफ़ाउण्डलैण्ड को भी औपनिवेशिक स्वत्व प्राप्त था—परन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण से कुछ समय के लिए उस ने स्वेच्छा से इस अधिकार को त्यागा हुआ है। ये राष्ट्र इंग्लैण्ड के राजा को (सिवाय आयर के) अपना राजा मानते हैं, परन्तु ब्रिटिश पार्लियामैंट का उन पर कोई प्रभुत्व नहीं। इंग्लैंड का राजा भी इन राष्ट्रों की पार्लियामैंट की मर्ज़ी से शासन

करना है। इन राष्ट्रों की स्थिति की साफ़ साफ़ व्याख्या १० दिसम्बर १९३१ के एक कानून द्वारा की गयी है। १९२९ में सब साम्राज्यान्तर्गत देशों की एक कांफ्रेंस लंडन में हुई थी, जिस में उपनिवेशों के साथ कुछ समझौते हुए। इन समझौतों को व्यावहारिक रूप देने के लिये ब्रिटिश पार्लियामेंट ने वह कानून पास किया, जिस को "स्टेटयूट आफ़ वेस्ट मिन्सटर" के नाम से पुकारा जाता है।

३—छोटी छोटी बस्तियां जिन्हें "कौलोनीज़" कहा जाता है। अंग्रेज़ों और अन्य यूरोपीयन देशों के लोग इन में जाकर बसे हैं। पर इन का शासन प्रबन्ध ग्रेट ब्रिटेन की पार्लियामेंट के अधीन है।

४—आश्रित या आधीन राष्ट्र जैसे हिन्दुस्तान और बर्मा।

५—मैंडेटें या आदेशप्राप्त राष्ट्र, जिनका शासन प्रबन्ध राष्ट्र-संघ ने इंग्लैण्ड के ज़िम्मे डाला है।

"स्टेट्यूट आफ़ वेस्ट मिंस्टर"—ऊपर इस कानून का ज़िकर आया है, जिसके अनुसार ब्रिटिश साम्राज्य के उपनिवेशों को वही दर्जा और हैसियत मिल गये हैं, जो कि इंग्लैण्ड को स्वयं प्राप्त हैं। इस कानून के आवश्यक आशय ये हैं—

१—उपनिवेश या 'डोमिनियन' शब्द का तात्पर्य है, निम्नलिखित राष्ट्रों में से कोई राष्ट्र—

कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड, दक्षिण अफ्रीका, आयरिश फ्री स्टेट और न्यूफ़ाउंडलैण्ड ।

२—१८६५ का 'वेलिडिटी एक्ट' उपनिवेशों पर अब से लागू न होगा । 'वेलिडिटी' एक्ट के अनुसार उपनिवेशों की पार्लियामैंटें कोई ऐसा कानून पास नहीं कर सकती थीं, जो ब्रिटिश पार्लियामैंट के किसी कानून का विरोधी हो । 'वेलिडिटी एक्ट' के रद्द होजाने से उपनिवेशों की पार्लियामैंटें जो चाहें कानून बना सकती हैं और ब्रिटिश पार्लियामैंट के बनाये हुए किसी भी पुराने कानून को रद्द कर सकती हैं ।

३—उपनिवेशों की पार्लियामैंटें ऐसे कानून भी बना सकेंगी, जिनके द्वारा वे अपने नागरिकों पर विदेशों में भी नियन्त्रण रख सकें । अपने नागरिकों पर नियन्त्रण रखने का यह अधिकार हरएक स्वतन्त्र राष्ट्र को होता है और इसे "एक्स्ट्रा टैरिटोरियल" अधिकार (Extra territorial) कहा जाता है ।

४—ब्रिटिश पार्लियामैंट का बनाया हुआ कोई कानून उपनिवेशों की सीमा में तब तक लागू न होगा जब तक उसमें स्पष्ट रूप से यह घोषणा न की गयी हो कि अमुक उपनिवेश ने इसे अपने यहां लागू करना स्वीकार किया है ।

जिस समय बादशाह एडवर्ड ८म (वर्तमान ड्यूक आफ विंडसर) ने सिंहासन परित्याग किया और ब्रिटिश पार्लमैंट ने "सिंहासन परित्याग कानून" पास किया तो उसे पास करने से पहले स्वतन्त्र उपनिवेशों की स्वीकृति ली गयी थी । आयर्लैंड

(आयर) ने स्वीकृति नहीं दी थी और बाद में नये राजा को मानने से ही इनकार कर दिया और इसलिये राजा के प्रतिनिधि गवर्नर जेनरल का पद उड़ा दिया गया।

५—विधान की प्रस्तावना में लिखा है कि "क्योंकि इङ्गलैंएड का बादशाह "ब्रिटिश कामनवेल्थ" के राष्ट्र को परस्पर स्वतन्त्ररूप से जोड़ने के लिए एक कड़ी का काम देता है और उसके प्रति भक्ति और वफ़ादारी की भावना में ही बंधकर सब राष्ट्र परस्पर मिले हुए हैं इसलिए सिंहासन की विरासत, बादशाह की पदवी, वग़ैरा में परिवर्तन करने के वक्त उपनिवेशों की पार्लमैंटों की भी स्वीकृति अवश्य ली जाया करे।

इस प्रकार उपनिवेशों के बराबर की हैसियत में आजाने के कारण 'ब्रिटिश साम्राज्य' का नाम बदल कर 'ब्रिटिश कामनवेल्थ' (ब्रिटिश साम्राज्य में रहने वाली जनता का राज्य) कर देना आवश्यक हो गया है। उपनिवेश अब साम्राज्य में इङ्गलैंड के बराबर के साझीदार हैं। इङ्गलैंएड या किसी और के आधीन नहीं। 'ब्रिटिश साम्राज्य' शब्द के अन्तर्गत अब इन उपनिवेशों के अतिरिक्त बाकी सब राष्ट्र हैं।

साम्राज्यन्तर्गत शासन

जैसा कि पहले लिखा गया है उपनिवेश अपने आन्तरिक मामलों में ही नहीं बल्कि हरएक मामले में पूर्ण स्वतन्त्र हैं, और

इंग्लैण्ड के बराबर दर्ज़ा रखते हैं। आयर्लैंड में १९३७ में ही नया विधान स्वीकार किया गया है। इस में घोषणा की गई है—

"आयर्लैंड बिलकुल स्वतन्त्र और लोकतन्त्र राज्य है। आयरिश जाति का यह जन्मसिद्ध अधिकार है कि वह अपने लिये जिस प्रकार की शासन प्रणाली चुनना चाहे चुन ले"। सब उपनिवेश अपने विधानों में स्वयं परिवर्तन कर सकते हैं। इंग्लैण्ड के राजा का प्रतिनिधि गवर्नर जेनरल के रूप में रहता है, परन्तु उस के अधिकार उसी प्रकार मर्यादित हैं जिस प्रकार इंग्लैण्ड के राजा के और वह मन्त्रिमण्डल की इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं कर सकता। परन्तु आयर्लैण्ड ने गवर्नर जेनरल का ओहदा भी हटा दिया है और उस के स्थान पर सात साल के लिये प्रेज़िडेण्ट चुनने का तरीका रखा है। संघ शासन होने के कारण सब की व्यवस्थापिका सभाएं दो हाउसों में बंटी हुई हैं। पर निचले हाउस के अधिकार ज्यादा हैं। शासन बहुत कुछ इंग्लैण्ड की नकल पर है।

उपनिवेशों के अतिरिक्त अन्य प्रदेशों का शासन

उपनिवेशों के अतिरिक्त देश जिन की हैसियत स्वतन्त्र देश की नहीं है, भिन्न-भिन्न तरीकों से शासित होते हैं। उन सब के शासन की अन्तिम ज़िम्मेदार पार्लियामैंट है और पार्लियामैंट की मर्ज़ी के बगैर वहां कुछ नहीं हो सकता। क्योंकि वहां इंग्लैंड के बादशाह की स्थिति सम्राट की है। इस

लिये सम्राट का प्रतिनिधि गवर्नर जेनरल भी असीमित अधिकारों का मालिक है। उसे सलाह देने के लिये एक कौंसिल बनी हुई है,जिसकी नियुक्ति सम्राट् खुद (अपने मन्त्रि-मंडल की सलाह पर) करता है। यह कौंसिल जनसभा के प्रति जिम्मेवार नहीं बल्कि अपने कार्यों के लिये सम्राट् के प्रति उत्तर-दाता है। अधिकांश देशों में अब व्यवस्थापिका सभाएं भी कायम हो गयी हैं—पर इन व्यवस्थापिका सभाओं के अधिकार बहुत सीमित हैं। विदेशों के साथ संधि विग्रह, सैन्य संचालन और कई जगह शासन और व्यवस्था भी सीधे गवर्नर जेनरल के अधीन है और वह उसके लिये सम्राट् की सरकार के प्रति जिम्मेवार है। विदेशों से कर्ज़ लेना, ऋण और सूद का चुकाना मुद्रा बैंक, व्यापार, विदेशों से आने वाले माल पर चुङ्गी आदि की व्यवस्था ये सब प्रायः गवर्नर जनरलों के हाथ में हैं और वे सम्राट की सरकार से सलाह लेकर ही सब काम करते हैं। कई जगह जहां व्यवस्थापिका सभा को कुछ अधिकार मिले भी हैं वहां इन विषयों पर वह सिर्फ़ अपनी सम्मति दे सकती है, पर उसके निर्णय को रद्द करने या उसके रद्द किये हुए निर्णय को बहाल करने का हक गवर्नर जनरल को है। ये शासन प्रणालियां उत्तर-दायी शासन के सिद्धान्तों पर नहीं। यह आशा की जाती है कि धीरे धीरे गवर्नरों के अधिकार कम किये जा सकेंगे और ज्यों-ज्यों इन देशों के निवासी योग्यता सम्पादन करते जायंगे उनके शासन सम्बन्धी अधिकार विस्तृत होते जायंगे।

अधिकांश देशों में व्यवस्थापिका सभाओं के निर्वाचन का अधिकार भी बहुत कम लोगों को है। प्रत्येक वालग्र को मताधिकार तो कहीं पर भी नहीं है।

जिन राज्यों में पहले से किसी राजा बादशाह या सुलतान का शासन है वहां ब्रिटिश सलाहकार नियुक्त है और राज्य का काम उसकी सलाह से होता है। राजा आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्र है, परन्तु विदेशी मामलों व्यापार और व्यवसाय के विशेषाधिकार विदेशों से कर्ज और सैनिक मामलों में उसे ब्रिटिश सलाहकार की बात माननी होती है। इनके साथ ब्रिटिश सरकार का सम्बन्ध प्रायः उसी तरह का है जिस तरह का हिन्दुस्तान में देसी रियासतों के साथ है।

हिन्दुस्तान की स्थिति—

पिछले दिनों जिन साम्राज्यान्तर्गत देशों को कुछ शासनाधिकार मिले हैं, ऐसे देशों में हिन्दुस्तान की गणना सब से प्रथम है। हिन्दुस्तान में १६३५ में जो नया शासनविधान ब्रिटिश पार्लमैंट ने जारी किया है, उसके अनुसार प्रान्तों को अपने आन्तरिक शासन में स्वतन्त्रता दी गयी है। यद्यपि प्रान्तीय गवर्नरों को व्यवस्थापिका सभाओं के प्रस्तावों को रद्द करने और मन्त्रिमण्डलों के कार्य में हस्तक्षेप करने के अधिकार भी दे दिए गए हैं। केन्द्रीय शासन अभी तक उत्तरदायित्व-शून्य है। संघ शासन (फ़ीडरेशन) की जो योजना बनायी

गयी है उसमें भारतीय मन्त्रियों को आन्तरिक प्रबन्ध के अधिकार तो होंगे और वे केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा के प्रति ज़िम्मेवार भी होंगे, परन्तु वहां भी गवर्नर जेनरल को उसी तरह के विशेष अधिकार प्राप्त रहेंगे जैसे प्रान्तों में गवर्नरों को हैं। व्यवस्थापिका सभाओं के सदस्यों का निर्वाचन प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओं के सदस्य करेंगे और रियासतों के राजे अपने प्रतिनिधि नामज़द करके भेजा करेंगे। इन दोनों कारणों से यह भय होता है कि संघ की व्यवस्थापिका सभा में प्रतिगामी और अराष्ट्रीय विचारों का गिरोह बहुत मज़बूत हो जायगा।

इस विधान के सम्बन्ध में ब्रिटिशपार्लमैंट यह स्वीकार करती है कि यह अभी एक बीच की मंज़िल है और आखिर तो हिन्दुस्तान को ब्रिटिश उपनिवेशों की सी हैसियत देनी ही होगी। मगर कब तक? इस विषय में वह चुप है। भारत के राष्ट्रवादी पूर्ण स्वतन्त्रता और ब्रिटिश साम्राज्य से सम्बन्धविच्छेद तक की स्वतन्त्रता चाहते हैं। यह स्मरण रखना चाहिये कि साम्राज्य से सम्बन्ध विच्छेद की इच्छा सिर्फ भारतीय राष्ट्रवादी ही नहीं कर रहे। आयर्लैण्ड औपनिवेशिक स्वाधीनता प्राप्त के भी पूर्ण सम्बन्ध विच्छेद के लिये उत्सुक है और दक्षिण अफ्रीका में जनरल हरज़ोग का दल साम्राज्य से सम्बन्ध विच्छेद का प्रबल आन्दोलन उठाये हुए हैं।

छठा अध्याय

संसार की आर्थिक व्यवस्था

(१)

मुद्रा और विनिमय (Money And Exchange)

आज दुनियां की आर्थिक व्यवस्था बहुत ही जटिल और पेचीदा हो गई है। उसे समझना बहुत मुश्किल हो गया है। मगर फिर भी उसे थोड़ा बहुत समझना ज़रूरी है। हमारा सब खाना पीना पहिरना, हमारे तमाम कारोबार, लेन-देन और व्यापार इसी व्यवस्था के अन्दर चलते हैं और उन के साथ हरदम इसका सम्बन्ध है। आजकल सारी दुनियाँ एक बड़ा बाज़ार या मंडी बन गई है, प्रत्येक देश दूसरे पर निर्भर है। मगर इस के बावजूद एक बड़ी रुकावट यह है कि सरकारें राष्ट्रीय हैं और इस लिये सब लोग अभी राष्ट्रीय सीमाओं के भीतर ही अपने हानि लाभ की बात सोचते हैं। विदेशी व्यापार

पर रुकावटें लगा कर ऊंची ऊँची चुंगी की ही दीवारें खड़ी कर दी गयी हैं ताकि विदेश का सस्ता माल देश में न आ सके। हर कोई अपना माल दूसरे के हाथ बेच कर लाभ उठाना चाहता है, पर किसी दूसरे का माल लेना नहीं चाहता। आर्थिक क्षेत्र में भी अन्तर्राष्ट्रीयता की इन प्रगतियों में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के अन्दर एक बड़ी रुकावट यह है कि मुद्रा राष्ट्रीय है। उसे हम यों समझ सकते हैं :

हमारे बाज़ार में सारा लेन देन रुपयों के सिक्कों द्वारा होता है। हम सब कुछ रुपया लेकर बेचते हैं और रुपया देकर ख़रीदते हैं। यहां तक कि अपनी मेहनत मज़दूरी भी हम मज़दूरी या वेतन लेकर बेचते हैं। रुपया वस्तुओं की कीमत की नाप है, जैसे गज़ या फुट लम्बाई चौड़ाई के नाप हैं। नाप सदा एक जैसा रहना चाहिए। जहां नाप में रोज़ नई तबदीलियां हुआ करें वहां व्यवहार में गड़बड़ मच जाती है। जब कोई दुकानदार अपने तौल तराजू में हर रोज़ अदला बदली और कमी वेशी करता हो तो हम उस से लेन देन बन्द कर देते हैं। क्योंकि उस का विश्वास जिसे व्यापारी दुनियाँ में 'साख' कहते हैं नष्ट हो जाता है। दुनियां की सारी अर्थ व्यवस्था इस साख और विश्वास पर कायम है।

और यह कितनी हैरानी की बात है कि आजकल मुद्रा— जो हमारे सारे व्यापार और लेन देन का नाम है अपनी साख खो बैठा है। यह कैसे ?

हम ऊपर कह आये हैं कि आज दुनियां तमाम की तमाम एक बड़ी हाट या मंडी बन गई है। इस बड़ी भारी मंडी में जब हम खरीदो फ़रोख्त और लेन देन करने निकलते हैं हर कोई अपना जुदा नाप और तौल लेकर आता है। हर किसी के मुल्क का सिक्का या मुद्रा जुदा है। अब काम चले तो कैसे ? "अमुक बादशाह ने अपने नाम का सिक्का चलाया था" पुराने ज़माने में यह बात बड़े गर्व से कही जाती थी। आजकल राष्ट्रीय सरकारें भी अपने नाम के सिक्के चलाना पसन्द करती हैं। ये सिक्के जुदा जुदा किस्म और कीमत के हैं। इसलिये इससे पहिले कि हम आपस में कोई लेन देन करें—बैठ कर इन जुदा जुदा सिक्कों की कीमतें आपस में तय कर लेना ज़रूरी हो जाता है।

मुद्रा की कीमत में घटती बढ़ती—जुदा जुदा सिक्कों की कीमतें तय करना कोई मामूली काम नहीं। इस के कई कारण हैं। दूसरी चीज़ों की तरह मुद्रा की कीमत भी उस की तादाद और उस की मांग पर निर्भर है। यदि बाज़ार में जितनी माँग है उस से मुद्रा ज्यादा हुई तो वह सस्ती मिल जायगी, अगर उससे कम हुई तो ज़रूरत मंद लोग कुछ ज्यादा कीमत देकर भी उसे ख़रीदना चाहेंगे। और वह मंहगी हो जायगी। तादाद कैसे बढ़ती घटती है ? सरकारें मुद्रा ज्यादा बना दें, या व्यापार में उनकी ज़रूरत कम हो जाय, हुण्डियों की तादाद बढ़ जाय इत्यादि कारणों से बाज़ार में मुद्रा ज़रूरत से ज्यादा हो जाती है। इसी प्रकार दूसरे हालात में कम हो सकती है। विनिमय या ख़रीद फ़रोख्त

के लिये सिर्फ धातु के सिक्के नहीं चलते। काग़ज़ी नोट भी चलते हैं। काग़ज़ी नोट और कुछ नहीं सिर्फ अदायगी का वादा है जिस पर विश्वास कर के उसे वास्तविक धन के तौर पर मंजूर कर लिया जाता है। नोट एक तरह सरकारी हुण्डी है।

लोगों को यह यकीन होता है कि जब वे चाहेंगे सरकारी खज़ाने से नोट के बदले धातु के सिक्के उन्हें मिल जायेंगे। यदि देने के लिए सरकार के पास काफ़ी सोना या चांदी नहीं है, तो वे नोट लेना नहीं चाहेंगे-सरकार की साख उठ जायगी और नोटों की कीमत गिर जायगी यहाँ तक कि वे निकम्मे हो जाँयगे। ऐसा फ्राँस में एक बार हुआ। पहले वहाँ १ पौंड के बदले २५ फ्रांक मिलते थे, पर नोटों की तादाद बढ़ाने से कीमत घट गई और २७५ फ्रांक पौंड के बदले मिलने लगे। बाद में सरकार को १२० फ्रांक कीमत निश्चित करनी पड़ी। आजकल कीमत १७८ फ्रांक है। नोटों की इस तरह तादाद बढ़ाना बहुत ही खतरनाक होता है। हुकूमतें साख खो कर दिवालिया हो जाती हैं। १९२१ में रूस की सरकार ने और १९२३ में जर्मनी ने इसी तरह नोटों की संख्या बढ़ाकर अपनी मुद्रा की कीमत घटाली। जर्मनी ने युद्ध का बहुत सा कर्ज़ा विदेशी और अपने देश के साहूकारों का देना था। बाहर का रुपया चुकाने में तो उसने असमर्थता प्रकट की और घर के साहूकारों को नोट छाप छाप कर बांट दिए। खज़ाने में सोना तो बदले में देने को था नहीं क्योंकि वह तो

हर्ज़ाने की किश्तों की अदायगी में विदेशों में चला गया था। सरकार की साख गिर गयी और जर्मन मार्क की कीमत भी घट गई। घटती घटती इतनी घटी कि लोग सरकारी नोटों के ढेर लादे फिरते। एक रोटी की कीमत कई लाख मार्क तक पहुँच गई। एक अंडा १० हज़ार मार्क में आता था। ये नोट कोई लेकर क्या करे। अन्त में सरकार ने इन नोटों के स्थान पर नई मुद्रा जारी की।

इस तरह हमने देख लिया कि मुद्रा की कीमत घटती बढ़ती रहती है। असूल तो यह है कि नोट उतने ही जारी करने चाहियें, जितने का भुगतान सोने चांदी में हो सके। इसका तरीका यह है कि एक निश्चित तादाद तो सरकार अपनी साख पर ही नोट जारी कर देती है पर उससे ज्यादा नोट जारी करने का अधिकार उसे तब ही होता है जब प्रत्येक नोट की पुश्त पर उतनी कीमत का सोना खज़ाने में रखा जाय। इसे "स्वर्ण कोष" कहते हैं। पर प्रायः हकूमतें इस बात की परवाह कम करती हैं जिससे उनकी मुद्रा की कदर घट जाती है।

विदेशी विनिमय—राष्ट्रीय मुद्राओं की कीमतें घटती बढ़ती हैं, और लेन देन में उनका परस्पर मूल्य निश्चित करने की ज़रूरत पड़ती है। मुद्राओं के परस्पर मूल्य को नापने के लिए स्वर्ण का नाप रखा गया है और विदेशी व्यापार में सारा भुगतान सोने में होता है। मुद्रा की कीमत सोने के रूप में क्या है,

यह निश्चय करने के बाद लेन देन और भुगतान उसी के अनुसार होता है।

विनिमय बैंक——यह सारा कार्य्य विनिमय बैंक या 'एक्स-चेंज' बैंक करते हैं। बड़े बड़े तीर्थों पर किरियाने की दुकानें होती हैं। धार्मिक लोग तीर्थों पर दान देने जाते हैं पर ज़रा कंजूसी के साथ। इतने बेशुमार माँगने वालों को दें भी कितना? वे इन दुकानों से रुपयों के पैसे या पाइयाँ ले लेते हैं। किरियाना फिर इकट्ठा हो कर इन के पास पहुंच जाता है और उस के बदले रुपये दे देते हैं। इस अदला बदली में ये अपना कुछ कमीशन ले लेते हैं। एक मुल्क की मुद्रा को दूसरी मुद्रा में तबदील करने वाले एक्सचेंज बैंक भी यही करते हैं। इन विनिमय या एक्सचेंज बैंकों के हाथ में दुनियाँ के सारे व्यापार की कुंजी होती है। आज-कल इंग्लैंड और न्यूयार्क के बैंक दुनियाँ के व्यापार के केन्द्र बने हुए हैं। दुनियाँ की अधिकांश हकूमतों और अधिकाँश व्यापारी फर्मों की किस्मतें इन बैंकों की नीति पर निर्भर रहती हैं।

विदेशी हुंडी——व्यापारियों में हुन्डियों का चलन बहुत पुराने ज़माने से है। बम्बई से आप ने माल मंगाया और मैंने यहाँ से उतनी कीमत का माल बम्बई के एक व्यापारी को भेजा। आपको बम्बई में कीमत का भुगतान करना है। अगर मैं ने वहाँ के व्यापारी से कीमत वसूल करनी है। अगर मैं आपसे कीमत वसूल करके रसीद लिखदूं तो आप वह रसीद अपने व्यापारी

को भेज देंगे, और उस रसीद को दिखाकर वह उस व्यापारी से अपनी कीमत वसूल कर लेगा जिसे मैंने माल भेजा है। इस प्रकार एक आने के लिफ़ाफे के ज़रिये दोनों का भुगतान हो गया। अगर मनीआर्डर या बीमे द्वारा हज़ार दो हज़ार रुपये भेजने पड़ते तो कितना खर्चा आ जाता ?

यह तो चार व्यापारियों के बीच हुआ। बाज़ार में साख बनी रहे तो ये हुन्डियां ही सारे विदेशी बिलों की अदायगी करती हैं। इन्हें विदेशी विनिमय की हुँडियाँ कहते हैं।

आयात निर्यात का समतुलन--अब मान लीजिये हमारे देश से इंग्लिस्तान को माल बहुत ज्यादा गया, और इसके मुकाबले में वहाँ से माल कम आया। यानी हम लेनदार और इंग्लिस्तान हमारा देनदार हो गया या आर्थिक परिभाषा में व्यापार का तराजू (Balance of Trade) हमारे हक में रहा। ऐसी सूरत में क्या होगा ? इंग्लिस्तान में उन हुन्डियों की मांग बढ़ जायगी जो इंग्लिस्तान के व्यापारियों ने हिन्दुस्तान के व्यापारियों से अपने माल को कीमत वसूल करने के लिये जारी की हुई हैं। मांग बढ़ जाने से कीमत भी बढ़ जायगी। मगर लाज़मी है कि कुछ लोग फिर भी ऐसे रह जाँयगे जिन्हें हुन्डियां नहीं मिल सकेंगी मजबूरन उन्हें सोना भेज कर कीमत अदा करनी होगी, क्योंकि मुल्कों का आपसी व्यवहार जैसा कि ऊपर कहा गया है सोने के ज़रिये होता है। सोना भेजने में खर्च बहुत आता

है, इसलिये वह व्यापारी हुन्डी उस कीमत तक खरीदने को तैयार रहेगा जब तक कि सोना भेजने की कीमत की अपेक्षा उस पर बट्टा कम देना पड़े। इस तरह व्यापार के कमवेश होने से हुंडियों की माँग और कीमत घटती या बढ़ती है, और सोना एक देश से दूसरे देश को जाता है।

विदेशी हुंडियों का लेन देन भी 'विनिमय बैंक' करते हैं, और इनसे इनका महत्व बहुत बढ़ जाता है।

(२)

महत्व के लिये लंदन और न्यूयार्क में मुक़ाबला

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का केन्द्र बन जाना किसी बैंक के लिये और उस देश के लिये जहां वह बैंक हो बहुत महत्वपूर्ण बात है। यह वहीं हो सकता है जहाँ विदेशी व्यापार इतना फैला हुआ हो कि सब देशों की ओर सब तरह की हुन्डियां आती जाती हों, या यों कहिये कि देशी विदेशी हुंडियों की बहुत बड़ी मण्डी हो। सम्भवतः] वह पूंजी का सबसे बड़ा बाज़ार होना चाहिये, साथ ही सोने की भी बड़ी भारी मण्डी हो ताकि यदि कभी कोई हुंडी नहीं मिल सके तो उसके बदले सोना आसानी से मिल सकता हो। १६ वीं शताब्दि से इंग्लैण्ड को यह महत्व प्राप्त था। इस महान औद्योगिक विकास और क्रान्ति के ज़माने में वह पूंजी का सबसे बड़ा बाज़ार बन गया और वहाँ विदेशी हुंडियों का ढेर लग गया। साम्राज्य में दुनियां के कुल सोने का

दो तिहाई सोना निकलता है। 'बैंक आफ इंग्लैंड' एक बन्धी कीमत पर यह सारा सोना खरीद लेता है। जब किसी सरकार या साहूकार का काम नहीं बनता, उसे कर्ज़ा नहीं मिलता या विदेशी हुंडी नहीं मिलती तो वह इंग्लैंड के बाज़ार में जाकर उसे हासिल कर लेता है। इसीलिये इंग्लैंड की मुद्रा 'पौंड' को अन्तर्राष्ट्रीय महत्व प्राप्त हो गया है। इंग्लैंड सारी दुनियां का साहूकार है। साहूकार लोग अपने ग्राहकों के भेद खूब जान जाते हैं। इंग्लैंड भी इतने लम्बे अर्से में दुनियां की सब सरकारों और बड़े बड़े व्यापारों के अन्दरूनी भेद जान गया है। उनके हाथों दुनियां भर के देशों की हुडियाँ गुज़रती हैं और उनसे विदेशी व्यापारियों के भावों तथा उनके खास खास ग्राहकों तक के नाम उन्हें मालूम हो जाते हैं, इन गुप्त भेदों का इंग्लैंड अपने व्यापार में खूब फायदा उठाता है। इसके ज़रिये विदेशी सरकारों पर उसका राजनीतिक प्रभाव भी बना रहता है। परन्तु महायुद्ध के दिनों में इंग्लैंड लड़ाई में फंसा था, उस समय उसकी मसरूफियात का फायदा अमेरिका ने उठाया। न्यूयार्क संसार के व्यापार का केन्द्र बन गया। युद्ध के दिनों में अमेरिका ने खूब रुपया कमाया और इंग्लैंड और दूसरे लड़ने वाले राष्ट्रों को कर्ज़ के रूप में दिया। जहाँ युद्ध से पहले अमेरिका यूरोप का पांच अरब डालर का देनदार था, वहां लड़ाई के बाद यूरोप पर उसका १० अरब का कर्जा हो गया। अमेरिका के पास संसार का दो तिहाई सोना और कई कम्पनियों के हिस्से और कई

सरकारों के 'बांड' इकट्ठे हो गये। अपने खोये हुए प्रभुत्व को प्राप्त करने के लिये इंग्लैंड ने सन १६२५ में अपने यहां 'स्वर्णमान' जारी कर दिया। अर्थात् अपने नोटों के बदले बैंक से सोना देना, जो युद्ध के दिनों में उसने बन्द कर दिया था, फिर प्रारम्भ कर दिया। इस तरह अपनी मुद्रा की कीमत चढ़ा कर इंग्लैंड ने अपना प्रभुत्व तो प्राप्त कर लिया परन्तु उसका विदेशी व्यापार बहुत मारा गया। और यह प्रभुत्व भी ज्यादा देर न रहा। क्योंकि उसके बाद से इंग्लैंड और न्यूयार्क में संसार का साहूकारा अपने यहाँ केन्द्रित करने के लिये लम्बा आर्थिक युद्ध छिड़ा रहा, जिसका इतिहास दिलचस्प है, पर लम्बा है। इस युद्ध का खातमा मन्दी के ज़माने में जाकर हुआ।

मन्दी के हमले को इंग्लैंड और अमेरिका दोनों न सहार सके। पहले इंग्लैंड के विनिमय का सोने से रिश्ता टूटा, बाद को अमेरिका का, और दोनों देशों को अपनी-अपनी फिक्र पड़ी। बात यह थी कि उद्योग-व्यवसाय बन्द हो जाने से बैंकों की लगी हुई पूंजी फंस गई और उसकी कीमत एक दम गिर गई। साख घट जाने से हरएक को अपना रुपया लेने की फिक्र हुई इससे बैंक फेल होने लगे! लन्दन के साहूकारों को १३ करोड़ पौंड की मदद फ्राँस और अमेरिका से मांगनी पड़ी। पर वह तो देखते-देखते लेनदार वसूल कर ले गये। उस समय ब्रिटिश सरकार ने अमेरिका से फिर कर्ज़ की माँग की। मज़दूर सरकार के सामने

अमेरिका ने कई शर्तें पेश कीं जिनमें एक यह भी थी कि ब्रिटिश सरकार मज़दूरों की बेकारी में सहायता पर जो खर्चा करती है उसमें किफ़ायत करे। इस दबाव के सामने मज़दूर सरकार को इस्तीफ़ा दे देना पड़ा और राष्ट्रीय सरकार स्थापित हो गई। अमेरिका ने उपर्युक्त शर्त इसलिये रखी थी, क्योंकि इंग्लैंड के देखा-देखी वहां के मज़दूर भी सहायता की माँग करते थे और इस मन्दी के ज़माने में वहाँ के पूंजीपति यह खर्च बर्दाश्त नहीं करना चाहते थे।

राष्ट्रीय सरकार ने अंग्रेज़ी पौंड का साने से रिश्ता तोड़ दिया। इंग्लैंड के बैंक सोना देने के लिये मज़बूर न रहे। पौंड स्टर्लिंग (कागज़ी पौंड) की कीमत गिरकर दो दो तिहाई रह गई। उधर कुछ अर्से के बाद डालर की भी वही दशा हुई।

(३)

'स्वर्णमान' और स्वर्ण कोण

ऊपर 'स्वर्णमान' और मुद्रा के सोने के साथ रिश्ते का ज़िक्र आया है। इसका क्या अथ है। हम ऊपर बतला चुके हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भुगतान सोने के ज़रिये होता है, और मुद्राओं की कीमतें सोने से नापा जाती हैं। स्वभावतः जिस देश की मुद्रा सोने की ही हो, उसकी कीमतों में अदला-बदली नहीं होगी और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उसे अधिक आसानी रहेगी। जिन मुद्राओं में आए दिन अदला बदली होती हैं, उन पर सट्टा होने लगता है जो उनकी कीमतों को और भी अस्थिर

कर देता है। अस्थिर मुद्रा वाले देश के साथ लेन देन कौन रखेगा ? इससे व्यापार को बहुत धक्का पहुँचता है।

जिन देशों में स्वर्णमान होता है, वहाँ सरकार या केन्द्रीय बैंक इस बात का जिम्मा लेते हैं कि जब कोई चाहे उनसे नोटों के बदले में सोना ले सकता है। इस उद्देश्य से कि वह मांग के वक्त सोना अदा कर सकें वे नोटों की पुश्त पर पर्याप्त 'स्वर्ण-भण्डार' जमा रखते हैं। परन्तु युद्ध के बाद इतना पूर्ण स्वर्णमान, कहीं भी नहीं था। बैंक सिर्फ विदेशी भुगतान के नोटों के बदले सोना देते थे। बैंक आफ़ इङ्गलैंड सन् १९२५ के बाद से ४०० औंस की सोने की सलाखें १७०० पौंड स्टर्लिंग के बदले में बेचता था। (पौंड स्टर्लिंग कागज़ी पौंड को कहते हैं। सोने के पौण्ड को सावरेन कहते हैं।)

एक तीसरा तरीका 'स्वर्ण विनिमय मान' का है। (Gold Exchange Standard) केन्द्रीय बैंक सोना धातु रूप में बेचने या ख़रीदने पर मजबूर नहीं होता पर विदेशी हुंडियां सोने के भाव पर ख़रीदता और बेचता है।

ये तीनों तरीके स्वर्णमान के हैं क्योंकि इनसे कागज़ी मुद्रा की कीमत सोने द्वारा निश्चित होती है या मुद्रा का सोने से रिश्ता बना रहता है। इसमें सोने के आयात निर्यात पर भी कोई बन्दिश नहीं होती और सोने के निर्यात या आयात के अनुसार बैंकों में स्वर्णकोष जैसे जैसे घटता या बढ़ता है उसके अनुसार

नोटों की तादाद भी घटती बढ़ती है, क्योंकि नोटों की संख्या स्वर्णकोश के परिमाण पर निर्भर होती है।

सन १६३१ में इङ्गलैंड ने स्वर्णमान त्याग दिया, जिसका अर्थ यह हुआ कि बैंक आफ़ इङ्गलैंड ने नोटों के बदले सोना बेचना बन्द कर दिया। इससे स्टर्लिंग या काग़ज़ी पौंड का रिश्ता सोने से टूट गया और उसकी कीमत गिर गयी। दूसरे शब्दों में सोने की कीमत पौंड के मुकाबले में चढ़ गई। इससे 'स्वर्ण भंडार' की कीमत भी कृत्रिम रूप से चढ़ गई। कई देशों ने स्वर्ण-भण्डार की कीमत इस तरह कृत्रिम रूप से चढ़ा कर उसके बदले और नोट जारी कर दिए, हालांकि स्वर्ण का परिमाण उतना का उतना ही रहा। इससे उन देशों में मुद्रा की कीमत और भी गिर गई।

राष्ट्रों के स्वर्णभण्डारों की तुलना

[लाख औंसों में]

नाम केन्द्रीय बैङ्क	१६२६	१६३१	१६३६
इङ्गलैंड	३४०	२८०	७४०
संयुक्तराष्ट्र अमेरिका	१३८०	१४५०	३२२०
फ्रांस	७६०	१२६०	७७०
जर्मनी	२६०	११०	८
हालैंड	६०	१७०	१४०
बेल्जियम	८०	१७०	२१०
स्विट्ज़रलैंड	५०	२१०	१६०

विदेशी विनिमय अब भी सोने में होता है, परन्तु अब केन्द्रीय बैंक के 'स्वर्ण कोष' द्वारा न हो कर "विनिमयकोष" से होता है। इस से विनिमय की उथलपुथल का असर देश की मुद्रा या उसके स्वर्ण भण्डार पर नहीं होता—और आन्तरिक व्यापार बखूबी चलता है।

(४)

रुपये और पौंड की विनिमय दर

रुपये और पौंड की विनिमय दर की चर्चा भी हम बहुत दिन से सुनते हैं। हमारी मुद्रा चांदी की है, विदेशों के साथ विनिमय के लिए पहले हमें अंग्रेजी पौंड के साथ कीमत तय करनी पड़ती है और फिर उसके द्वारा दुनियां की मुद्रा के साथ। १६२७ से पहले १५ रुपये का पौंड था, या रुपये की कीमत १ शिलिंग ४ पेन्स थी। १६२७ में १३ रुपये ५ आने ४ पाई का पौंड या १ शिलिंग ६ पेन्स रुपये की कीमत कर दी गई। इसका अर्थ यह हुआ कि पौंड के मुकाबले में रुपया मंहगा हो गया और इसी लिए दुनियां की दूसरी मुद्रा के मुकाबले में भी मंहगा हो गया। इसकी वजह से हिन्दुस्तान के माल की मांग दुनियां में काफी घट गई है। मुद्रा की कीमत घटाने से निर्यात बढ़ता है और मुद्रा की कीमत बढ़ाने से निर्यात घट जाता है।

इससे हमारे माल का विदेशों को निर्यात कम हो गया और विदेशों का माल ज्यादा आने लगा। मान लीजिये आप १५ रुपये की रूई की गांठ इंग्लिस्तान भेजते हैं। इंग्लिस्तान के

व्यापारी को १९२७ से पहले आप की कीमत चुकाने के लिये अपने पास से १ पौंड ख़र्च करना पड़ता। परन्तु अब एक पौंड के बदले उसे सिर्फ़ १३ रुपये ५ आने ४ पाई की रुई मिलती है, पूरे १५ रुपये की रुई लेने के लिये उसे अपने पास से एक पौंड से कुछ ज्यादा खर्च करना पड़ेगा और उसे यह सौदा महंगा पड़ेगा। परन्तु यहाँ पर इंग्लैण्ड से माल मंगाने वाला व्यापारी नफे में रहेगा, क्योंकि अब वह १३ रुपये ५ आने ४ पाई में ही १ पौंड की कीमत का माल मंगवा सकेगा, जब कि पहले उसे उसके लिये १५ रुपये देने पड़ते थे।

(५)

हिन्दुस्तान के बैंक

इंग्लिस्तान के बैंक का कुछ ज़िक्र हम ऊपर कर आये हैं। न्यूयार्क, पेरिस, बर्लिन और अन्य सभी देशों में बड़े बड़े राष्ट्रीय बैंक हैं जो संसार के लेन देन और व्यापार के केन्द्र हैं। ये सब परस्पर इतने सम्बद्ध हैं कि यदि बर्लिन के बैंक पर विपत्ति आये तो अन्य बैंक भी घबरा उठेंगे।

हिन्दुस्तान में बैंक अभी इतने महत्वशाली नहीं हुए। हिन्दुस्तान में सन १९३५ में रिज़र्व बैंक की स्थापना के बाद वही केन्द्रीय बैंक का काम करता है। वही विदेशी मुद्रा खरीदता और बेचता है, और नोट जारी करता है।

भारत का विदेशी व्यापार १७ विनिमय बैंकों के द्वारा होता है। देश की बैंक प्रणाली बहुत पेचीदा और अधूरी है। १०५ 'ज्वाइंट स्टाक' बैंक हैं। यद्यपि सस्ते सूद पर रुपये कर्ज़ देने की बहुत ज़रूरत है, परन्तु इसका प्रबन्ध न होने से उद्योग व्यवसाय उन्नत नहीं हो रहे। यह आवश्यक है कि लोगों को बैंकों का उपयोग सिखाया जावे और उन्हें अधिक से अधिक सुविधाएं सस्ता सरमाया प्राप्त करने की दी जावें।

राष्ट्रीय ऋण

संसार में प्रायः सब राष्ट्रों के ऋण आजकल बहुत बढ़ गये हैं। युद्ध के दिनों में लड़ाकू राष्ट्रों पर ऋण बढ़ गये थे, परन्तु युद्ध के बाद उन्हें कम करने की सब को चिन्ता हुई थी। वर्तमान शस्त्रास्त्रों की होड़ ने पुनः सबको बाधित कर दिया है कि वे ऋण लेकर शस्त्रास्त्र सामग्री तैयार करें। कुछ मुख्य मुख्य देशों के राष्ट्रीय ऋण और प्रति व्यक्ति ऋण नीचे दिये जाते हैं।

राष्ट्रीय ऋण १९३७ में

पौंडों में

नाम देश	ऋण पौंडों में	प्रति व्यक्ति पौंड
आस्ट्रेलिया	२८०२३३२००	४१.९७
बेल्जियम	३८९१४५४८८	४७.३८

नाम देश	ऋण पौंडों में	प्रति व्यक्ति पौंड
केनेडा	७०७६५६२२१	६८.२
चीन	२०४६४०५१६	०.४५
.जेचोस्लोवेकिया	३२७४५३८६६	२२.२६
फ्रांस	२६०६१२४८४	६२.३८
जर्मनी	१४०६४२४२६४	२१.२६
ग्रेट ब्रिटेन	८०१२५१८६३१	१७८.३
इटली	१२०३०८०२४७	२८.२४
जापान	६२६८५६०७२	६.०८
रूस	७११६८२४४६	४.२६
टर्की	८१७४६०३६	४.६७
सं० रा० अमेरिका	७२८४६२२७४६	५६.३६
हिन्दुस्तान	१२ अरब रुपये	३२.७

कई देशों ने पुराने कर्ज़ों को सस्ते सूद के कर्ज़ों में तबदील कर लिया है। विदेशी कर्ज़ों की अदायगी में कई तरह का अड़-चनें पैदा की जा रही हैं। किसी ने बिलकुल जवाब दे दिया है, तो बाकी देश अपनी मुद्रा की कीमतें तबदील कर के अपने कर्ज़ों के बोझ को कम करने का यत्न कर रहे हैं।

विविध देशों की आमदनी, खर्च और व्यापार

(१९३६–३७)

रु० आ० पा०
(पौंड = १३—५ ४)

ब्रिटिश साम्राज्य

नाम देश	आमदनी हज़ार पौंडों में	खर्च १००० पौंडों में	आयात १००० पौंडों में	निर्यात (१००० पौंडों में)
ग्रेट ब्रिटेन	७९२८९	८०२८८६	१०२९०८५	५२१५९४
आयर	३१०३५	३१२२७	३९९१३	२२५०४
सीलोन	७७२६	७६२६	१४२९५	१७९०६
हिन्दुस्तान	८९२३७	९०६६७७	१०७४११	१७४४९४
फ़िलिस्तीन व अन्य मैंडेट (एशिया में)	४६४१	६०७४	१४१३६	४८७६
दक्षिणा अफ्रीका	३९६७६	३०१३६	८६२८२	११२८८९

नाम देश	आय	व्यय	आयात	निर्यात
ज़ंजीबार	४७६	४४६	८७१	१०३७
सूडान	४५७३	४३१०	५५०६	५७२१
कनाडा	७७५४६	७७७१४	११७२५४	१६२३०३
आस्ट्रेलिया	८२८०८	८५५१७	६५५३४	१२८१६१
न्यूज़ीलैण्ड	३११४७	३०६७५	४४२५६	५६७५२
फ़िजी	७५६	६७७	१५०२	२१३५
सं० रा० अमेरिका (हज़ार डालरों में) (१९३७)	५२६३८४०	८१०५१५६	३०८४०६१	३२६५४१६
अनुमान (१९३८)	६३२०५१३	७६१४८५८		
बेल्जियम-(हज़ार फ्रांक में)	१०७३६४२४	१०५६५५६६	२७६६४३३२	२५६८६४२८

ब्राज़ील (हज़ार पौंड में)			३००६५	३६०६६
चीन (हज़ार डालर में)	४७६६६६	६४६७४०	६५३८८६	८३८२५५
फ्रांस -(हज़ार फ्रांक में)	४४३६६७४२	४८१६८४६६	४२३१५	२३६३५
जर्मनी (हज़ार मार्क में)	६०२४	८२३२	५४६८०००	५६११०००
इटली (हज़ार लिरे)	२४७०३०००	२३४१३०००	१३८३७३००	१०४२८६००
जापान (हज़ार येन)	२१७३६३३	२८६७७६७	३५८३१७७	३१७५४२४
सोविएट रूस (हज़ार रूबल)	६८०६६०००	६७११६०००	१३५३०००	१३५६०००

भिन्न भिन्न देशों में सरकारी कर्मचारियों के वेतन

हिन्दुस्तान	वेतन प्रतिमास रुपयों में
गवर्नर जेनरल	२१,३३३
कमांडर इनचीफ़	८,३३३
बंगाल, बम्बई यू० पी० और मद्रास के गवर्नर	१०,०००
पञ्जाब का गवर्नर	८,३३३
इङ्गलिस्तान	
प्रधान मन्त्री	११,१११
लार्ड चाँसलर	११,१११
अन्य मन्त्री	५,५५५
आस्ट्रेलिया	
गवर्नर	३,३३३
मन्त्री	१,२७७
जापान	
प्रधान मन्त्री	६२२
अन्य मन्त्री	४४०
सं० रा० अमेरिका	
प्रेज़िडेण्ट	१७,०६२
वाइस प्रेज़िडेण्ट और मन्त्री	३,४१२

विभिन्न देशों में प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय

नाम देश	वर्ष	आय प्रति व्यक्ति पौंड	वर्ष	आय प्रति व्यक्ति	वर्ष	प्रति व्यक्ति आय
आस्ट्रेलिया	१९२४	१०८	१९२७-२८	१०४	१९३३-३४	७३
केनेडा	१९२७	११६	१९३०	१२०	१९३६	८३
बलगेरिया	१९२६	१३	१९२९	१२	१९३४	१०
चिली	......	......	१९२९	३७	१९३४	२४
जेचोस्लोवेकिया	१९२५	३६	१९२९	३८	......	......
फ्रांस	१९२८	४१	१९२९	४८	१९३६	५६
जर्मनी	१९२५	४७	१९२९	५८	१९३६	७४
ग्रेट ब्रिटेन	१९२४	९०	१९२९	९६	१९३५	९५
ग्रीस	१९२७	२०	......	......	१९३३	१२

नाम देश	वर्ष	आय प्रति व्यक्ति पौंड	वर्ष	आय प्रति व्यक्ति	वर्ष	प्रति व्यक्ति आय
हङ्गरी	१६२७	२३	१६२६	१६	......	......
हिन्दुस्तान	१६२४	८	१६२६	६	......	......
इटली	१६२७	२४	१६२६	२६	१६३२	२४
जापान	१६२५	१४	१६२८	१८	१६३६	११
लटविया	१६२५	११	......	......	१६३५	३३
सं० रा० अमेरिका	१६२४	१३४	१६२६	१३७	११३६	१००

[एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेन १६३७ की जिल्द से]

विश्वव्यापी मन्दी और अर्थ संकट

पिछले कुछ वर्ष संसार में भयंकर अर्थ संकट के रहे हैं। विश्वव्यापी मन्दी और अर्थ संकट की वजह से उद्योग व्यवसाय चौपट हो गए और कई बैंकों और व्यापारियों के दिवाले निकल गए। इतना ही नहीं अधिकांश सरकारें भी दिवालिया होते होते बचीं।

आजकल जब एक देश में कोई अर्थ संकट आता है तो उस का असर दुनियां भर में सब कहीं होता है। परन्तु जो देश उद्योग व्यवसाय में जितना बढ़ा होता है उस पर उतना अधिक असर होता है। अमेरिका और यूरोप में इस अर्थ संकट का बहुत असर हुआ—हिन्दुस्तान जैसे देशों में काफ़ी हुआ, मगर उन देशों की निस्वत बहुत कम। तिब्बत जैसे सारी दुनियाँ से अलग-अलग और पिछड़े हुए देशों में शायद कुछ भी प्रभाव न हुआ।

सन् १९२९ में अचानक दुनियाँ के व्यापार की हालत गिर गयी। चीज़ों की कीमतें गिरती गिरती इतनी नीचे चली गयीं कि उन कीमतों पर माल बेचने में घाटा होने लगा। सैकड़ों कारख़ाने बन्द हो गए। खेती की पैदावार का भी यही हाल हुआ। सैकड़ों मन गेहूँ इंजनों में ईंधन की तरह जला कर नष्ट कर दिया गया, फलों के टोकरे दरियाओं में बहा दिये गये और कपास के खेत जला दिये गये।

१६३३ में ब्राज़ील में कहवे की १ करोड़ ४० लाख बोरियाँ नष्ट कर दी गयीं।

यह सब इसलिये किया गया कि उन खेतों को काटने और बीनने तथा मंडियों में ले जाने में जितना ख़र्चा आता था वह भी उनकी बिक्री से वसूल न होने वाला था—इस कदर चीज़ों के दाम गिर गये थे।

एक तरफ़ यह हाल था—दूसरी तरफ़ अभी लोग बेकार भूख के मारे भटकते फिरते थे, उन्हें काम न मिलता था। कारख़ानों या खेतों का माल बिके तो वहाँ काम हो। मज़दूरी न मिलने के कारण इनके पास पैसा न था। चीज़ें इतनी सस्ती थीं, कि जान बूझकर उन्हें नष्ट किया जा रहा था, तिस पर भी लोग भूखे थे और दाने दाने के मुहताज थे। पानी में पड़ी हुई मछली प्यास से तड़प रही थी।

यह एक पहेली है जिसकी अर्थशास्त्री भिन्न भिन्न तरीके से व्याख्या करते हैं। इस आर्थिक संकट के सम्बन्ध में उनमें भारी मतभेद है। मगर इससे इतना अवश्य स्पष्ट हो गया कि हमारे वर्तमान समाज की आर्थिक रचना में कोई बहुत बड़ा नुक्स है।

इस मन्दी के ज़माने में बेकारों की संख्या लाखों और करोड़ों पर पहुंचने लगी, बैंक फेल होने लगे। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बन्द हो गया। साख एक दम उड़ गयी—और जब साख उड़ गयी, तो सबने सोना इकट्ठा करके अपने खजानों में बन्द

कर दिया। सब देशों ने सोने का निर्यात बन्द कर दिया-हुन्डियों को कोई पूछता न था। इन दिनों में यदि कहीं से सोना बाहर गया तो वह हिन्दुस्थान और मिश्र से। हिन्दुस्थान से इस अर्से में सब मिलाकर ३८५२५४२६ औंस सोना जिसकी कीमत ३२६ करोड़ रुपया थी, बाहर विदेशों में चला गया। बड़ा हिस्सा इङ्गलैंड में गया।

इस संकट का एक कारण युद्ध के कर्ज़ों को बताया जाता है। युद्ध के दिनों में अमेरिका ने सब को कर्ज़ा दिया था। युद्ध के बाद उसने कर्ज़ा वापस माँगा। विजयी राष्ट्रों ने यह रुपया जर्मनी से हर्जाने के रूप में वसूल करना चाहा, क्योंकि वे तो युद्ध में सब खर्च कर बैठे थे। जर्मनी भी सब गँवा बैठा था, वह कहाँ से देता। आखिर उसने अमरीका से कर्ज़ा लिया और हर्जाने की किस्तें अदा कीं। मतलब यह हुआ कि अमरीका के रुपये से ही अमरीका की अदायगी होने लगी। आजकल एक देश से दूसरे राष्ट्र में इतनी बड़ी बड़ी रकमों का थोड़े थोड़े अर्से बाद लेन देन कोई आसान बात नहीं होती क्योंकि रुपया कहीं पड़ा थोड़ा ही रहता है, वह सब व्यापार व्यवसाय में फंसा होता है और जब खास तौर पर रकमें सोने के रूप में अदा करनी हों तो मुश्किल और बढ़ जाती है। इसी प्रक्रिया में संसार के विदेशी विनिमय मुद्रा और बैंकों पर भारी खिंचाव पड़ना लाज़मी है। इतने देशों की अर्थनीति और परस्पर लेन देन में खलबली पैदा कर दी।

अमरीका संसार का सोना कर्ज़े की शकल में वसूल करके उसे सम्हाल कर बैठ रहा।

उत्पत्ति और खपत में सामंजस्य न होना भी मन्दी का कारण था। सब देश अपने अपने यहाँ माल तैयार करने और अपने आपको स्वात्मनिर्भर बनाने का उद्योग कर रहे हैं। महायुद्ध के दिनों में सब देशों ने स्वात्मनिर्भरता का पाठ सीखा और अपने देश में हर एक चीज़ की पैदावार को प्रोत्साहित करने के लिये विदेशों के माल पर चुङ्गियाँ लगायीं। व्यवसायों में भीषण प्रतिस्पर्धा और मुकाबला शुरू हुआ और देखादेखी कीमतें गिरायी जाने लगीं। नतीजा यह हुआ कि माल अधिक जमा हो गया और खपत उतनी न हुई सर हेनरी स्ट्राकोश का कथन है कि १९३१ में इतना माल संसार के गोदाम में जमा था कि अगले सवा दो वर्ष तक हाथ पर हाथ धर कर बैठे लोग उसी पर गुजारा कर सकते थे। यह अत्यधिक उत्पत्ति ही मन्दी का कारण हुई।

और भी कई तरह के कारण सुझाये गए हैं। कुछ अर्थ शास्त्री तो अब यह कहने लग गये हैं कि सारी मुसीबत की जड़ मुद्रा और विनिमय है। उसे ही हटा देना चाहिये। डगलिस नामी अर्थशास्त्री की तजवीज़ है कि मज़दूरी और वेतन प्रथा को हटा दिया जाय। आखिर वेतन या मज़दूरी क्या है? ख़रीदने की ताकत बाँटना ही तो है। रुपये से जब यह ख़रीदने की ताकत नापते हैं तो रुपये के ज़रिये यह ताकत मुट्ठी भर व्यक्तियों के हाथ में चली जाती है। इसलिये रुपये का चलन हटा कर देश की कुल

दौलत में साल भर जो खालिस वृद्धि हो उसकी कीमत का अन्दाज़ा लगा कर वह सारे नागरिकों में राष्ट्रीय मुनाफ़े की शकल में बाँट दी जाय। इस प्रथा से उतना ही माल पैदा होगा, जितना खप सकता है। इस प्रकार के और और तरीके सुझाये जा रहे हैं।

सचमुच हमारी दुनियां अजीब है। अगर पैदावार कम कर दी जाती है। तो कीमतें इतनी उँची हो जाती हैं कि लोग खरीद नहीं सकते अगर पैदावार ज्यादा कर दी जाती है तो भाव इतने गिरे जाते हैं कि उद्योग और खेती का काम नहीं चलता और बेकारी फैल जाती है। बेकार कमाएं न तो खरीद कर खायें कहाँ से ?

इस समय उद्योग-व्यापार फिर कुछ चमक पड़े हैं। कीमतें कुछ बढ़ गई हैं। चीजों का आना जाना शुरू होने से जहाज़ों वगैरा के रेट भी बढ़े हैं और वे कुछ मुनाफ़ा कमा रहे हैं। पर इस सारी हिलजुल की तह में लड़ाई को तैयारी है। बैठे ठाले लोगों को और कुछ काम न मिला तो आपस में लड़ने के हथियार बनाने शुरू कर दिये। यह समृद्धि और व्यापार का पुनर्जीवन बिलकुल अस्थायी है और हमारी समाज की बीमारी की निशानी है।

रूस की पंचवार्षिक योजनाएं

मन्दी के कारण सब देशों ने यह अनुभव किया कि वर्तमान समाज की अर्थनीति में मौलिक दोष विद्यमान हैं। यदि मन्दी का किसी देश पर असर नहीं हुआ और किसी में बेकारी

ने अपना भीषण रूप नहीं दिखलाया तो वह सिर्फ रूस में। क्योंकि रूस की आर्थिक व्यवस्था बाकी देशों से भिन्न है।

वहां पर व्यवसाय सरकार के हाथ में हैं और वह उनकी उत्पत्ति पर नियन्त्रण करती है। इस लिए उत्पत्ति ज़रूरत से बढ़ने नहीं पाती। वहां पर उत्पत्ति इस्तेमाल के लिये की जाती है, अन्य देशों में उत्पत्ति विदेशों में बेचने के लिये की जाती है। रूस के उदाहरण से फायदा उठा कर प्राय: सब देशों ने अपनी अर्थनीति और व्यवसाय व्यापार को नियन्त्रित किया। इसे "नियन्त्रित अर्थनीति" या "प्लैन्ड इकोनोमी" कहा जाता है। अमेरिका में वहां के प्रेज़ीडेंण्ट रूसवल्ट को इस दिशा में बहुत सफलता हुई।

रूस में अर्थनीति तो पहले से नियन्त्रित थी, मगर उसने एक विशाल योजना अपने व्यावसायिक जीवन में क्रांति उत्पन्न करने की गर्ज से नई तैयार की। हमारे देश की तरह पहले रूस भी कृषि प्रधान देश था। वहां भी उद्योग व्यवसाय बहुत कम थे। यह ज़माना उद्योग व्यवसाय का है। रूस में कारखाने के श्रमियों और किसानों की मनोवृत्ति में भी इसी लिए बहुत भेद था क्योंकि दोनों की जिन्दगियों व रहन सहन में फर्क था। रूस के विधाता स्टालिन और उसके साथियों ने अक्टूबर १९२८ में "प्रथम पञ्चवार्षिक योजना" जारी की। इसे "पायाटिलेटका" नाम दिया गया। यह पञ्चवार्षिक योजना चार वर्ष में ही पूरी हो गई। उसके बाद दूसरी पंचवार्षिक

योजना भी आशातीत सफलता लाभ कर चुकी है और अब तीसरी पंचवार्षिक योजना जारी है।

इस योजना का उद्देश्य रूस को उद्योग-प्रधान (Industrialist) देश बनाना था। ऊपर से यह काम आसान मालूम होता है पर यह भीषण कठिनाइयों से भरा हुआ था। योजना बनाने से पहले बड़ी खोज और जांच की आवश्यकता हुई थी। सबसे कठिन कार्य एक भाग का दूसरे के साथ मेल बिठाने का था। कारखाना खोल देना आसान है, पर अगर कारखानों की वृद्धि के अनुपात से कच्चे माल की वृद्धि न हो तो सब काम धरा रह जायगा। कच्चा माल मिल भी जाय तो उसे कारखाने तक पहुँचाने के लिये पर्याप्त यातायात के साधन तैयार चाहियें। ढुलाई की समस्या के लिये काफी रेलें और मोटरें तैयार चाहियें। उनके लिये लोहा, कोयला और तेल उसी अनुपात में चाहिये, इन्हें प्राप्त करने के लिये खानों की खुदाई, इसकी मशीनें और साधन और फिर उनकी भी ढुलाई वग़ैरा का प्रबन्ध चाहिये। इन सब कामों को चलाने के लिये भाप या बिजली की शक्ति चाहिये। यह सब कुछ तब हो जब योग्य और कुशल विशेषज्ञ और इंजिनियर तैय्यार मिलें। उन्हें तालीम देने के लिये ही ४-५ वर्ष चाहियें ये सब काम अन्योन्याश्रय से होने वाले हैं। परन्तु पांच वर्षों के छोटे से अर्से में इन सब कामों को इस खूबी के साथ पूरा कर लेना कि सबका ठीक समतुलन भी रहे और योजना

पूरी हो जाय एक असाधारण कार्य था। और आसान तो बिल्कुल भी नहीं था। इसे पूरा करने में कितनी ही पेचीदा समस्याएं पैदा हुई। मगर जब इतनी बड़ी योजना सोविएट रूस ने चार साल ही में पूरी कर दिखाई तो संसार चकित हो गया। अर्थनीति और आर्थिक संगठन का यह एक नवीन आविष्कार था जिसकी मिसाल पहले कभी नहीं मिली।

मगर इन योजनाओं को पूरा करने के लिये रूसवासियों ने भारी कुर्बानी की : उन्हें बाहर से उपयोगी यन्त्र और अन्य आवश्यक सामग्री भारी परिणाम में मंगानी पड़ी। उसका मूल्य चुकाने के लिये उसने अपना गल्ला, फल, अंडे, मक्खन मांस आदि बहुत सी खाद्य सामग्री बाहर भेजी. और पेट पर पट्टी बांध कर गुज़ारा किया रूस में क्रान्ति की भावना इन दिनों बहुत तीव्र रही। निर्माण कार्य में राष्ट्र की शक्ति इस उत्साह के साथ पहले कहीं कभी न लगी थी।

आज यह हालत है कि रूस में बड़े बड़े कारखाने चल रहे हैं हज़ारों मील रेल और मोटरों की सड़कें, पुल आदि बन गये हैं। रेगिस्तानों में पानी की नहरें खेती सींच रहीं हैं और नहरों से पैदा की हुई बिजली के ज़रिये मीलों लम्बे चौड़े खेतों में मशीनें चला कर सामूहिक रूप से (Collective Forms) खेती की जा रही है। सामूहिक खेती का मतलब है कि छोटी छोटी जमीनों के मालिक आपस में मिल कर ज़मीनें इकट्ठी कर लेते हैं अरों

उस पर मशीनों से खेती करते हैं। सब हिस्सेदार बन जाते हैं। सोविएट संघ में आज भारी-भारी कारखानों में मोटर इंजन, हवाई जहाज़ और मशीनें तैयार करायी जा रही हैं और उनके लिए अब वह परमुखापेक्षी नहीं।

दूसरी पंचवार्षिक योजना का उद्देश्य यह बयान किया गया था कि उत्पत्ति ढाई गुनी हो जाय, बड़े उद्योगों का परिणाम पहले से आठ गुना हो जाय, कृषि की उत्पत्ति दुगुनी, अनाज ५० फ़ीसदी और मांस की उत्पत्ति तिगुनी हो जाय। मज़दूरियां दुगुनी हो जांय और मकान बनाने पर व्यय दुगुना और समाज सेवा के कार्यों पर चौगुना हो जाय।

प्रथम योजना का परिणाम यह हुआ कि रूस औद्योगिक माल की पैदावार में दुनिया में दूसरे नम्बर पर आगया। यह नीचे के अंकों से पता लगेगा।

कुल पैदावार में औद्योगिक माल

	१९२८ में	१९३२ में
अमेरिका	४४.८	३४.५
सोविएटरूस	४.७	१४.६
ब्रिटेन	९.३	११.२
जर्मनी	११.६	८.६

फ्रांस	७·०	७·०
जापान	२·४	३·४

उपर्युक्त अंकों से पता लगता है कि विश्वव्यापी मन्दी के कारण जहां अन्य देशों ने अपनी पैदावार घटायी, वहां रूस की पैदावार तिगुनी चौगुनी हो गयी; और १९३२ में अमेरिका के बाद उसीका नम्बर हो गया।

सातवां अध्याय

समाज सेवा के कार्य

(१)

मज़दूरों की समस्या

सामाजिक संगठन के दोषपूर्ण और पेचीदा होने की वजह से सामाजिक सेवा और सहायता के कार्यों का महत्व बहुत बढ़ गया है। इस लिये उनका ज़िक्र भी ज़रूरी है। औद्योगिक सभ्यता के साथ उसकी बुराइयां भी आयी हैं, और उनसे उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों को दूर करने के उपाय भी किये जा रहे हैं। कई समाज शास्त्रियों की राय में तो बहुत से दुष्परिणामों के लिये हमारी सामाजिक व्यवस्था और संगठन जिम्मेवार हैं और इसी लिये समाजवादी वर्तमान समाज संगठन को बिलकुल बदल देना

चाहते हैं, जैसा उन्होंने रूस में प्रयत्न किया भी है—परन्तु जिन देशोंमें ऐसा नहीं हो रहा,वहां भी राष्ट्रोंकी सरकारें इसे कर रही हैं।

मज़दूरों की समस्या—सब से कठिन समस्या मज़दूरों की है। मज़दूरों की मज़दूरियों और काम करने के घंटों की समस्या बहुत हद तक सुलझ रही है। घंटे तो प्रायः सब जगह कम किये जा रहे हैं। इङ्गलैण्ड में प्रायः सब व्यवसायों में ४७ या ४८ घंटे का हफ़्ता कर दिया गया है। फर्निचर और रोटी बनाने वाले ३५ घंटे काम करते हैं। फ्रांस में १६३३ से पहले सब व्यवसायों में ४८ घंटे का हफ़्ता कर दिया गया था—१६३६ की आम हड़ताल के बाद सरकार ने ४० घंटे का हफ़्ता कर दिया। जब ब्लम की सरकार के स्थान पर १६३७ में शातों की सरकार आयी और उसने घंटे बढ़ाने चाहे तो उसका तीव्र विरोध हुआ और उसे सिवाय रेलवे में कहीं घंटे बढ़ानेमें सफलता न मिली। स्वीडन, डेनमार्क, स्विटजरलैंड, बेल्जियम सब में ४८ घंटे का हफ़्ता है। आस्ट्रेलिया में ४४ घंटे का। जर्मनी में प्रतिदिन ७½ घंटे काम करना पड़ता है। इटली में १६२६ में १८२ घंटे का महीना था, पर १६३७ में १६६ घंटे का। जापान में ६½ और १० घंटे तक प्रतिदिन काम लिया जाता है। रूस में ७ घंटे प्रतिदिन और हफ़्ते में एक छुट्टी। सालाना छुट्टियों का भी हक है।

घण्टों में कमी की कसर मशीन की रफ़्तार बढ़ा कर पूरी की गई है। जिस की वजह से पुराने मज़दूर या बूढ़े उन पर अच्छी

तरह काम नहीं कर सकते। मशीन पर मेहनत का तरीका अब जैसा बदल गया है, उसमें शरीर के मसल्स या मांस पेशियों और जोड़ों पर इतना खिंचाव नहीं पड़ता, जितना स्नायुओं (Nerves) पर। इसलिये मानसिक दिल-बहलाव वग़ैरा की ज्यादा ज़रूरत बढ़ गई है। कारख़ानों के बाहर दिल बहलाव की सामग्री क्लबें, गाने,तमाशे आदि का प्रबन्ध कारख़ानों की तरफ़ से किया जा रहा है। इस ख़र्चे को वे ख़ुशी से बर्दाश्त करते हैं क्योंकि मनोविज्ञान उन्हें बतलाता है कि इससे उन के श्रमी ज्यादा ताज़ा रहेंगे और बिना थके काम कर सकेंगे।

घण्टे कम करने के इलावा श्रमियों को हर साल सवेतन छुट्टियां देने के लिये कानून फ्रांस, बेल्जियम और नार्वे ने हाल ही में पास किये हैं। जर्मनी और इटली में पहले से ही इसका प्रबन्ध है। रूस में यह प्रत्येक नागरिक के मौलिक अधिकारों में दर्ज है। इंग्लैंड में पार्लियामैंट हाल ही में एक बिल इस सम्बन्ध में पास कर रही है। जिस का दूसरा वाचन (१ मार्च १९३८) में हो चुका है।

मज़दूरियां प्रायः बढ़ी नहीं। परन्तु अब मज़दूरों का मज़-बूत संगठन हो जानेके कारण घटी भी नहीं। मज़दूरोंके ट्रेड यूनि-यन बहुत मज़बूत हैं और प्रायः सब व्यवसायों में यूनियनें हैं। यदि १९२९ की मज़दूरियों को हम १०० के बराबर मानलें, तो

भिन्न भिन्न देशों में कितनी कमीबेशी हुई, यह नीचे बतलाई गई है।

	१९३२	१९३५	१९३६	१९३७
ग्रेट ब्रिटेन	९६	९७	१००	१०३
फ्रांस	१०४	९९	११४	—
जर्मनी	८२	७६	७६	—
सं० रा० अमेरिका	८४	१०२	१०५	१२०
जापान	८५	८८	८८	९३
इटली	८६	८३	८६	१०७
सोविएट रूस	१५०	२४०	३०५	...

१९३७ के साल के रूस के अंक आनुमानिक हैं। परन्तु वहां पर मज़दूरियों की वृद्धि का बाकी देशों से मुकाबला दिलचस्पी से ख़ाली नहीं।

बेकारी—हमारे देश में बेकारी तो बेहद है, पर यहां उसकी गणनाएं इकट्ठी नहीं की जातीं। दूसरे मुल्कों में बेकारी की गणनाएं रखी जाती हैं। पिछले दिनों मन्दी की वजह से बेकारी बेहद बढ़ गयी थी, पर अब युद्ध के लिये शस्त्रास्त्र बनाने की जो होड़ चल रही है, उसने फिलहाल मजदूरों को काम दे दिया है और बेकारी कम हो गयी है। भिन्न भिन्न देशों में बेकारों की गणनाएं इस प्रकार हैं।

१९३७ के शुरू में इङ्गलैण्ड में १३० लाख बेकार थे। पर १९३७ के साल में यह संख्या काफ़ी कम हो गयी।

फ्रांस में १९३६ के अन्त में ४ लाख बेकार थे, १९३७ के अन्त में साढ़े तीन लाख रह गये। बेल्जियम में १९३६ के अन्त में १ लाख बेकार थे। इटली में १९२९ की संख्या को १०० माना जाय तो १९३२ में ७८·५; १९३६ में ९४ और जून १९३६ में १०६ हो गये, जबकि इस अर्से में अबीसीनिया का युद्ध भी लड़ा गया।

अमेरिका में १९३७ में ७८ लाख बेकार थे—यदि सरकार २० लाख आदमियों को सहायतार्थ खोले हुए कामों पर न लगाती, तो यह संख्या अधिक होती।

जापान में १९२९ के अंकों को १०० मानकर—१९३६ में ११५·८ और १९३७ में १२९·१ बेकार थे। १९३७ के जून मास में वहां २ लाख ८९ हज़ार बेकार थे।

बेकारों की सहायता—बेकारों की सहायता के लिये तीन उपाय हैं। बेकारी, बुढ़ापे आदि का बीमा; सहायता के कार्य शुरू करके काम देना, और बेकारी के दिनों में पैसा बांटना।

बेकारी आदि के बीमे—बेकारी के बीमे का तरीका अब सब देशों में जारी हो रहा है। इङ्गलैंड में यह १९११ से जारी है। सब श्रमी इसमें शामिल हैं। बेकारी के बीमे के अलावा बीमारी,

बुढ़ापे, गर्भावस्था आदि के बीमे का प्रबन्ध भी सरकार की तरफ से है जिसमें श्रमी लोग अपने अच्छे दिनों में हलकी किश्तें प्रीमियम की अदा करते हैं। सरकार अपने पास से भी कुछ डालती है और वक्त पर इस फंड में से उनकी सहायता की जाती है। १९३८ के नये कानून के अनुसार इङ्गलैंड में रेट इस प्रकार हैं।

बीमारी के लिए

	कितना जमाकरना होता है	प्रतिसप्ताह क्या मिलता है
पुरुष प्रतिसप्ताह	१ शिलिङ्ग ८ पैन्स	१५ शिलिङ्ग
स्त्री ,,	१ ,, २ ,,	१२ ,, विवाहित या विधवा
		१० शिलिङ्ग अविवाहित

बीमारी का बीमा २६ हफ्तों तक मिलता है। गर्भ की अवस्था में स्त्री को ४० शि० और बिलकुल निकम्मा हो जाने की अवस्था में हमेशा के लिये ६ शि० प्रति सप्ताह।

बेकारी का बीमा

पुरुष [प्रति सप्ताह]	२ शि० ३ पैन्स	१७ शि०
स्त्री ,,	२ शि०	१५ शि०
लड़की ,,	१ शि० ६ पैन्स	१२ शि०

१९३७ में इंग्लैंड ने बेकारी के बीमा फंड में १४ लाख पौण्ड खर्च किए। बुढ़ापे की पैन्शनों में ७ लाख व्यक्तियों को [६५ साल से ऊपर] २ करोड़ पौण्ड दिये गए।

जिन बेकारों का बीमा नहीं हुआ, उन्हें ४० रुपये प्रति मास के हिसाब से इंग्लैंड में और ६० रु० प्रति मास के हिसाब से फ्रांस में सहायता भी दी जाती रही है।

अमेरिका ने १६३७ में १५ कानून बनाये, जिनका उद्देश बेकारों की सहायता आदि था। अकेली विस्कन्सन की रियासत ने १० लाख डालर ५२ हजार बेकारों में तकसीम किये।

(२)

राष्ट्रीय स्वास्थ्य तथा अन्य कार्य

समाज सेवा के अन्य उपयोगी कार्यों पर भी राष्ट्रीय सरकारें काफी खर्च कर रही हैं।

राष्ट्र के स्वास्थ्य के लिये हर साल लाखों रुपया खर्च किया जा रहा है। बच्चों और माताओं की स्वास्थ्यवृद्धि—उनके लिये खेल के मैदान पार्क वग़ैरा बनाए जा रहे हैं। गन्दी बस्तियोंको साफ़ करके स्वास्थ्यदायक मकान शहरों के सुन्दर नक्शे बनाकर बनाए जा रहे हैं। देहाती आबादी के लिए हस्पताल खोले जा रहे हैं, जिनमें योग्य दाइयां रखी गयी हैं जो ग़रीब लोगों के घर मुफ़्त जाती हैं। म्युनिसिपेलिटियां ग़रीब बच्चों को दूध और फल मुफ़्त बांटती हैं। सरकार भी इसमें सहायता देती है। हर साल ५० करोड़ पौंड के लगभग इस काम पर खर्च होता है। इंग्लैंड में ७१ स्कूल अन्धों के लिये, ४७ बहरों गूँगों के लिए, १६० मानसिक रोगियों के लिए हैं।

३४ लाख पौंड प्रति वर्ष खर्च कर के इंग्लैंड के चारों ओर पार्कों की हिफाज़त की जाती हैं। इसे वहां की 'हरी पेटी' कहते हैं। युद्ध के बाद से मार्च १९३७ तक सवा तेंतीस लाख नये मकान मकानों की योजना के अनुसार तैयार हुए।

अमेरिका में १९३७ में १५ लाख डालर बच्चों के स्वास्थ्य-गृहों के लिये, २८ लाख डालर लूले लंगड़े बच्चों के लिये और ३८ लाख डालर ज़च्चाओं और शिशुओं की सहायता के लिए खर्च हुए। इसके अलावा ८० लाख डालर राष्ट्र की स्वास्थ्य वृद्धि के लिये खर्च हुए।

इन कार्यों के अलावा नगरों में अच्छा दूध, ताज़ा मक्खन ताज़ी सब्ज़ी और मांस, फल—साफ़ पानी रोशनी वग़ैरा पहुँचाने का संतोषजनक इन्तज़ाम करने के लिये विशेष कानून बनाए गये हैं और म्युनिसिपेलिटियों को सरकारें सहायता देती हैं।

इन सब कारणों से विदेशों में लोगों का स्वास्थ्य बहुत उन्नत हो गया है। बीमारी और महामारी कभी नहीं सुनी जाती है, आती भी है तो मिनटों में भगादी जाती है। मृत्यु संख्या कम हो गई है और उमीदज़िन्दगी (Etpectation of Life) बढ़ गयी है जो नीचे की गणनाओं से स्पष्ट है—

मृत्यु संख्या प्रति हज़ार आबादी

नाम देश	१८८१–८५	१९३३–३६
आस्ट्रिया	२८·१	१३.२
बेल्ज़ियम	२०·७	१२.६
इंग्लैंड	१९.४	१२·०
फ्रांस	२२.३	१५·५
जर्मनी	२५·६	११·४
हालैंड	२१·४	८·६
हंगरी	३२·९	१४·६
इटली	२७·३	१३·६
स्विज़रलैंड	२१·३	११·६
हिन्दुस्तान	—	२४·

उमीद ज़िन्दगी

नाम देश	साल	पुरुष	स्त्री	साल	पुरुष	स्त्री
आस्ट्रिया	१८६६-७५	३०.३४	३३.१०	१९३०-३३	५४.४७	५८.५३
डेनमार्क	१८३५-४४	५०.८७	४३.३१	१९३१-३५	७२.०	७२.४
इङ्गलैण्ड वेल्स	१८३८-५४	३९.९१	४१.८५	१९३६	६०.१२	६४.४३
आयर	१८९०-९२	४९.१	४९.२	१९२५-२६	५७.३७	५७.९३
फ्रांस	१८४०-५९	३९.३०	४०.९९	१९२८-३३	५४.३२	५९.०४
जर्मनी	१८७१-८०	३५.५८	३८.४५	१९३२-३४	५९.८६	६२.८१
इटली	१८७६-८७	३५.१	३५.४	१९३०-३२	५३.७६	५६.०
स्वीडन	१७५५-७५	३३.९	३६.६	१९२६-३०	६१.१९	६३.३३
सोविएट यूनियन	१८९६-९७	२९.४३	३१.६९	१९२६-२७	४५.२३	४७.६१
सं० रा० अमेरिका (श्वेत जातियां)	१९०२-०२	४८.२३	५१.०८	१९३५	६०.०२	६४.७२
हिन्दुस्तान	१८८१	२३.६७	२५.४८	१९३१	२६.९१	२६.५६
जापान	१८९८-१९०३	४३.९७	४४.८५	१९२६-३०	४४.८२	४६.५४

स्वास्थ्य के साथ-साथ शिक्षा कार्य बहुत अधिक हो रहा है। मनोविज्ञान के आविष्कारों के कारण शिक्षा क्षेत्र में कई आवश्यक सुधार हुए हैं। शिशुओं के लिए शिशुशालाएं (Nursaries) खोली जा रही हैं। परिवार और स्कूल की परिस्थितियों का अन्तर मिटाने की ज़रूरत महसूस की जा रही है, परन्तु जब तक समाज की वर्तमान रचना में परिवर्तन न हो इसमें कठिनाई है। औद्योगिक शिक्षा की ओर प्रवृत्ति बढ़ रही है, औद्योगिक स्पर्धा के इस युग में यह आवश्यक हो गया है।

निरक्षरता—निरक्षरता के विरुद्ध सोविएट यूनियन, टर्की और अमेरिका में विशेष प्रयत्न हो रहे हैं। रूस में १८६५ में ७५ प्रतिशतक जनता निरक्षर थी, और बाकी अर्ध-शिक्षित थी। १६३७ में निरक्षर वहां सिर्फ २२ प्रतिशतक रह गये थे। टर्की में १६२७ में ६१'८ प्रतिशतक निरक्षर थे, परन्तु १६३४ में सिर्फ ५१'१ फी सदी रह गये। टर्की और रूस की इस प्रगति के बाद संसार में हिन्दुस्तान और मिश्र सिर्फ दो ही देश निरक्षरता में बढ़े चढ़े रह गये हैं। एक मिश्र जहां ८० फी सदी निरक्षर हैं और उससे भी बढ़ कर हिन्दुस्तान जहां सिर्फ ८ फी सदी शिक्षित हैं।

बालग़ों (Adults) को पढ़ाने का भी प्रयत्न हो रहा है और उन्हें पढ़ाने की विशेष विशेष विधियों के आविष्कार हाल ही में हुए हैं। ये भी मनोविज्ञान की खोजों के आधार पर हैं।

अन्य कार्य—इन कार्यों के अतिरिक्त नई नई नहरें खोदना, बाढ़ों को रोकना, हवाई हमलों से रक्षा का इन्तज़ाम, कई तरह के इंश्योरेन्स, घनी आबादियों को खुला करना, ये सब काम राष्ट्रीय सरकारें बड़े उत्साह से कर रही हैं।

शिक्षा

विभिन्न देशों में विद्यार्थियों की संख्या (१९३५-३६)

नाम देश	जनसंख्या ५-२० साल हज़ारों में	प्राइमरी स्कूलों में विद्यार्थी	सेकंडरी स्कूलों में	वोकेशनल	प्राइवेट स्कूलों में	यूनिवर्सिटी व कालेज	प्रतिशतक ५-२० साल की आबादी में कुल विद्यार्थी
केनाडा	३,२५०	१८१६०९४	३०१६५८	पहले खानेमें शामिल	१००२००	६३२३४	७१ प्रतिशत
आस्ट्रेलिया	१८६६	८८०८७१	१३७८४२	,,	२४३१६६	१०५६४	६८ ,,
न्यूज़ीलैण्ड	३६९	२०८८१५	४०२१५	१८१५६	३३३८७	४६६७	७१ ,,
दक्षिणी अफ्रीका (यूरोपियन)	५८४	३२०६५६	४८२८३	२४४२४	२३७३७	७८६२	७३ ,,
आयर	८६०	४८१००७	३५१११	६४२४३	शून्य	५५६४	६१ ,,
ब्रिटिश इंडिया	६७७४०	११०६५००७	१३८८१४१	२५७२७६	६८६१०९	१११८०८	१४ ,,
इंग्लैण्ड	६५०४	५३०८२७१	४६३९०६	११०६५५१	३०००००	१३७१६	७६ ,,

आठवां अध्याय

यातायात और संवाद वहन

(१)

विशाल समुद्रों की उत्ताल तरङ्गों पर, ईस्पात की लम्बी समानान्तर पटरियों, और कंक्रीट और कोलतार की अनन्त सड़कों पर तथा ऊँचे आसमान में बादलों की पीठ पर से होकर आज मानवीय सभ्यता एक तीव्र वेग से दौड़ी जा रही है, और मनुष्य देश और काल की सीमाओं पर विजय प्राप्त कर रहा है। ज्यों ज्यों जहाज़, रेलवे, मोटर और हवाई जहाज़ों की अभिवृद्धि होती जाती है, त्यों त्यों हमारी सभ्यता, उन्नत और विशाल रूप ग्रहण कर रही है। दुनियां का दायरा छोटा होता जा रहा है।

आज यदि कहीं इन यातायात और संदेश वहन के साधनों को नष्ट कर दिया जाय तो हमारी शानदार सभ्यता का प्रदीप बुझ

जायगा और हम एक दम अपने आपको आज से कम से कम पांचसौ वर्ष पहले के ज़माने में पायंगे। दुनियां के कल कारखाने सब बन्द हो जांयगे और नगर एकदम उजाड़ हो जांयगे। इङ्गलैंड और कुछ और देशों में लोग भूखे मरने लगेंगे। अधिकांश दुनियां में प्रलय का दृश्य मच जायगा। कुछ ही वर्षों में दुनियां की आबादी नष्ट होकर आधी से भी कम रह जायगी। यह दुर्घटना किसी विश्वव्यापी प्लेग या महामारी से भी अधिक भीषण होगी।

हमारे यातायात के मुख्य साधन आजकल समुद्रों में जहाज़, ज़मीन पर रेलगाड़ी और मोटर तथा हवा में हवाई जहाज़ हैं। पुराने तरह की किश्तियां, और घोड़ा गाड़ी और दूसरे वाहन भी हैं, पर उनसे हम बहुत परिचित हैं। इसमें सन्देह नहीं, उन्होंने भी अपने ज़माने में हमारे जीवन और सभ्यता में क्रांति की होगी। पर आज की सभ्यता तो इन नये यान्त्रिक और भाप तथा बिजली की शक्ति से चलते वाहनों की सभ्यता है। इसलिये यहां हमें इन्हीं की ज़्यादा चर्चा करनी है।

(२)

समुद्री जहाज

बिलकुल प्रारम्भ में मनुष्य नदी में बहते हुए दरख़्तों के तनों पर बैठ कर जलयात्रा करना सीखा। बाद में उसने तनों को छील छील कर गहरा कर लिया और 'डोंगी' की सवारी करने

लगा। मिश्र यूनान और रोम की सभ्यताओं के ज़माने तक तो वह अच्छी बड़ी किश्तियां और जहाज़ बनाने लग गया था। जहाज़ों को हवा के ज़ोर से चलाया जाता था—और हवा के ज़ोर को इकट्ठा करने के लिए बड़े बड़े पाल लगाये जाते थे।

अब तक जहाज़ लकड़ी के बनते थे। वे बहुत बड़े-बड़े और सुन्दर बनते थे और कई सौ आदमी उनमें बैठ सकते थे। सब से पहले दुनियां में १८१९ में 'सवाना' नामी जहाज़ ने, जिसका वज़न सिर्फ़ ३५० टन था, भाप की शक्ति का इस्तेमाल किया। वह सवाना से लिवरपूल २६ दिनमें पहुँचा। आजकल के जहाज़ इस सफ़र को ४ दिन में तय करते हैं। आज कल जहाज़ों की गति २५—३० मील प्रति घण्टा है।

पिछले एक सौ वर्षों में जहाज़ों ने बहुत तरक्की की है। उनकी बनावट, आकार, मज़बूती, गति में, उनके अन्दर की सजावट में ज़मीन आसमान का अन्तर पड़ गया है। आजकल का जहाज़ चार हज़ार से ऊपर आबादी का एक तैरता हुआ नगर या बड़ा होटल होता है। जिसमें मनुष्य के आराम की हर एक चीज़ उपस्थित होती है। कमरों में ठण्डे गर्म पानी के नल, ऊपर खेलने कूदने के मैदान, तैरने के तालाब, सब चीज़ें मौजूद होती हैं। जहाज़ों में रेडियो के ज़रिए हर वक्त दुनियां भर के समाचार आते हैं और जहाज़ पर छपने वाले अख़बार के जरिए सब के पास पहुँचते हैं। रेडियो के ज़रिये ही मिनट मिनट के ऋतु समा-

चार मिलते हैं जिनसे आने वाले तूफ़ान वर्षा का कई दिन पहले पता लगजाता है। दिशा, स्थान, और दूरी को नापने वाले विचित्र और बुद्धि को चक्करमें डालने वाले यन्त्र लगे होते हैं, जिनके ज़रिये पग पग पर जहाज को अपनी स्थिति का ज्ञान होता है। डाक के जहाज़ों के ऊपर छोटे हवाई जहाज रखे रहते हैं। जो बन्दरगाह पर पहुँचते ही डाक के थैलों को लेकर बन्दरगाह पर छोड़ आते हैं।

१६३६ में इङ्गलैण्डमें 'क्वीन मेरी' नायका जो जहाज़ बना था, उस का वज़न ६० हज़ार टन है और लम्बाई एक हज़ार फीट से अधिक है। उससे पहले "एक फ्रैन्च" नामी जहाज़ का संसार में पहला नंबर था। उस की लम्बाई ६५६ फीट और चौड़ाई (bean) १०० फीट और ऊंचाई ११२ फीट है। उसका वज़न ५६, ५५१ टन है। उसकी शक्ति एक लाख "अश्व बल" (Horse Power) है। इसकी चिमनियां भी इतनी बड़ी बड़ी हैं कि अगर उन्हें ज़मीन पर लेटाया जाय तो उनके बीच में से दो मोटरकारें साथ साथ चल सकती हैं। प्रति घंटा २५ मीलसे अधिक की रफ़्तारसे यह जाता है।

विविध देशों के पास कुल जहाज़

१६३७ में विविध देशों के पास जितने जहाज थे, उनका अन्दाज़ा उनके कुल वज़न से लगता है।

	टन
ग्रेट ब्रिटेन	१, ७५, ४३, ६४१
ब्रिटिश उपनिवेश	३०,८५,५६८

फ्रांस	२८७०४२६
जर्मनी	३६३७२४१
इटली	३२१२६३४
जापान	४४७५११०
नार्वे	४३४७६१२
संयुक्तराष्ट्र अमेरिका	६७६५८५४

संसार में कुल मिलाकर अन्दाज़न ६, ६२,२८,०२४ टन जहाज़ १६३७ में थे । यहां पर टन जहाज़ का वज़न नहीं लिया जाता, बल्कि पानी में डालने से वह कितने टन पानी की जगह घेरेगा—दूसरे शब्दों में यह जहाज़ के 'आयतन' का नाप है ।

बन्दरगाह और मार्ग

न्यूयार्क, लंदन, हैम्बर्ग, कोब (जापान), मार्सेलीज़, लिवरपूल, जिनोआ, संसार के बड़े बन्दरगाह हैं जिनमें सैकड़ों जहाज़ आते जाते हैं । हाल ही में सिंगापुर में जहाज़ों का बड़ा भारी बन्दरगाह और ब्रिटिश नौ सेना का बहुत बड़ा केन्द्र स्थापित किया गया है ।

प्रतिदिन आने जाने से समुद्र के मार्ग भी अब प्रायः निश्चित हो गए हैं । पनामा, स्वेज़ और सिंगापुर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के बहुत महत्वपूर्ण मार्ग हैं । अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों के अनुसार ये सदा खुले रहते हैं । युद्ध हो या शान्ति, इन्हें किसी भी जहाज़ के लिये बन्द करने का अधिकार किसी को नहीं ।

स्वेज़, पनामा, कोल, डार्डेनल्स और बास्फ़ोरस समझौते के अन्दर हैं। इटली ने जब अबीसीनिया पर हमला किया तो इंग्लैंड इसी समझौते के कारण इटली के जहाज़ों को स्वेज़ में आने से रोक न सकता था।

(३)

रेलगाड़ी

इङ्गलैंड में कोयले के छकड़ों को लेजाने के लिये पहले लोहे की सड़कों का इस्तेमाल १८वीं सदी में हुआ। लकड़ी के तख्ते बिछा कर लोहे की चादरें ऊपर लगादी गयीं। विलियम जोसेप ने ढले हुए लोहे की पटरियों का तरीका निकाला, जो तीन फ़ीट लम्बी होती थीं। अब उन्नति होते होते भारी इस्पात की पटरियां बिछाई जाती हैं, जिनका वज़न प्रतिगज ९० पैंड होता है, और उन पर से भारी से भारी रेलगाड़ी ६० मील फ़ी घण्टे की रफ़्तार से बिलकुल सुरक्षित गुज़र जाती है।

भाप के इञ्जन का आविष्कार करने वालों में कई व्यक्तियों का हिस्सा है, पर इंगलैंड के स्टीफेंसन का नाम विशेष प्रसिद्ध है। उससे पहले एक फ्रांसीसी कारीगर कुगनो (Cugnot) ने सड़क पर चलने वाली एक गाड़ी बनायी थी—जो भाप से चली थी। मगर काबू में न रहने से वह एक दीवार से जा टकरायी, दीवार ढह गयी, भापका बक्स फट गया और कई व्यक्तियों को चोटें आयीं। फ्रांस की सरकार ने "ऐसी ख़तरनाक चीज़" का आविष्कार करने

वाले को जेल में बन्द कर देना उचित समझा। साथ ही उसकी गाड़ी को भी ज़ब्त कर के बन्द कर दिया। २७ सितम्बर १८२५ को दुनियां की पहली रेलगाड़ी चली। उसके आगे आगे एक घुड़सवार लाल झण्डी लेकर घोड़े को सरपट दौड़ा रहा था। ताकि लोग सामने से हट जांय। चार साल बाद स्टीफेन्सन ने एक और इञ्जन बनाया, जिसने ३५ मील तक गाड़ी को ६ मील प्रति घण्टे की "भयङ्कर रफ़्तार" से खींचा। उस समय यह रफ़्तार सचमुच भयंकर थी। लोग कहते थे कि इस रफ़्तार से जाने वाले यात्री तेज़ हवा में दम घुट कर मर जायगा।

आधुनिक रेलों में अब बहुत तरक्की हो चुकी है। दुनियां में सब तेज़ से गाड़ी चेटनहम फ्लायर एक्सप्रेस है, जो स्विंडन से लंडन ७७ मील का मार्ग ६७ मिनट में तय करती है। औसत रफ़्तार ६९ मील प्रति घंटा हुई। एक दफ़ा परीक्षण के तौर यह सफ़र इसने ५६ मिनट ४७ सैकंड में भी तय किया था—इस सफ़र में औसत रफ़्तार ८१ मील प्रति घंटा रही और कई जगह ९० मील तक भी चली गयी।

१९३६ में बर्लिन और हैम्बर्ग के दर्मियान एक गाड़ी को १२४ मील प्रति घंटे की रफ़्तार से चलाया गया था। आजकल सब कहीं गाड़ियों की औसत रफ़्तार ६० मील प्रति घंटा करने के प्रयत्न हो रहे हैं। और खास तेज़ गाड़ियों को ७० मील की रफ़्तार तक लेजाना चाहते हैं। ७० मील की रफ़्तार प्राप्त करने के लिये कहीं कहीं ८० और १०० मील की रफ़्तार भी करनी पड़ती है।

बड़े बड़े इञ्जन बनाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। अमेरिका में एक बहुत बड़ा इंजन "यूनियन पेसिफ़िक" के नाम से तैयार किया गया है। यह तीन हज़ार टन की गाड़ी को अकेला खींच सकता है—२० टन कोयला और साढ़े तेरह हजार गैलन पानी साथ में रहता है। आजकल रेलवे के इंजिनों और डब्बों को भी "स्ट्रीम लाइन" आकार का बनाने की प्रवृत्ति है। इस आकार में सीधे किनारे हटा कर सब तरफ़ गोलाई कर दी जाती है, ताकि हवा की ज्यादा रुकावट न हो। भारतवर्ष में ४३ हजार मील रेलवे लाइन है और उसमें सब मिला कर ८ अरब ८० करोड़ रुपये की पूंजी लगी है।

विभिन्न देशों में रेलवे का विस्तार

(मीलों में)

नाम देश	कुल कितने मील रेल है
इङ्गलैंड	१६,२६६
हिन्दुस्तान	३१,७८१ (अंग्रेज़ी राज्य)
....	७६५६ (रियासतों की रेल)
केनेडा	५७१७१
आस्ट्रेलिया	२७०५६
न्यूज़ीलैंड	३५०६
दक्षिणी अफ्रीका	१३२१३
सं० रा० अमेरिका	२,५२,८७१

चीन	८१३१
फ्रांस	२६,३८०
जर्मनी	३६ २७१
ईरान	६१३
इटली	२२,६६० (किलोमीटर)
जापान	१४,६१२
टर्की	४३४०

मोटरकार और बसें

रेलवे इंजनोंको कोयला और पानी ढोना पड़ता है। इस लिए किसी हलकी चीज़ की तलाश हुई। अग्नि की विस्फोट की शक्ति की सहायता लेने का ख्याल आया तो पहले बारूदसे तजुर्बे किये गये। पर यह बजुर्बा ख़तरनाक था। बादमें तेलका उपयोग कामयाब होगया। मोटरकार के सिलैण्डर में पिस्टन के ऊपर तेल और हवा इकट्ठे लेजाये जाते हैं जहां बिजली की चिंगारी दी जाती है। तेल में आग लगने से भयंकर विस्फोट होता है और उस के ज़ोर से पिस्टन आगे को धकेला जाता है। यह प्रक्रिया निरन्तर दुहरायी जाती है। मोटर में कई कई सिलैंडर लगाये जाते हैं। पहली सफल मोटर १६०० में बनी। उन दिनों इंग्लैंड में कोई सवारी जिसके आगे घोड़ा या कोई पशु न जुता हो दो मील प्रति घण्टा की रफ़्तार से तेज़ न चलायी जा सकती थी और

उस के आगे आगे लाल झंडी लिए एक आदमी को चलना होता था। आखिर यह नियम हटा।

आज तो रेलों और जहाज़ों में भी तेल का इस्तेमाल किया जा रहा है।

सर मालकम कैम्पबेल १९३२ में २५३.९ मील प्रति घण्टे की रफ़ार से मोटर ले गया था। उसके बैठने की जगह के नीचे सीसे के भारी टुकड़े बोझ के लिये रखने पड़े थे, क्योंकि ४ मील प्रति मिनट की रफ़ार पर मोटर के ज़मीन से ऊपर उछल कर उलट जाने का खतरा था। १९३३ में वह २७२.६ मील की रफ़तार से गया। चीता जानवरों में सब से तेज़ भागता है। कहते हैं कि वह एक मिनट में एक मील की रफ़ार से भाग सकता है। कैम्प-वेल की मोटर उसे बहुत पीछे छोड़ गई। परन्तु रफ्तार को यह कोई हद नहीं। दौड़ में मुकाबला करने वाली कारें आजकल ३११ मील प्रति घण्टा तक भागती हैं। जर्मनी में एक मोटर 'रैकेट' के असूल पर ४३५ मील की रफ़ार से परीक्षण के तौर पर लेजाई गई। मोटरों में प्रतिदिन नये से नये नमूने निकलते हैं। मोटर में रेडियो लगाए गए हैं। लम्बे सफर में मोटर के अन्दर बैठा व्यक्ति रेडियो पर गाना सुन कर अपना दिल बहला सकता है और भी आराम की सब सामग्री लगायी जा रही है। "स्ट्रीम-लाइन" आकृति बहुत लोकप्रिय हो रही है।

मोटरों में शोर और धुएं को हटाने के बहुत प्रयत्न हो रहे हैं। मोटर के इञ्जन को मोटर के नीचे या पीछे लगाने का भी रिवाज चला है ताकि बैठने को जगह ज्यादा निकल सके। टायर बहुत मज़बूत और हलके बनाए जा रहे हैं।

आज दुनियां में मोटरों के बड़े बड़े कारखाने हैं। पैट्रोल, रबड़, इस्पात, मशीन में देने के तेल, खिड़कियों में लगाने के मोटे शीशे, निकल और शीशा ये पदार्थ दुनियां में सब से अधिक मोटरें खपा रही हैं। १९३७ के अन्त में दुनियां में ४,२४,००,००० मोटरकारें थीं। अमेरिका के पास मोटरकारें सब से अधिक हैं। प्रति चार मनुष्यों के पीछे वहाँ एक कार है। अमेरिका में कुल २ करोड़ ८२ लाख ग्रेट ब्रिटेन २२ लाख ६९ हज़ार, फ्रांस २१ लाख ६७ हज़ार, जर्मनी १३ लाख ७० हज़ार और केनेडा के पास १२ लाख ३४ हज़ार कारें थीं। यूरोप में फ्रांस के पास प्रति १९ व्यक्तियों के पीछे एक कार, ग्रेट ब्रिटेन प्रति २१ व्यक्ति, डेनमार्क प्रति २७ व्यक्ति, जर्मनी प्रति ४९ व्यक्ति, इटली प्रति १०३ व्यक्ति के पीछे एक कार है।

मोटर और रेल का मुकाबला—आज सब देशों में मोटरों और रेलगाड़ी के मुकाबले की समस्या भीषण रूप अख्तियार कर रही है। सवारी और बोझा ढोने के लिये मोटरें और लारियां अधिकाधिक संख्या में इस्तेमाल हो रही हैं। रेलें जहां सरकार की मिलकियत हैं वहां इस मुकाबले का उनके कोष पर प्रभाव पड़ रहा है। इसके कई कारण हैं। रेलवे में मज़दूरियां ज्यादा हैं,

निजकी मोटरों और लारियों को चलाने वाले कम मजदूरी या कम मुनाफे पर काम करते हैं। उन पर कई किस्म की दूसरी पाबन्दियां भी नहीं हैं जो रेलवे पर हैं। मोटर लारियों में यात्रियों को ठसाठस बिठा लिया जाता है, वक्त की कोई पाबन्दी नहीं, इतने प्रबन्ध नहीं रखने पड़ते जो दुर्घटनाओं और कष्टों से यात्रियों को बचाने के लिए रेलवे वालों को करने पड़ते हैं। रेलवे के किरायों और महसूलों में रेल की पटरियों का खर्चा और उन पर लगी हुई पूञ्जी का सूद भी वसूल करना होता है, पर मोटरों या लारियों को सड़कों को, इस्तेमाल करने के बदले या तो कुछ नहीं देना पड़ता या बहुत कम देना पड़ता है। मोटरें रेलगाड़ियों की सारी आवश्यकता तो पूरी नहीं कर सकतीं—पर उन्होंने उनकी कठिनाइयां अवश्य बढ़ादी हैं। इसलिए प्रत्येक देश में इसका उपाय सोचा जा रहा है।

एक प्रस्ताव यह है कि राज्य की ओर से ही रेलें और मोटरें चलायी जांय और जहां निजी तौर पर लोग मोटरें, बसें या लारियां चलावें वहां उन पर पाबन्दियां हों और सड़कों को बनाने और उनकी मरम्मत वग़ैरा का खर्चा टैक्स के रूप में उनसे वसूल किया जाय। उत्तरी आयर्लैंड में एक बोर्ड बन गया है जिसने सड़कों का सारा ठेका ले लिया है। इस बोर्ड को रेलों के बोर्ड के साथ मिला दिया गया है। दक्षिणी अफ्रीका और न्यूज़ीलैण्ड में रेलवे कम्पनियों को ही सड़कों के ठेके दे दिये गये

हैं। ये कम्पनियां रेलवे के अतिरिक्त सड़कों को भी ठीक रखती हैं। उनकी मरम्मत वग़ैरा कराती हैं। जर्मनी में यह नियम कर दिया गया है कि एक निश्चित दूरी से ज़्यादा दूरी के लिये मोटरों, बसों या लारियों के किराये रेलवे के बराबर रखने पड़ते हैं कम नहीं। इंग्लैण्ड में मोटरों और बसों को लाइसैंस देने के नियम ऐसे बनाये जा रहे हैं ताकि उन्हें नियन्त्रण में रखा जा सके। अमरीका में कई रियासतें ऐसे ही कानून बना कर मोटरों का नियन्त्रण कर रही हैं।

(६) **मोटरों से दुर्घटनाएं**—आजकल बस्तियां बहुत घनी हैं, आबादी भी बढ़ गयी है और सड़कों पर भीड़भाड़ भी ज़्यादा है। दूसरी तरफ़ ज़माना तेजी और रफ्तार का है, तेज रफ्तार वाली गाड़ियों की मांग है। भीड़भाड़ में तेज रफ्तार की वजह से स्वभावतः दुर्घटनाएं बढ़ गयी हैं। मोटरों से हर रोज कई आदमी कुचले जाते हैं, खास कर बड़े शहरों में। ग्रेट ब्रिटेन में प्रति वर्ष २ लाख दुर्घटनाएँ सड़कों पर होती हैं। १९३४ में प्रतिदिन १९ के हिसाब से—१९३६ में जर्मनी में ८३८१, फ्रांस में ४४१५, अमेरिका में ३८,५०० आदमी सड़क की दुर्घटनाओं से मरे।

इन दुर्घटनाओं को रोकने के लिये कई उपाय किये जा रहे हैं—ड्राइवरों की परीक्षा और उन पर पाबन्दियां, उनके काम के घंटे कम करना ताकि थकावट की वजह से वे सुस्त न रहें,

सड़कों पर जगह जगह रोशनी, नोटिस लगाना, सड़कों की बनावट में ऐसी तबदीली करना कि फिसलने की संभावना न रहे, मोटरों की ब्रेकों में उन्नति, ये सब उपाय किये जा रहे हैं। इसके इलावा सड़कों पर पैदल, साइकल तथा आने और जाने वाली मोटर, इन सबके रास्ते जुदा बनाये जा रहे हैं। सड़कोंको पार करने के लिये पुल या सुरंगें लगाई जा रही हैं। इसके अलावा स्कूलों में लड़कों को रास्तों पर दुर्घटनाओं से अपने आपको बचाने की ख़ास तालीम दी जाती है।

दुनिया में पक्की सड़कें

(शहरों की सीमाओं में जो सड़कें हैं, उन्हें सम्मिलित नहीं किया गया।)

	मीलों में
अमेरिका महाद्वीप	३७,६२,०५४
अफ्रीका महाद्वीप	३१,१६६
यूरोप महाद्वीप	३३,४०,६१६
एशिया महाद्वीप कुल	१०,७३,८३५
हिन्दुस्तान (रिआसतों को छोड़ कर)	२,५५,२८०
ओशनिया	४,६६६,३४३
कुल दुनिया में	८६,६४,०३४

हवाई जहाज़

दुनियां के शुरू से ही मनुष्य आसमान में उड़ने वाले पक्षियों को ईर्षाभरी नज़रों से देखा करता था। १८ वीं सदी में फ्रांस के मांटगोलफ़ियर बन्धुओं ने गुब्बारों में गर्म हवा भर कर उड़ाने के परीक्षण किए। इन में से एक के नीचे एक बक्स लटका कर उस में एक भेड़, एक मुर्गा और एक बतख़ बिठा कर ऊपर उड़ाये गए। यह परीक्षण इतना सफल रहा कि पिलारे डी ऐज़ियर बैलून में बैठ कर उड़ा। यह संसार का सब से पहला उड़ाका था।

जेप्लिन—बैलून या गैस के गुब्बारे के सिद्धान्त पर जो हवाई जहाज़ बनते हैं उन्हें 'ज़ेप्लिन' कहते हैं। काउंट-ज़ेप्लिन नामी एक वैज्ञानिकने इसका पहले पहल आविष्कार किया था, जिस के नाम पर इसे जेप्लिन (Zeppline) कहते हैं। इस में एल्मिनियम के एक बहुत बड़े कई सौ फ़ीट लम्बे चौड़े टैंक में हलकी हाइड्रोजन या हीलियम गैस भरी रहती है। इसी हलकी गैस के जोर से यह ऊपर उठता है। और उस की गति पर नियन्त्रण रखने के लिये एंजिन और यन्त्र लगे रहते हैं। ज़ेप्लिन की रफ्तार तो तेज़ नहीं हो सकती पर वह बड़ा बहुत बन सकता है। १९२८ में जर्मनी ने "ग्राफ़ जेप्लिन" के नाम से बहुत बड़ा ज़ेप्लिन तैयार किया था। एक ज़ेप्लिन की लम्बाई ८०० फ़ीट और चाल ८० मील है। अभी कुछ समय पूर्व जर्मनी ने "हिंडेन

बर्ग" नामी एक अत्यन्त विशालकाय ज़ेप्लिन तैय्यार किया था। इस की लम्बाई एक हज़ार फीट थी। इतना बड़ा ज़ेप्लिन संसार में कभी नहीं बना था। १९३७ में वह अमेरिका के लिए उड़ा। उस में एक सौ के करीब यात्री थे। यह एक शान्दार जहाज़ था जिस में बहुत-से कमरे बने हुए थे और आराम के सब सामान थे। अभी वह अमरीका के किनारे से कुछ ही दूरी पर था कि इस में आग लग गयी। बैलून की हाइड्रोजन गैस ने आग पकड़ कर भयंकर रूप धारण कर लिया। इस दुर्घटना से जर्मन वासियों को बहुत दुख हुआ। परन्तु संसार ने इस तजुर्बे से यह सबक सीखा कि हाइड्रोजन का इस्तेमाल अत्यन्त खतरनाक है। उस के स्थान पर न जलने वाली और हलकी हीलियम गैस के इस्तेमाल को अच्छा समझा जा रहा है। कठिनाई यह है कि हीलियम गैस तैय्यार करने की सामग्री अमरीका में ही उपलब्ध होती है। उस पर अमरीका का एकाधिकार है।

बैलून में बैठकर प्रोफेसर पिकर्ड अपने एक साथी के साथ १९३२ में ६ मील ऊंचे उड़े थे। अपने साथ वहां के वायुमण्डल की अवस्था की परीक्षा करने के लिए वह बहुत से यंत्र ले गये थे।

३० जून १९३७को एम० जे० आडम करीब सवा दस मील ऊंचा उड़ा। उससे पहले १९३३ में एक व्यक्ति ग्यारह मील ऊपर उड़ चुका है।

एयरोप्लेन—एयरोप्लेन की रचना का अधिक श्रेय इङ्गलैंड के राइट बन्धुओं को है। १७ दिसम्बर १६०३ को 'आरविल राइट'(Orville Wrigst) खुद मोटर से चलने वाले एयरोप्लेन में बैठ कर उड़ा। उसकी यह यात्रा कुल १२ सैकण्ड रही। यह पहला अवसर था जब संसार में मनुष्य मैशीन की शक्ति से हवा में उड़ा। अगले वर्ष राइट बन्धुओं ने साढ़े छिहत्तर मील की सफल यात्रा की। १६०६ में एक फ्रांसीसी ब्लेरियेट ने इङ्गलैंड की खाड़ी एयरोप्लेन में बैठ कर पार की।

आज इम्पीरियल एयरवेज़ का जहाज़ जिसमें २२०० हार्स पावर का इञ्जन लगा हुआ है और जिसका वज़न कई टन है, सामान और यात्रियों को लेकर दुनियां के ऊपर सब तरफ़ उड़ता फिरता है। और १०० मील प्रति घण्टे की चाल मामूली बात है।

१६२७ में अमेरिकन हवाबाज़ लिंडबर्ग न्यूयार्क से पेरिस (३६३६ मील) ३३½ घंटों में पहुँचा। अब तो हर रोज़ हवाई जहाज अटलांटिक समुद्र पार करते हैं। रास्ते में हवाई जहाजों के उतरने और तेल आदि भरने के लिये तैरने वाले प्लेटफ़ार्म और हवाई स्टेशन बन गये हैं। संसार की परिक्रमा करने के लिये आज सैकड़ों हवाबाज प्रतिदिन उड़ते हैं और तेज़ रफ़्तार में नये से नये रिकार्ड कायम कर रहे हैं। यूरोप व अमेरिका में कई उड़ाकों की क्लबें बनी हैं जो हवाई जहाजों की दौड़ का मुकाबला कराती हैं, और सैकड़ों युवक नये नये रिकार्ड कायम कर रहे

हैं। जापान, जर्मनी, रूस आदि देशों में हवाई जहाज़ से यात्रा बहुत सस्ती पड़ रही है। डाक तो अब हवाई जहाजों के ही ज़रिये ले जाई जाती है।

हवाई जहाज़ों में अभी तरक्की की बहुत गुञ्जाइश है। हवाई जहाज की यात्रा खतरे से खाली नहीं। मैशीन से उड़नेवाला एयरोप्लेन अभी बहुत बोझ नहीं ढो सकता। इङ्गलैण्ड ने 'आर १०१' के नाम से एक भारी एयरोप्लेन तैय्यार किया था। अब तक उतना विशालकाय एयरोप्लेन संसार में किसी देश ने न बनाया था। यह एयरोप्लेन अपनी पहली यात्रा में ही अत्यन्त बोझ के कारण नष्ट हो गया और १०० के करीब यात्री, जिनमें इंग्लैण्ड के अनेक प्रमुख व्यक्ति भी थे, मारे गये। तब से एयरोप्लेन का आकार छोटा ही रक्खा जाता है।

एक तरह के हवाई जहाज़ बनाने की कोशिश हो रही है जो 'हेलिकोपटर' कहलाएंगे। ये पक्षियों की तरह पंख फड़फड़ाते हुए सीधे आसमान में ऊपर उठेंगे और सीधे ही नीचे उतरेंगे— साथ ही हवा में एक स्थान पर खड़े भी रह सकेंगे। हवाई जहाज़ों को आगे और पीछे दोनों तरफ़ चलाने की तरकीबें भी सोची जा रही हैं।

हवाई जहाज़ों में भी रेडियो आदि के यन्त्र लगे हैं और उड़ते हुए हवाई जहाज़ संसार भर की खबरें सुनते हैं और अपनी

ख़बर दुनिया को सुना सकते हैं। आसमान पर चढ़कर ऋतु के समाचारों का बहुत जल्द पता ले आते हैं।

"डू एक्स" नामक जर्मनी का एक बड़ा हवाई जहाज़ ५१ टन का है। इसके अन्दर एक बिजली का रसोई घर है, एक नाच-घर है, सोने का एक बड़ा कमरा है। १२ इंजन इसे चलाते हैं और जब सब इंजन एक साथ चलते हैं तो कान बहरे होने लगते हैं। इतने इंजनों को चलाने के लिये तेल बहुत चाहिये और यदि तेल बहुत भरा जाय तो यात्रियों के लिये गुञ्जाइश कम हो जाती है और फिर यह यात्रियों के किराये से अपना खर्चा नहीं चला सकता। इसलिये इस तरह के बड़े जहाज़ एक उड़ान में ज़्यादा दूर नहीं जा सकते और मार्ग में उतर कर उन्हें तेल लेना होता है।

रेलप्लेन—ग्लासगो शहर से कुछ दूर 'लेनोक्स पर्वत' के समीप एक विचित्र रेल चलाई गयी है, जिसे हम हवाई रेलगाड़ी कह सकते हैं। यह हवाई जहाज़ भी है, और रेलगाड़ी भी। तोप के गोले के आकार का एक हवाई जहाज है जिस के दोनों सिरे नोकदार हैं। ऊँचे गर्डरों के खंभों पर एक लाइन से यह लटका हुआ है। जहां से यह लटका हुआ है, वहां छोटे छोटे पहिये लगे हैं जो रेल पर चलते है। इसके आगे हवाई जहाज़ के असूल पर पंखा लगा हुआ है, जिस के जोर से यह हवा में लटकता हुआ लाइन पर चलता है। इसे हवामें लटकती हुई रेल भी कह सकते हैं।

हिसाब लगाने पर यह पता लगा है कि रेलगाड़ी की निस्बत यह सस्ती रहती है साथ ही इसकी रफ़्तार बहुत बढ़ाई जा सकती है। १०० या १.० मील प्रति घंटा इसकी मामूली रफ़्तार है। इसे ज्योर्ज बेनी की हवाई रेलगाड़ी कहते हैं।

एयरोप्लेन की तरह 'सीप्लेन' भी बने हैं, जो हवा में उड़ता है, और पानी पर भी चलता है। १६१३ में एक फ्रेंच 'सी प्लेन' ४५$\frac{3}{4}$ मील प्रति घण्टा की रफ़्तार से चला था, और यह बड़ा आश्चर्यजनक रिकार्ड समझा गया था। परन्तु १६३१ में स्टेनफ़ोर्थ ४०७.७ मील प्रति घण्टा की रफ़्तार से उड़ा।

हवाई मार्ग और स्टेशन—हवाई जहाजों की यात्रा बढ़ जाने से अब बाकायदा हवाई जहाजों के लिए रास्ते बन गए हैं और हवाई स्टेशन बन गये हैं। इन स्टेशनों पर यात्री उतरते हैं और एक जहाज का सामान दूसरे जहाज पर लादा जाता है। हवाई जहाजों का युद्ध के लिये महत्व बढ़ जाने के कारण हवाई स्टेशनों और हवाई मार्गों का महत्व बढ़ गया है। हवाई स्टेशनों और मार्गों पर प्रभुत्व के लिये शक्तिशाली राष्ट्रों में परस्पर मुकाबला चल पड़ा है। इङ्गलैंड से इराक होकर भारत और सीलोन जाने वाले रास्ते का महत्व इङ्गलैंड के लिहाज से बहुत बढ़ गया है। लण्डन, क्रायडन, पेरिस, कोलोन, बर्लिन, कराची, ये महत्वपूर्ण हवाई स्टेशन बन गये हैं। इन सब को युद्धकाल में

सुरक्षित रखने के लिये हर तरह की युद्धसामग्री से सुसज्जित किया जा रहा है।

सुरंगों और समुद्र के नीचे

इङ्गलैंड जैसे भीड़भाड़ वाले शहर में इतनी जगह नहीं कि मोटरों और गाड़ियों के लिये चौड़ी और सुरक्षित सड़कें बनायी जा सकें। इसलिये शहर के नीचे सुरङ्ग बनाई गई है। सारे लन्दन शहर के नीचे यह सुरङ्ग करीब ५० मील में फैली हुई है। इस सुरङ्ग में बिजली से चलने वाली "ट्यूबट्रेंस" (सुरङ्ग की गाड़ियां) चलती हैं। अनुमान लगाया गया है कि २४ घण्टे में लगभग १० लाख यात्री इस गाड़ी से यात्रा करते हैं एक घण्टे में ४० गाड़ियां एक स्टेशन पर आती हैं अर्थात प्रति डेढ़ मिनट के बाद गाड़ी आती है।

इसी प्रकार की सुरङ्गें न्यूयार्क, पेरिस और बर्लिन के नीचे भी हैं। ये सुरङ्गें क्या हैं, जमीन के नीचे शहर बसे हैं।

नीचे हर तरह की दुकानें हैं, और आराम के लिये मकान बने हैं। ये सुरङ्गें वर्तमान युग की अत्यन्त अद्‌भुत वस्तु हैं। पिछले ३० वर्षों में सुरङ्गों में बहुत उन्नति हुई हैं। 'कील' की नहर और हडसन नदी के नीचे बड़ी सुरङ्गें खोदी जारही हैं। नीचे संसार की बड़ी सुरङ्गों की लम्बाई दी गयी है—

दुनिया की बड़ी सुरंगें

नाम सुरंग	कहां निकाली गई है—	लंबाई एक सिरेसे दूसरे तक—
सिम्पलन	एल्प्स	१२.३ मील
एपिनाइन	इटली	११.५ ,,
सेंट गोथार्ड	एल्प्स	६.३ ,,
लोच बर्ग	,,	६.० ,,
न्यूकास्केड	वाशिंगटन	७.८ ,,
शिमिजू	जापान	६.१ ,,
सेबर्म	इंग्लैएड	४.४ ,,
माउन्ट रीयल	माउंट रीयल	३.३ ,,

समुद्र के गर्भ में—कुछ अर्सा हुआ, एक वैज्ञानिक 'बाथी-स्फियर' (Bathy Sphere) नामी यन्त्रमें बैठकर समुद्र जलमें २२०० फ़ीट की गहराई तक उतर गया था। इस यन्त्र की चादर बहुत मोटी थी, मोटे शीशे की खिड़कियां लगी थीं और बिजली की बत्तियों की रौशनी से पानी के अन्दर प्रकाश फैल रहा था। नीचे बैठा समुद्र के विवध जन्तुओं के जल युद्ध के फ़ोटो ले रहा था और समुद्र तल के नकशे बना रहा था। इतना ही नहीं उस यन्त्र के अन्दर रेडियो भी लगा था जिसके द्वारा समुद्र के तल के हालात सारी दुनियां को बता रहा था।

समुद्र गर्भ में चलने फिरने के लिये, पनडुब्बियां ईजाद हुई हैं। पनडुब्बियों का इस्तेमाल आजकल ज्यादातर युद्धों में बड़े-बड़े जहाजों पर नीचे से गोलाबारी करने में होता है। ब्रिटिश जल सेना में पहले पहल १९०१ में सब मैरीन का रिवाज हुआ। १९१७ में पनडुब्बी ने २६ सौ जहाज डुबोये। फ्रेंच पनडुब्बी स्करकोफ़ बहुत बड़ी है। यह ३९४ फ़ीट लम्बी ४३०० टन की है। उसमें १२ हज़ार मील की यात्रा के लिये तेल लिया जा सकता है। हवा अन्दर टंकियों में भरी रहती है, यह ९० घंटा लगातार पानी में रह सकती है।

(९)

डाक, तार, टेलिफोन और रेडियो

डाकखाना—आप रोज़ डाकखाने की मार्फ़त चिट्ठियां भेजते और मंगाते हैं। तीन पैसे से लेकर कुछ आनों, रुपयों अन्दर आपके ख़त और पार्सल दुनियां के किसी दूर से दूर स्थान पर डाकखाना पहुँचाता है। आप रुपये भेजना चाहें तो वह काम भी डाकखाना करता है।

मगर क्या कभी आपने सोचा कि आप के इस काम को भली भांति करने के लिये रात दिन कितने आदमी लगे रहते हैं, और कितनी मोटरें, डाक गाड़ियां, स्टीमर और हवाई जहाज दिन रात संसार भर में दौड़ते फिरते हैं।

१९३७ में अकेले इंगलैण्ड के डाकखाने में ९६ करोड़ पौंड

से ज्यादा की चिट्ठियां और कार्ड आये,इसके इलावा ७ अरब ७० करोड़ पार्सल आये। सिर्फ लंदन के डाकखाने में एक हफ्ते में १७ करोड़ चिट्ठियां पहुँची और ऐसी चिट्ठियों की तादाद जिन पर ठीक पता न होने के कारण उन्हें "डेड लेटर" आफिस में भेजना पड़ा ६० हजार थीं। सारे इंग्लैण्ड में १६० लाख मनी-आर्डर, जिनकी कीमत ६५५ लाख पौंड थी, तथा ३४ करोड़ जो डाक हवाई जहाजों से भेजा गया उसकी कीमत ६ करोड़ के पोस्टल आर्डर थे। पौंड के लगभग थी। यह अकेले इंग्लैण्ड की बात हुई।

हिन्दुस्तान में मार्च, १९३७ में २४ हज़ार डाकखाने और ४८ हज़ार लेटर बक्स थे। १९३६-३७ में उन की मार्फत एक अरब से ज्यादा कार्ड लिफ़ाफे और मनीआर्डर भेजे गए। साढ़े आठ करोड़ अखबार, डेढ़ करोड़ पार्सल और १२ करोड़ पेकेट गए।

आज डाकखाने के बग़ैर हमारा काम नहीं चलता मगर जब डाकखाने नहीं थे? फ़ारस में घुड़सवार बादशाहों का संदेश ले जाते थे, उन की रक्षा के लिए फौज जाती थी। कुछ दूर के बाद दूसरा घुड़ सवार जाता। इस प्रकार एक चौकी से दूसरी चौकी पर पहुँचाते हुए, वे संदेश पहुँचा देते थे। और देशों में भी यह रिवाज था।

आज से ५०० साल पहले इंग्लैण्ड में यह प्रबन्ध किया गया कि यदि कोई इन घुड़सवार हरकारों की मार्फत खत भेजना

चाहे तो कीमत अदा कर के भेज सकता है। पोस्ट मास्टर की मर्ज़ी थी जो कीमत ले लेता। लंदन से केम्ब्रिज खत भेजने के लिये ८ पेन्स देना पड़ता था और लन्दन से डरहम के लिए १ शिलिंग।

महारानी विक्टोरिया के ज़माने में रालैंड हिल नामी व्यक्ति ने एक पेनी के पोस्टकार्ड का तरीका निकाला। पालियामैंट में उसका बड़ा विरोध हुआ, पर लोग, विशेषकर व्यापारी इस से खुश थे, इस लिए उस की योजना पास हो गई। १८४० में पहले पहल यह तरीका जारी हुआ।

हिन्दुस्तान में भी पहले एक पैसे का कार्ड था—पर महा-युद्ध के दिनों में कीमत बढ़ा दी गयी।

तार और टेलिफोन—पुराने ज़मानेमें जल्दसे जल्द खबरें पहुँचाने का तरीका यह था कि बड़े बड़े बुर्ज बनाये जाते थे। भय के समय उन पर आग लगा दी जाती, एक बुर्ज पर रोशनी देख कर दूसरे बुर्ज वाला भी आग लगा देता। इस प्रकार सिलसिला मीलों तक चला जाता था। आग के स्थान पर कहीं नगरों का, कहीं झंडियों का और कहीं कहीं सूरज की धूपकी किरणों के प्रतिक्षेप की भी सहायता ली जाती थी। अफ़गान युद्ध में प्रतिक्षेप की सहायता से ७० मील से ज़्यादा की दूरी पर सन्देश भेजा गया।

बिजली का आविष्कार होने पर १८३५ में 'तार' का भी आविष्कार हुआ। १८३६ में एक मोर्स नामी अमेरिकन ने 'कोड' का तरीका निकाला। और १८४४ में पहला संदेश वाशिंगटन से बालटी मोर को इस तरीके से गया। समुद्र पार तार (जिसे 'केबल' कहते हैं) भेजने में कुछ समय लगा। आजकल तो 'टेलिप्रिंटर' का तरीका निकल आया है। एक तरफ़ एक मनुष्य टाइप-राइटर पर टाइप करता जाता है और दूसरी तरफ़ वैसा ही छप कर निकलता आता है। हजारों मीलों की दूरीपर कुछ सैकिण्ड में पूरा पूरा संदेश चला जाता है। अभी "फ़ैसीमाइल प्रिंटर" भी निकला है, जिस से जैसा लिखा हो वैसा का वैसा लेख और हस्ताक्षर भी दूसरी तरफ़ पहुँच जाते हैं।

१८७६ में ग्राहमबेल नामी स्काटलैंडवासी व्यक्ति ने टेलीफ़ोन का आविष्कार किया।

आज तो सब कहीं टेलिफ़ोन का ताल्लुक है। १६३७ में इंगलैण्ड में ३० लाख टेलिफोन थे। २ अरब से ज्यादा स्थानीय और १० करोड़ के करीब विदेशी 'कॉल्स' 'बुक' की गयीं।

इङ्गलैंड में १६३७ में ५८५ लाख संदेश तारों द्वारा भेजे गये। वहां १३२ लाख मील के करीब तार का जाल फैला हुआ है। भारत में १३४१६ तार घर थे—और साढ़े छः लाख मील तार का जाल बिछा था।

बेतार का तार

बेतार की तार का आविष्कार १८६६ में इटली के वैज्ञानिक मारकोनी ने किया था, जब कि उसने इङ्गलैण्ड की खाड़ी पर विना तार के मोर्स के 'कोड' के ज़रिये संदेश पहुँचाया। मारकोनी ने यह सिद्धान्त निकाला कि बिजली द्वारा उत्पन्न हुए कम्पन आकाश के 'ईथर' नामी तत्व द्वारा अनन्त दूरी तक भेजे जा सकते हैं। जिस प्रकार तालाब में पत्थर डालने से पानी की लहरें सब तरफ़ फैल जाती हैं, और अनन्त दूरी तक चली जाती हैं, इसी प्रकार आकाश में बिजली की ताकत से जो कम्पन पैदा किये जाते हैं। वे भी सब तरफ़ फैलते जाते हैं। इन कम्पनों को ग्रहण करने के लिये एक यन्त्र जिसे 'रिसीवर' कहते है, लगाया जाता है।

इसमें एक दिक्कत संदेश भेजने की है। एक व्यक्ति जो संदेश देता है, वे दुनियां के सब ध्वनि ग्राहकों (रिसीवरों) में सुने जाते थे। इसलिये संदेश गुप्त नहीं रह सकते। अब एक यन्त्र निकला है, जिसे "स्क्रेम्बलिङ्ग" मैशीन कहते हैं। यह ध्वनि को तोड़-फोड़ देती है। जहां सन्देश जाता है, वहां रखी हुई वैसी ही मैशीन उस टूटी फूटी ध्वनि को फिर जोड़ कर सुना देती है। इससे यदि कोई रास्ते में सुनने का प्रयत्न करता है, तो कुछ समझ नहीं सकता।

बेतार का टेलिफोन ज्यादा मुश्किल था, क्योंकि उस पर

बात करने वाले व्यक्ति सुनते भी हैं और बोलते भी हैं। इसलिये एक साथ ध्वनि विस्तारक, ध्वनि ग्राहक, और ध्वनिवर्धक यन्त्र एक ही यन्त्र में इकट्ठे करने पड़ते हैं। इसलिये इस आविष्कार को इतना समय लग गया। १९२७ में पहली दफ़ा रेडियोफ़ोन काम में लाया गया। परन्तु 'रेडियो' या ब्राडकास्टिङ्ग इससे आसान था। १९२२ में इङ्गलैंड में पहली दफ़ा 'ब्राडकास्टिङ्ग' हुआ। १९३७ में अकेले इङ्गलैंड में लगभग ८५ लाख 'रेडियो' सेट थे। अमेरिका में १ करोड़ ९८ लाख। हिन्दुस्तान में भी घर-घर रेडियो का प्रचार हो रहा है और गांवों तक में रेडियो का शौक बढ़ रहा है। रेडियो के ज़रिए दुनियां भर के समाचार मिनट मिनटमें पहुँचते हैं। रेडियो में दुनियां भरके सुन्दर गाने, और जगत्प्रसिद्ध व्याख्याताओं और विचारकों के विचार हम प्रतिदिन सुनते हैं। इसके द्वारा संसार की कला, भाषा और विचारों की एकता में भारी सहायता मिल रही है। जर्मनी और रूस में 'ब्राडकास्टिंग' पर राज्य का एकाधिकार है। भारतवर्ष में भी ऐसा ही है। पर कई देशों में, जैसे अमेरिका में, व्यापारी कम्पनियां 'ब्राडकास्टिंग' करती हैं।

ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कार्पोरेशन ने ४०० से ज़्यादा गायकों से ठेके कर रखे हैं। कई कुशल गायकों और गान विद्या के क्लबों को वह सहायता देती है। परन्तु अब गाने के साथ साथ लोग मनोरंजक वार्तालाप और हाल की घटनाओं के सम्बन्ध में ज़्यादा

सुनना चाहते हैं। स्कूलोंमें शिक्षा कार्य केलिए इनका बहुत उपयोग हो रहा है। इंगलैण्ड के ८ हजार स्कूलों में रेडियो सेट लगे हैं। रेडिओ में संदेश भी भेजे जाते हैं। जैसे किसी को बीमारी का या अदालत की तरफ़ से किसी के नाम समन जारी हो और उसका पता न चलता हो, तो रेडियो में ब्राडकास्ट कर दिया जाता है। इंगलैण्ड में ३८ प्रति शतक ऐसे सन्देश सफल हुए हैं और वाञ्छित व्यक्ति समय पर हाज़िर हो जाते हैं।

टेलिविज़न—परन्तु रेडियो से भी चमत्कारपूर्ण आविष्कार टेलिविज़न का है। इसके आविष्कारक इंग्लैण्ड के श्री जान बेयार्ड हैं। मोटे तौर पर इसका सिद्धान्त यह है—जब प्रकाश की किरणें सोडियम या पोटाशियम पर पड़ती हैं तो उस पर से बिजली की धाराएं निकलने लगती हैं। ये धाराएं रोशनी की किस्म के मुताबिक छोटी या बड़ी होती हैं। इन छोटी धाराओं को यन्त्रों की सहायता से बड़े ज़ोर से आकाश में फैंका जाता है। दूसरी तरफ़ 'रिसीवर' बिजली की इन धाराओं को ग्रहण करके फिर रौशनी में परिणत कर देता है। यह रौशनी पर्दे पर भी ली जा सकती है और फोटो के प्लेट पर भी। इस यन्त्र की सहायता से हज़ारों मील पर बैठे हुए अपने मित्र को इस प्रकार पर्दे पर देख सकते हैं, मानो वह हमारे समीप ही बैठा हुआ हो। यदि ध्वनिग्राहक यन्त्र भी साथ जोड़ दिया जाय, तो हम देख भी सकते हैं और उसकी बातचीत भी सुन सकते हैं। अभी गतवर्ष इंग्लैण्ड

के बादशाह के सिंहासनारोहण के कई दृश्य टेलिविज़न और रेडियो के द्वारा 'ब्राडकास्ट' किये गये थे। कई मील दूर बैठे हुए व्यक्ति इन दृश्यों को देख रहे थे और साथ-साथ सब कुछ सुन रहे थे। आम तौर पर अभी ३० मील तक दृश्य और फोटो भेजा जा सकता है। परीक्षण-शालाओं में हज़ारों मीलों तक के परीक्षण सफल हुए हैं। वह दिन दूर नहीं, जब हम टेलिफोन पर बैठे अपने मित्रों से बातें भी करेंगे और उन्हें देख भी सकेंगे—यद्यपि वे हम से हजारों मील दूर बैठे होंगे। इतना ही नहीं, अभी तो सिर्फ अपनी आंख और कान को हम हज़ारों मील पर ले जा सके हैं। वह दिन ज़्यादा दूर नहीं जब स्वाद, स्पर्श और घ्राण की इन्द्रियों को भी हम इतना ही दूर ले जा सकेंगे। हज़ारों मील दूर आराम कुर्सी पर बैठे हम अपने मित्रों से हंस हंसकर बातें करेंगे—उनके चेहरे पर उनके हाव भाव को देख सकेंगे—उनसे हाथ मिला सकेंगे और बग़लगीर हो सकेंगे, वह कोई चीज खाने के लिये लायँगे तो उसका स्वाद ले सकेंगे जब कि खुशबूदार हवा नहीं, बल्कि हज़ारों मील की दूरी से बिजली की धाराएं उनके मनोहर उद्यान के फूलों की महक से हमारे अन्दर निरन्तर मादकता उत्पन्न कर रही होंगी।

नवाँ अध्याय

विज्ञान की दुनियां

आज हमारी दुनियां पर सब ओर से विज्ञान का पूरा पूरा शासन है। पिछले डेढ़ सौ सालों में विज्ञान ने हमारी दुनियां का कायाकल्प कर दिया है। इस समय भी विज्ञान इस तेज़ी के साथ तबदीलियां कर रहा है कि हमारे लिये अपने भविष्य का अनुमान लगाना कठिन हो रहा है। १६ वीं सदी में विज्ञान ने अपने चमत्कार दिखाने आरम्भ किए। इस अर्से में दुनियां की आबादी असाधारण रूप से बढ़ गई। १८०० में सारे यूरोप की को आबादी १८ करोड़ थी। यह आबादी कई युगों की धीमी रफ्तारका परिणाम था। १६१४में वह ४६ करोड़ हो गयी। १८ वीं सदी में इंग्लैंड की आबादी ५० लाख थी। आज उसकी आबादी साढ़े चार करोड़ है।

वर्तमात जगत की वैज्ञानि को उन्नति की हलकी-सी भी रूप रेखा बनाना अत्यन्त कठिन कार्य है। विज्ञान हमारे जीवन के अङ्ग अङ्ग में समा गया है और प्रत्येक क्षेत्र में वह अपने चमत्कार दिखा रहा है। बड़े बड़े वैज्ञानिक वर्षों के अनुभव और खोज के द्वारा नये नये सिद्धान्त स्थिर कर रहे हैं और नये नये पदार्थ ईजाद कर रहे हैं। उनमें से कुछ का जिक्र कर देने से हम एक धारणा बना सकेंगे।

आधुनिक वैज्ञानिकों में आइंस्टीन का नाम जगत्प्रसिद्ध है। यह जाति का यहूदी है और हिटलर यहूदियों का शत्रु है। इस लिए इस महान वैज्ञानिक को जर्मनी से निकल जाना पड़ा है। आइन्स्टीन के सिद्धान्त भौतिक शास्त्र और गणित की कठिन उलझनों से सम्बन्ध रखते हैं। आइन्स्टीन ने न्यूटन के निकाले हुए कुछ सिद्धान्तों में सुधार किया है। उसका एक सिद्धान्त सापेक्षवाद (Theory of Relativity) का है। हमारी स्थान और समय की कल्पनाएं सापेक्ष्य कल्पनाएं हैं। आसमान के उन तारों का हाल हम पहले पृष्ठों में पढ़ चुके हैं। जिनके प्रकाश को हम तक पहुँचने में लाखों करोड़ों वर्ष लगते हैं। यानी आज जो रोशनी हमें दिखाई दे रही है और जिससे हम वर्तमान काल का प्रत्यक्ष अनुभव कहते हैं वस्तुतः वह भूतकाल की वस्तु है। इसके द्वारा देश और काल की भिन्नता एक सापेक्ष वस्तु बन जाती है। वस्तुतः वास्तविकता कोई पूर्ण वस्तु नहीं सापेक्ष्य पदार्थ है।

आइन्स्टीन की एक और कल्पना है कि सुई की एक नोक के भीतर भी गतिशील अणुओं और प्रमाणुओं का एक विश्व छिपा हुआ है। ये एक दूसरे के चारों ओर बिना स्पर्श किए बड़े वेग से घूम रहे हैं। प्रत्येक परमाणु भी अत्यन्त सूक्ष्म विद्युत्कणों (एलेक्ट्रोन्स) से बना हुआ है। ये अत्यन्त सूक्ष्म विद्युत्कणों की गति का भी ज्ञान कराते हैं। हाल ही में परमाणु के टुकड़े किये गये हैं ।

एक वैज्ञानिक सर आर्थर एडिंगटन है। वह जगतके सम्बन्ध में कल्पना करके बतलाता है कि वस्तुतः यह जगत धीरे धीरे बिखर रहा है। जैसे घड़ी की चाबी देने के बाद उस की कमानी धीरे-धीरे बिखरती जाती है, पर जगतको बिखरने में करोड़ों अरबों वर्ष लगेंगे। इस प्रकार की कई वैज्ञानिक-दार्शनिक कल्पनाएं की जा रही हैं । परन्तु इन्हें कल्पनामात्र तक नहीं रहने दिया जाता। गणित शास्त्र और परीक्षाओं द्वारा परख कर के जगत के सम्बन्ध में निश्चित सिद्धांत कल्पित करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

इन तात्विक और दार्शनिक कल्पनाओं का अपना महत्व है। उनसे वैज्ञानिक भौतिक सिद्धान्तों के करने में सहायता मिलती है। परन्तु अब कतिपय व्यवहारिक वस्तुओं की चर्चा करें।

प्राणशास्त्र— महायुद्ध के बाद प्राणिशास्त्र सम्बन्धी खोजें बहुत हुई हैं। महायुद्ध में घायलों की मरहमपट्टी करते हुए

चीरफाड़ के तरीकों में तो उन्नति हुई ही, साथ ही चीर फाड़ करते हुए विचित्र बातों का पता लगा। सब से महत्वपूर्ण कल्पना ग्रन्थियों(ग्लैंड्स)की कल्पना है। हमारे शरीक में असंख्य छोटे बड़े ग्लैंड या ग्रंथियां हैं। ये ग्रंथियां क्या हैं, एक कैमिस्ट की दुकान सजी हुई है। ये ग्रंथियां निरन्तर हमारे रक्त में विशेष प्रकार के रस उड़ेलती रहती हैं। रक्तमें इन रसों के कम या ज्यादा होने का हमारे स्वास्थ्य, हमारे स्वभाव और हमारे शरीर की अन्य कई बातों पर प्रभाव पड़ता है। जूलियन हक्सले ने 'थाइरौयड ग्लांड' (Thyroid gland) के रस को एक मेंढक के शरीर में सुईदार पिचकारी से प्रविष्ट किया तो उसके शरीर के कुछ भागों की असाधारण वृद्धि होने लगी। बहुत से निर्बल बच्चों के रक्त में इस ग्लाण्ड का रस पहुँचाने से उनकी दुर्बलता दूर हो गयी। कई अपराधियों की परीक्षा करने पर मालूम हुआ कि उनका 'थायरौइड ग्लांड'असाधारण रूप से बढ़ा हुआ था। उसकी चिकित्सा करने पर उनके अपराध करने का अत्यन्त पुराना स्वभाव चला गया। मस्तिष्क के नीचे पिच्युटरी ग्लांड होता है, जिसमें विकृति आजाने से बच्चों की वृद्धि रुक जाती है। वरनोफ़ नामी वैज्ञानिक ने थायरायड और अण्डकोषों का अध्ययन किया है और महत्वपूर्ण परिणाम निकाले हैं। उसका कहना है कि मनुष्य के जीवन का विकास उसका यौवन और उल्लास इन ग्लांडों के रसों पर निर्भर है और यदि आपरेशन द्वारा पुराने

ग्लांड के स्थान पर नये ग्लांड लगा दिये जांय तो मनुष्य में पुनः शक्ति सञ्चार हो जाता है। इसी प्रकार के और भी लैण्ड हैं, जिनके भिन्न भिन्न प्रभाव शरीर पर होते हैं। एक ग्लांड 'एडरीनल' है—इस ग्लांड का रस 'एडरेलीन' निकाल कर यदि किसी बहादुर से बहादुर व्यक्ति के रक्त में पहुँचा दिया जाय, तो वह कायर और दब्बू बन जायगा। भीष्म और द्रोण को निशस्त्र करके हटाने के लिए पाण्डवों को शिखण्डी की आड़ लेनी पड़ी थी और युधिष्ठिर को झूठ बोलने के सिवा चारा न सूझा था। परन्तु दोनों के लिये 'एडरेनीलीन' का एक एक इंजेक्शन काफ़ी था और वे युद्ध से भाग खड़े होते। सुनने को ये विचित्र किस्से कहानी लगते हैं और विश्वास नहीं होता। परन्तु हजारों प्राणियों पर परीक्षा द्वारा ये बातें पता लगायी जा रही हैं। इन खोजों का परिणाम यह निकला कि एक अपराधी को अपराध करने की प्रवृत्ति उसकी विशेष प्रकार की शारीरिक रचना के कारण है, और उसका इलाज हो सकता है। अत्यन्त व्यभिचारी व्यक्तियों के सम्बन्ध में यह देखा गया है कि उनकी जननेन्द्रियों की बनावट में कुछ दोष होते हैं और चिकित्सा द्वारा दोष दूर हो जाने पर उनकी व्यभिचारवृत्ति भी दूर हो जाती है।

मनोविज्ञान—इन खोजों से मिलती जुलती खोजें मनोविज्ञान के सम्बन्ध में हैं। इस विज्ञान का सम्बन्ध मानवीय विचारों, वृत्तियों और इच्छाओं से है। इस सम्बन्ध में फ्रायड,

एडलर और जुङ्ग ने बहुत से तजुर्बों के बाद सिद्धान्त तय किये हैं। आजकल 'पावलाव' नामी रूसी वैज्ञानिक कुत्तों और उनकी लार पर प्रयोग कर रहा है। उसके आधार पर उसने मानस शास्त्र सम्बन्धी कई तथ्य ढूँढ निकाले हैं। मनोविज्ञान के इन सिद्धान्तों द्वारा मानसिक, शारीरिक और स्नायु सम्बन्धी (Nervous) बीमारियों के इलाज किये जा रहे हैं। अपराधों और अपराधियों के सम्बन्ध में भी इन प्रयोगों ने हमारे विचारों में एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। अपराधियों के जेलखाने, सज़ा और पीड़ा देने के साधन न हो कर अब मानसिक रोगों के हस्पताल समझे जा रहे हैं और उनको वैसी ही सामग्री से सुसज्जित किया जा रहा है।

शिक्षा क्षेत्र में मनोविज्ञान के प्रयोगों ने अभूतपूर्व क्रान्ति कर दी है। स्कूलों के ढाँचे बदल गये हैं। बच्चों के सुधार और शिक्षा के उपाय तबदील हो गये हैं। डाँट डपट मार-पीट और हर तरफ़ से उन्हें बाँध कर रखने की प्रवृत्ति दूर हो गयी है।

बच्चों को कितने घण्टे पढ़ाना चाहिये, इस सम्बन्ध में थकावट के कारणों की जाँच हुई है और स्कूलों में थकावट को दूर रखने की परिस्थितियाँ उत्पन्न की जा रही हैं। इनका उपयोग कारखानों में मज़दूरों के लिये भी किया जा रहा है। हाल ही में डगलस सेमूर ने इस बात की जाँच की है कि किस रङ्ग का बोर्ड और किस रङ्ग की चाक हो तो बच्चे उस पर सफ़ाई

बात को जल्दी ग्रहण करते हैं और परिणाम निकाला कि पीले रङ्ग के बोर्ड पर गहरे नीले रङ्ग से लिखना अधिक उपयोगी होता है।

संतान शास्त्र—पशुओं और पौदों पर सन्तान शास्त्र के प्रयोग कर के उनसे मनुष्यों के सम्बन्ध में सिद्धान्त निकाले जा रहे हैं। केले पर बैठने वाली एक मक्खी को अणुवीक्षण यन्त्र के नीचे ध्यान से देखने पर पता लग सका है कि पैतृक सस्कार किस प्रकार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में जाते हैं। अमेरिका में टिड्डी पर तजुर्बे कर के पता लगाया जा रहा है कि गर्भ में लिंग भेद किस प्रकार होता है और किस प्रकार गर्भस्थ प्राणी नर या मादा बन जाता है।

सन्तान शास्त्र के आधुनिक अनुसंधानों से कुछ विचित्र परिणाम निकलते हैं। अब तक ऐसा सब का विश्वास था कि रज और वीर्य के संयोग से ही सन्तानोत्पत्ति हो सकती है नये प्रयोगों से हमें पता लगता है कि कि वीर्य के जीवाणुओं के बगैर भी 'अंड' में वृद्धि की प्रक्रिया आरम्भ की जा सकती है। मेंडक के अंडे को यदि पतली, शीशे की सूई चुभोई जाय तो उसमें संतान-क्रिया आरम्भ हो जाती है, इस प्रकार के अंडों से बड़े बड़े मेंडक तैयार किये गये हैं। अब वैज्ञानिक प्राणियों का कृत्रिम वीर्य तैय्यार करने में लगे हुये हैं। इतना तो अब व्यावहारिक रूप से शुरू हो गया है कि अच्छी नसल के घोड़ों, बैलों और कुत्तों का वीर्य इकट्ठा कर के उसे सीरम की तरह छोटी ट्यूबों में बन्द किया

जाता है और पिचकारी के ज़रिये इसी का इंजीकशन कर के अच्छी नसल के पशु उत्पन्न किये जा रहे हैं। रूस में हवाई जहाज़ों के ज़रिये दूर दूर के प्रान्तों में ये ट्यूबें बांटी जा रही हैं, अमेरिका और इंगलैंड में भी यह सिलसिला जारी है। सन्तान शास्त्र के परीक्षणों का लाभ कृषि और पशुओं की अच्छी नसलें और नई किस्में तैय्यार करने में भी हुआ है। बग़ैर बीज और गुठली के फल, ऐसे फल जिन में विशेष प्रकार के कीड़े न लगें, ऐसा गन्ना और गेहूँ जो जल्दी सड़ न जाय, पशुओं के विविध रंग के आदि नई बातें पैदा की जा रही हैं। अभी ये प्रयोग मनुष्यों पर नहीं किये गये। पर इतना तो हम समझ सकते हैं कि संतान शास्त्र सम्बन्धी सिद्धान्तों का जब हमें ज्ञान हो जायगा तो हमें अब तक की बनाई हुई नीति शास्त्र, समाज शास्त्र सम्बन्धी बहुत सी धारणाएँ तबदील करनी पड़ेंगी। उस समय हमारा उद्देश्य मनुष्य की अच्छी नसल पैदा करना ही रह जायगा। परिवार प्रणाली के सम्बन्ध में भी हमें बिल्कुल नई दिशा में सोचना होगा।

रसायन शास्त्र—रसायन शास्त्र या केमिस्ट्री में असंख्य नये आविष्कार हो रहे हैं। हमारे व्यवहार के बहुत से पदार्थ कोयले से निकाले गये हैं। कोयले से लगभग २३ भिन्न भिन्न प्रकार के एसिड और पदार्थ निकाले गये हैं जिन्हें दूसरी चीज़ों से मिला कर कई उपयोगी पदार्थ तैय्यार होते हैं। वेज़लीन, कई प्रकार के तेल, पैराफ़ीन, ग्लिसरीन, कैफ़ीन, कोलटार, फ़िनायल,

एस्परीन, वग़ैरा निकाले जा रहे हैं। रोज़ हम जिन रंगों को इस्तेमाल करते हैं, वे कोयले से ही निकाले हुए हैं। रसायन शास्त्रज्ञ विविध रसायनिक द्रव्यों के मिश्रण से कई कृत्रिम पदार्थ तैय्यार कर रहे हैं। सेलुलोस से कृत्रिम रेशम का ज़िक्र हम पहिले पढ़ चुके हैं। अब सेलुलोस से खांड तैय्यार की जाया करेगी। मधु-मेह के बीमारों के लिए भी यह खांड हानिकारक न होगी। जर्मनी में १६३३ से लकड़ी के बुरादे तथा टूटी टहनियों वग़ैरा से खांड निकालने के लिये एक कारखाना भी खुला हुआ है—जो ६०००-८००० टन खांड प्रति वर्ष तैय्यार कर रहा है। लकड़ी का गूदा और फोक वग़ैरा जो बचता है, उसके बटन बना लिए जाते हैं। कोयले और मिट्टी के तेल से खाने योग्य घी या चर्बी प्राप्त करने की भी कोशिश हो रही है। लकड़ी की खांड से ग्लिसरीन भी बनाया जाता है और उसे बारूद बनाने के काम में लाया जाता है—इसके अलावा कृत्रिम रबड़, कृत्रिम लकड़ी, और कितने ही अन्य पदार्थ कृत्रिम बनाए जा रहे हैं। राष्ट्रों में स्वात्म निर्भरता की प्रवृत्ति के कारण वे अपने यहां ही कृत्रिम कच्चा माल बनाकर ज़रूरत पूरी कर लेना चाहते हैं।

उपयोगी खादें—तजुर्बों से पता लगा है कि चौदह तत्व पौदों के पोषण के लिए आवश्यक है। नाइट्रोजन, फ़ास्फ़ोरस, पोटासियम, कैलशियम, कार्बन हाइड्रोजन, आक्सीजन, मैग्नेशि-यम, लोहा, गन्धक, मांगनीज़, बोरन, तांबा और जस्त। पौदों में कई कई बीमारियां इन में से कुछ तत्वों के न होने से होजाती

हैं। मांगनीज़ की कमी से टमाटर को 'क्लोरोसिस' हो जाता है और वे काले पड़ जाते हैं। सन्तरे नीबू वग़ैरा के पौदे जस्त की कमी से सूख सूख कर झड़ने लगते हैं।

इधर ये खोजें हुई हैं उधर मनुष्य और पशुओं की खुराक पर परीक्षण करके भोजनशास्त्र के नतीजे निकाले हैं कि कौन कौन पदार्थ हमारे भोजन में आवश्यक है। इसी सम्बन्ध में विटामिन तत्वों का भी पता लगाया है। अब खाद में उपर्युक्त चौदह तत्वों में से विशेष विशेष की कमीवेशी से हमारे भोजन के तत्वों और विटामिन में भी कमी वेशी होजाती है। इससे स्वास्थ्य योग्य पौष्टिक खाद्य सामग्री तैयार की जा सकती है।

कृत्रिम खाद और कृत्रिम भूमियां भी तैयार की गयी हैं। उपर्युक्त तत्वों से मिश्रित मसाले बड़े बड़े लोहे के तालाबों में भर दिये जाते हैं और उन में बीज बोये जाते हैं। बिजली द्वारा विशेष प्रकार का तापमान रखा जाता है। इन तालाबों में कुछ दिनों में ही फ़सलें तैयार हो जाती हैं। मसलन पशुओं का चारा बीज बोने के १० दिन के बाद तैयार होकर ऊचे पौदे बन जाता है। जिन देशों में कृषि नहीं होती मसलन इंग्लैंड ऐसे देशों में भी इस प्रकार के बड़े बड़े तालाब छतों पर रख कर खेती की जा सकेगी। यह विज्ञान की करामात है।

भूमियों में पानी समा जाने, कीड़े लगजाने या विशेष प्रकार के जीवाणुओं के मर जाने से भूमि में नाइट्रोजन की कमी

आजाने के सम्बन्ध में सैंकड़ों वैज्ञानिक परीक्षण-शालाओं में बैठे दिन रात खोजें कर रहे हैं, ताकि मानवजाति की तरक्की की रफ्तार धीमी न हो।

चिकित्सा शास्त्र——आधुनिक सर्जनों ने विचित्र प्रकार के आपरेशन कर दिखाये हैं जिनमें सब अधिक कठिन दिमाग़ का आपरेशन है। मेढ़क आदि प्राणियों पर तो वे बेफिक्री से अपना नश्तर इस्तेमाल करके तजुर्बे हासिल कर रहे हैं। इन प्राणियों के आपरेशन करके इनकी बीसियों किस्में तैय्यार कर दी गयी हैं। यहां तक कि गर्भ पिंड तक पर सफल आपरेशन कर लिये जाते हैं।

रसायन शास्त्र की उत्पत्ति के साथ बीमारी को रोकनेवाली दवाईयां निकल रही हैं। शरीर पर आक्रमण करने वाले कीटाणुओं की निरन्तर खोज से बहुत-सी बीमारियों के कारणों और उनसे बचने के उपायों का पता चला है। रेडियम से कैंसर, और 'एक्सरे' से तपेदिक को ठीक करने के परीक्षण हो रहे हैं। बीसियों प्रकार के जीवाणुओं की परीक्षा 'अणुवीक्षण' यन्त्र द्वारा की जा रही है। मलेरिया के मच्छर के पेट के अन्दर, मलेरिया के जीवाणु किस प्रकार अपनी आबादी बढ़ाते और बढ़ते हैं यह सारा दृश्य अणुवीक्षण यन्त्र की सहायता से देखा गया है।

अन्य विज्ञान——अन्य विज्ञानों में भी इतने विचित्र अनुसंधान हो रहे हैं कि उनकी गणना असम्भव है। भूगर्भशास्त्र,

ज्योतिष, धातुशास्त्र, (भिन्न-भिन्न धातुओं को मिलाने और जोड़ने के तरीके) खनिज द्रव्य शास्त्र इन सब में खोजें जारी हैं। कोई नई ईजाद होती है तो उसी समय वह व्यवसायिक और व्यापारिक क्षेत्र में आ जाती है। बड़े बड़े आश्चर्यजनक पुल, नहरें, बाँध और विशाल भवन इंजिनियरिंग के नये सिद्धान्तों पर बनाये जा रहे हैं। एक विज्ञान से दूसरे को सहायता मिलती है। मिसाल के तौर पर अच्छा लोहा और अच्छा सीमेंट न हो तो इंजिनियरिंग का काम अधूरा रहेगा।

विज्ञान की सहायता से हम बहुत तेज़ी के साथ सरपट दौड़ चले जा रहे हैं। हम अपनी तेज़ रफ्तार पर गर्व करते हैं मगर हमें यह पता नहीं कि हम इसी तेज़ी के साथ जाना कहाँ चाहते हैं। मोटर बनाना या मोटर चलाना सीख लेना कोई सभ्यता या संस्कृति की निशानी नहीं, हां मोटर, रेल, हवाई जहाज ऊंचे दरजे की सभ्यता और संस्कृति के साधन अवश्य बन सकते हैं। संस्कृति मानसिक विकास का एक परिणाम है, जीवन के एक दृष्टिकोण का नाम है। परन्तु एक जंगली और अत्यन्त असभ्य आदमी को भी हवाई जहाज़ का संचालन सिखाया जा सकता है। मौजूदा ज़माने में इनसान ने अपने मानसिक विकास की उपेक्षा की है, मनुष्य समाज की सामूहिक चिन्ता या मानवता को अपने जीवन का दृष्टिकोण अभी तक नहीं बनाया, नतीजा यह है कि उन की भौतिक वृद्धि के साथ उस की मानसिक विकास का साम्मंजस्य स्थापित नहीं हो सकता। पागल के हाथ में ईंट, पत्थर,

लकड़ी, मेज़, कुर्सी या किताब जो कुछ भी लगती है, वह उसे फैंक कर हमला करता है। मनुष्य के हाथ में भी विज्ञान ने जो कुछ भला बुरा दिया है वह उसे लेकर मानवता का संहार करने के लिये निकल पड़ा है। जहाँ वैज्ञानिक युग हमारे लिये आशा और उत्साह का सन्देश लाता है, और दूर क्षितिज पर मानवीय उन्नति की चरम सीमा की सुनहरी झलक दर्शा कर हमें उधर चलने का संकेत करता है, वहां मनुष्य की प्रारम्भिक पशुवृत्ति हमें अपने भविष्य के लिये चिन्ता में डाल रही है। क्या मनुष्य मानवता की पुकार को सुनेगा ?

दसवां अध्याय

आज की वैज्ञानिक लड़ाइयां

(१)

शस्त्रास्त्रों की होड़

पिछले अध्याय में हम लिख आये हैं कि मनुष्य ने अभी तक मानवता की पुकार को नहीं सुना और वह अपनी मानसिक दुर्बलताओं और पाशविक संस्कारों पर विजय प्राप्त न कर सकने के कारण मानवता का भीषण संहार करने की तैयारी कर रहा है।

महायुद्ध के बाद पहले-पहल तो सम्पूर्ण राष्ट्रों की प्रवृत्ति शस्त्रास्त्रों को घटाने और उनके निर्माण को सीमित करने की ओर थी। जर्मनी को तो पहले ही वार्साई की सन्धि की शर्तों द्वारा निश्शस्त्र कर दिया गया था, और वह उतनी ही सेना और सैन्य

सामग्री रख सकता था जो वहाँ की आन्तरिक शान्ति कायम रखने के लिये ज़रूरी थी। युद्ध के कारण सब राष्ट्रों की अवस्था दिवालिये की सी थी। उनके खज़ाने खाली थे और उनके सिर पर भारी कर्जों का बोझ था। इसलिये वे शस्त्रास्त्र और सेना पर अधिक व्यय नहीं कर सकते थे। इसलिये सब ने मिलजुल कर, परस्पर समझौता करके शस्त्राशस्त्र घटाने का प्रयत्न किया। इसके लिये कान्फ्रेंसें हुईं, समझौते भी हुए। परन्तु १९२७ में जब जेनेवा की कान्फ्रेंस असफल रही तो निश्शस्त्रीकरण का उत्साह जाता रहा। उधर १९३१ में जापान ने मन्चूरिया पर हमला कर दिया और राष्ट्रसंघ की अवहेलना की। तब राष्ट्रों का विश्वास राष्ट्रसङ्घ की शक्ति से उठने लगा और किसी अनागत भय की आशङ्का से सब रक्षा के उपाय ढूँढ़ने लग गये। दो साल बाद जर्मनी नाज़ी दल कायम हो गया। जर्मनी ने वार्साई की सन्धि की अवहेलना करके सैन्य संग्रह आरम्भ कर दिया। उधर इटली ने अबीसीनिया पर हमला कर दिया। अब तो राष्ट्रसङ्घ की निर्बलता सब पर प्रत्यक्ष होगई और सब ने बड़े ज़ोर से युद्ध की तैयारी आरम्भ करदी।

इस समय सब राष्ट्रों में परस्पर शस्त्रास्त्र और सैन्यवृद्धि की होड़ जारी है। वार्साई की संधि की पाबन्दियों के कारण जर्मनी सब के बाद इस क्षेत्र में आया है। राष्ट्रों की सैन्यवृद्धि और सैन्य व्यय की ठीक ठीक संख्याओं को मालूम करना तो

कठिन है, क्योंकि सब राष्ट्र इस प्रकार के भेद गुप्त रखते हैं, परन्तु फिर भी विशेषज्ञ लोग प्रायः ठीक अन्दाज़ा लगा लेते हैं।

१९३१-३२ में जर्मनी ने सैन्यवृद्धि पर जो भी ख़र्च किया उस का १० गुना ज्यादा वह १९३७ में ख़र्च कर रहा था। १९३१-३२ में जर्मनी ९१ करोड़ ७० लाख रीक मार्क ख़र्च कर रहा था, परन्तु १९३६-३७ में ६ अरब ५० करोड़ रीक मार्क ख़र्च हुए।

फ्रांस १९३०-३१ में १६ अरब फ्रांक ख़र्च कर रहा था, परन्तु १९३७ में १९ अरब फ्रांक खर्च हुए। फ्रांस दूसरे कई कोषों (Funds) से भी पर्याप्त धन खर्च कर रहा है। बहुत-सा ऋण लेकर भी वह युद्ध की तैयारी के लिये खर्च कर रहा है।

ग्रेट ब्रिटेन १९३०-३१ में साढ़े नौ करोड़ पौंड खर्च कर रहा था, परन्तु १९३६-३७ में उसका खर्च १९ करोड़ पौंड होगया, अर्थात् दुगना और १९३६-३७ में २७ करोड़ ८० लाख पौंड का बजट में अनुमान किया गया था। जापान ने १९३१-३२ में ४५½ करोड़ येन खर्च किया था, परन्तु १९३६-३७ के बजट में एक अरब येन की गुञ्जाइश रखी गई।

अमेरिका अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण यूरोप के तूफ़ानों से सुरक्षित है, परन्तु उसने भी १९३७-३८ के बजट में ९९ करोड़ डालर युद्ध सामग्री के व्यय के लिये रखे।

इटली ने १९३१-३२ में ५ अरब ४३ करोड़ लिरा युद्ध सामग्री के लिए खर्च किया था, परन्तु १९३६-३७ में बढ़ा कर १७ अरब ४१ करोड़ लिरा कर दिया।

नीचे के नक्शे में कुछ देशों के कुल व्यय का राष्ट्र रक्षा (Defence) के व्यय से अनुपात बतलाया गया है। १६३१-३२ और १६३६—३७ के अंशों के अंकों की तुलना की गयी है।

विभिन्न देशों के कुल व्यय से सैनिक व्यय का अनुपात

(१६३१—३२ और १६३६—३७ की तुलना)

नाम देश	१६३१—३२	१६३६—३७
ग्रेटब्रिटेन	१०·८ प्रतिशतक	२० प्रतिशतक
फ्रांस	२६ ,,	२६·६
जर्मनी	६·५ ,,	—
इटली	२७ ,,	—
जापान	३०·३ ,,	४६·६
सोविएट रूस	५·६ ,,	२०·७
सं० रा० अमेरिका	१३·७	११·४

इंगलैण्ड, फ्रांस, जापान, रूस और अमेरिका १६१४ से पहले जितना व्यय करते थे उससे दुगना और जर्मनी छः गुना खर्च कर रहे हैं।

जर्मनी और इटली की गणनाएं पूरी तरह प्राप्त नहीं, परन्तु कुछ अर्सा पहले जेनरल गोरिंग ने घोषणा की थी कि "मक्खन से ज्यादा ज़रूरी इस वक्त तोपें हैं" इससे अनुमान किया जा सकता है कि जर्मनी ने शस्त्रास्त्र व्यय के लिये बाकी खर्चों को किस कदर कम किया होगा।

जो धन ग़रीबी और बेकारी को दूर करने के लिये उपयोग में आना चाहिये था, वह विनाशशील पदार्थों के निर्माण में लग रहा है। स्थायी रूप से इसके कारण इन राष्ट्रों के व्यवसाय में कुछ तेज़ी आ रही है, बेकारों को काम मिल गया है, परन्तु यह समृद्धि चिरस्थायी नहीं, और ज्यों ही युद्ध का खतरा कम होगा, व्यवसाय सब चौपट हो जायगा. जर्मनी जैसे राष्ट्र शस्त्रास्त्र वृद्धि के लिए अपनी दैनिक आवश्यकताओं को बहुत कम कर रहे हैं। जर्मनी को बाहर से 'तांबा' और 'नाइटर' मांगने पड़ते हैं, उनकी कीमत वह सचमुच अपने पेट पर पट्टी बांध कर चुकाता है।

कुल संसार का सैनिक शस्त्रास्त्र व्यय १६३१ में ४ अरब डालर था, परन्तु १६३६ में १० अरब ७३ करोड़ डालर हो गया। (ये संख्याएँ ६० मुख्य मुख्य देशों की हैं)।

इस विषय में इतनी बात और ध्यान देने योग्य है कि सारे राष्ट्रों का ज्यादा जोर हवाई जहाज़ बनाने पर लग रहा है। १६३१ में जर्मनी के पास हवाई शक्ति बिलकुल भी न थी, परन्तु अब वह दुनियां में एक बड़ी हवाई शक्ति का मालिक है। प्रति मास वह ४०० से ८०० तक हवाई जहाज़ बना रहा है। इतनी तेज़ी से कोई और राष्ट्र सैन्य-सामग्री का निर्माण नहीं कर रहा। इतनी अधिक उत्पत्ति करने के लिये जर्मनी को बहुत अधिक पूँजी लगानी पड़ी होगी। यह कम आश्चर्य की बात नहीं

कि वार्साई की सन्धि के भंग होने के बाद इतने कम समय में वह संसार के प्रमुख शक्तिशाली राष्ट्रों की श्रेणी में आ गया है।

हवाई जहाज शीघ्र नष्ट हो जाते हैं, नष्ट जहाजों का स्थान नये जहाज़ ले सकें, इसलिये सब राष्ट्र अपने कारखानों की उत्पादक शक्ति बढ़ा रहे हैं। १९३६–३७ में ग्रेट ब्रिटेन ने अपने कारखानों की उत्पादक शक्ति बढ़ाने के लिये साढ़े तीन करोड़ पौंड खर्च किये।

सैनिक क़िलाबन्दी पर भी असाधारण व्यय किया जा रहा है। सिङ्गापुर पर अपार धन व्यय हुआ है। भूमध्य सागर की क़िलेबन्दियां मज़बूत की जा रही हैं। फ्राँस 'मेजिनोट लाइन' (Maginot Line) के निर्माण पर पर्याप्त व्यय कर चुका है, और कर रहा है। १९३७ में इसपर असाधारण व्यय ६ अरब ४४ करोड़ फ्राँक था। इस में किसी को हैरानी न होगी यदि इतने बड़े खर्च के बोझ को बर्दाश्त करते करते इन राष्ट्रों की जनता तंग आजाय, एक आर्थिक संकट उपस्थित हो जाय और परिणाम स्वरूप वर्तमान शासक जनता में अप्रिय हो उठें।

(२)

आधुनिक युद्ध

स्थल सेना—प्राचीन काल में स्थल सेना का महत्व बहुत ज्यादा था। परन्तु अब युद्ध की गति बहुत बदल गई है। महाभारत युद्ध के समय अठारह अक्षौहणी सेना एक ही मैदान

में लड़ने के लिए एकत्र करदी गई थी। पिछले महायुद्ध में रूस और फ्राँस को अपनी स्थल सेनाओं पर बड़ा अभिमान था। युद्ध का बिगुल बजते ही उन की सेनाओं की लम्बी कतारें युद्ध-भूमि को अग्रसर हो गई थीं। परन्तु आजकल यदि कोई सेनापति युद्धभूमि में इस प्रकार एक जगह अपनी सेना को एकत्र करदे, तो उसका सारी सेना शत्रु की भयङ्कर बम-वर्षा की शिकार हो जायगी, और वह सेनापति कुछ ही घंटों में युद्ध से हार कर राजधानी को लौट जायगा। हवाई जहाज़ों ने स्थल सेना के महत्व और युद्ध में उसकी उपयोगिता को बिलकुल बदल दिया है। सेनाएं अब प्राय: पीछे खन्दकों में 'रिज़र्व' में रहती हैं। जब हवाई जहाज और तोपें अपनी भीषण बम वर्षा से शत्रु के पाँव उखेड़ देते हैं तब फौज की बारी आती है और शत्रु की सेना से छोड़े हुए प्रदेश पर वह कब्जा करने आगे बढ़ती हैं।

आजकल स्थल सेना के महत्व और उपयोगिता के विषय में सैन्यी विद्या विशारदों में काफी विवाद छिड़ा हुआ है। कई लोगों के विचार में हवाई जहाजों के मुकाबले में स्थल सेनाएं न केवल व्यर्थ हो गई हैं बल्कि युद्ध कार्य में एक तरह का बोझ रह गयी हैं। स्थलसेना के लिये खाद्य सामग्री, ढोने में ही कितना बखेड़ा है, फिर खाद्य सामग्री, ढोने वाली रेलें और मोटरें आसानी से शत्रु की बम वर्षा का शिकार हो जांयगी। दूसरी तरफ से कहा जाता है कि शत्रु प्रदेश पर कब्जा करने का काम सेना ही कर सकती है। पहले

फौजों में घोड़ों का भी बड़ा उपयोग था—अब मोटरें चल पड़ी हैं। घोड़े खच्चर रास्तों में उलटे रुकावट साबित होते हैं। पर उन के सम्बन्ध में भी यह कहा जाता है कि ऊबड़ खाबड़ जमीन में, जहाँ मोटर वगैरा यन्त्र नहीं जा सकते, घोड़े ही कामयाब होते हैं। छोटी परन्तु यन्त्रों से सुसज्जित और नियन्त्रित सेना बड़ी-बड़ी फौजों को हरा सकती है।

अबीसीनिया युद्ध में यह तो सिद्ध हो गया कि हवाई जहाजों के मुकाबले में बड़ी-बड़ी सेनाएं बिलकुल निस्सहाय हो जाती हैं। इंग्लैंड और अमेरिका को छोड़ कर अब सब कहीं अनिवार्य सैनिक शिक्षा है। भिन्न भिन्न देशों की सेनाओं की तादाद नीचे की तालिका में दी गई है!

संसार की सेनाएं

(दिसम्बर १९३३)

नाम देश	कुल फौज (इसमें रिज़र्व भी शामिल है)	आबादी से अनुपात
अर्जेन्टाइन	३४४२५२	२.८६
बेलज्यिम	५८४२२४	७.२२
ब्राज़ील	२५६३८७	०.६४
आस्ट्रेलिया	३११७३	०.४८
कनाडा	९५५८२	०.९३

ग्रेट ब्रिटेन	५२६७०८	१·१
हिन्दुस्तान	२८३६२३	०.०८
आयर	२४०६३	०.८
दक्षिण अफ्रीका	१३६५२७	१.७
कुल ब्रिटिश साम्राज्य	११४१९८७	०.२५
चीन	२००४६००	०.४३
जेचोस्लावेकिया	१६४७,०००	११.०४
फ्रांस	६६,५२,२१३	१४.४६
जर्मनी	११,००,५००	१.६६
इटली	६४६५५३५	१४,५७
जापान	२१७७०००	१.३४
पोलैंड	२०४७०३५	६.४७
रूस	१,६२,००,०००	६.७६
सं० रा० अमेरिका	४,४४,६६१	०.३५

जल सेना--कुछ लोग जल सेना और जंगी जहाज़ों को भी आजकल व्यर्थ समझने लग गए हैं। इसमें तो सन्देह नहीं कि हवाई जहाज़ ने स्थल और जल सेना के एकाधिकार को मिटा कर उसके महत्व को कम कर दिया है, परन्तु जल सेना का महत्व बिलकुल चला नहीं गया। अबीसीनिया की लड़ाई के समय यदि कहीं इटली के जहाजों के लिए स्वेज की नहर बन्द कर दी जाती तो बड़े बड़े हवाई जहाज़ों की मौजूदगी में भी

इटली उसका कुछ बिगाड़ न सकता, क्योंकि हवाई जहाज़ों से फ़िलहाल इतनी आशा नहीं की जाती कि वे सब कुछ अकेले ढोकर ले जाँयगे।

अंग्रेज़ों का तो जब तक साम्राज्य कायम है, जल सेना का महत्व है। यद्यपि अंग्रेज़ों के इस दावे को कि "समुद्र की लहरों पर ब्रिटेनिया शासन करता है"। चैलेंज करने वाले दूसरे देश पैदा हो गए हैं, परन्तु फिर भी समुद्र पर अंग्रेज़ों का इस समय एकाधिपत्य है। योरोप और अमेरिका में जंगी जहाज़ बनाने का सख्त मुकाबला जारी है।

१६२२ और १६३० की नौ सेना संबन्धी संधियों के मातहत इंग्लैंड ने अपने जहाज़ी बेड़े की शक्ति कम कर ली थी, और युद्ध सामग्री तैय्यार करने की तरफ पूरा ध्यान नहीं दिया था। इसलिये इंग्लैंड के पास अधिकांश जहाज़ पुरानी किस्म के रह गये थे। किस्में तो आजकल हररोज़ पुरानी हो जाती हैं, इतनी शीघ्रता से नये अविष्कार हो रहे हैं। अब इंग्लैंड अपने लड़ाकू बेड़ों को "अपटुडेट" करने में लगा हुआ है। युद्ध की नवीन गति विधि और नीति के अनुसार जहाज़ों में आवश्यक सुधार भी हो रहे हैं। यथा उन पर हवाई जहाज़ रखे जा रहे हैं। हवाई जहाज़ों को गिराने वाली "एंटी एयर क्राफ्ट तोपें" बैठायी जा रही हैं। हवाई जहाज़ों से आग लगाने वाले बम बरसाए जाते हैं, उनसे जहाज़ों की रक्षा के उपाय किए जा रहे हैं।

पिछले दिनों निशस्त्रीकरण कान्फ्रेंसों के ज़रिये अन्यान्य शस्त्रों को कम करने के प्रयत्न के साथ यह भी कोशिश हो गई थी कि पनडुब्बियों का इस्तेमाल अन्तर्राष्ट्रीय समझौते द्वारा बिलकुल ही बन्द कर दिया जाय, परन्तु यह बात तय न हो सकी। अब हर कोई पनडुब्बी भी खूब बना रहा है।

आजकल जहाज़ों में प्रथम नम्बर इंग्लैंड का है, दूसरा अमेरिका, तीसरा जापान उसके बाद क्रमशः इटली, जर्मनी और रूस आते हैं।

फ़रवरी १९३८ को भिन्न भिन्न देशों के जंगी बेड़ों की ताकत निम्नलिखित थी। इन फ़हरिस्तों को ध्यान से पढ़ने से यह भी समझ में आसकता है, किस देश की युद्ध-नीति क्या हो सकती हैं, और वह किस प्रकार के जहाज़ों को अधिक महत्व देता है।

छः महाशक्तियों की जहाज़ी ताकत

(१ फ़रवरी १९३८)

जहाज़ की क़िस्म		ब्रिटिश साम्राज्य	संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	जापान	फ्रांस	इटली	जर्मनी
जङ्गी जहाज़	तैयार	१२	१५	९	६	४	३
	अभी बन रहे हैं	५	२	२	३	४	४
	बनाने का विचार है	...	४	१	१	...	१
जङ्गी क्रूज़र	तैयार हैं	३	...	...	...	...	...
	बन रहे हैं—	...	...	...	...	...	...
	बनाने का विचार है	...	...	...	...	..	...

जहाज़ की किस्म		ब्रिटिश साम्राज्य	संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	जापान	फ्रांस	इटली	जर्मनी
हवाई जहाज़ ढोने वाले	तैयार हैं	८	३	८	२	१	...
	बन रहे हैं	५	३	३	...	...	...
	बनाने का ख्याल है	२	...	१	२	...	१
क्रूज़र	तैयार हैं	५६	२६	३३	१८	२२	६
	बन रहे हैं	१७	१०	२	१	१२	३
	बनाने का विचार है	७	४	५	१	...	...
समुद्र के नीचे बम बिछाने वाले क्रूज़र	तैयार हैं	१	...	६	१	...	...
	बन रहे हैं	...	...	...	...	...	...
	बनाने का विचार है	...	...	...	...	...	...
मानीटर	तैयार हैं	३	...	...	...	५	...
	बन रहे हैं	...	...	...	...	...	...
	बनाने का विचार है	...	...	...	...	...	...

जहाज़ की किस्म		ब्रिटिश साम्राज्य	संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	जापान	फ्रांस	इटली	जर्मनी
पनडुब्बियां पकड़ने के लिये पानी में जाल बिछाने वाला जहाज़	तैयार हैं	२	...	...	१	...	...
	बनाये जा रहे हैं	...	...	...	...	...	...
छोटा जहाज़ी बेड़ा 'लीडर' और 'डिस्ट्रायर'	तैयार हैं	१५६	२०३	१००	५६	६०	१२
	बनाये जा रहे हैं	४०	३६	६	१४	१२	२२
	बनाने का विचार है	...	८	८	५	...	...
बम बिछाने वाले जहाज़	तैयार हैं	४	...	५	२	१२	...
	तैयार हो रहे हैं	३	...	....	...	...	...
	तैयार करने का ख्याल है	३	...	...	...	...	...
टार्पीडो बोट	तैयार हैं	११	...	१६	११	१४६	६
	बनाये जा रहे हैं	१२	...	८	४	१६	१२
	बनाने का विचार है	११	२	...	...	...	...
पनडुब्बियां	तैयार हैं	५२	८४	५८	७६	८०	३६
	बनाये जा रहे हैं	१८	१६	२	११	२३३	८

जहाज़ की किस्म		ब्रिटिश साम्राज्य	संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	जापान	फ्रॉस	इटली	जर्मनी
	बनाने का विचार है	३	६	६	६	पता नहीं	...
साथ चलने वाले	तैयार हैं	३३	५	...	६	१	२
	बनाये जा रहे हैं	४	...	...	१	...	...
	बनाने का विचार है	३	...	...	...	१०	
दरियाई बोट	तैयार हैं	१८	६	७	६	१	...
	बनाये जा रहे हैं	३	...	...	१	...	...
	बनाने का विचार है	२		...	...	...	...
समुद्र के नीचे बम	तैयार हैं	३३	४२	१२	४	४२	२३
समेटने वाले	बनाये जा रहे हैं	७	...	...	...	...	१२
	बनाने का विचार है	...	...	...	...	...	...
पहरेदार	तैयार हैं	७	२	२	३५	१०	११
	बनाये जा रहे हैं	४	...	...	१८	...	...
	बनाने का विचार	...	....	...	...	...	...

जर्मनी के पास जहाज़ी ताकत बहुत कम है। वार्साई की संधि के अनुसार उसे बिलकुल निश्शस्त्र कर दिया गया था। युद्ध से पहले उसका जंगी बेड़ा इंग्लैण्ड के करीब करीब मुक़ाबले में आ रहा था। अब जर्मनी का ज्यादा ज़ोर हवाई जहाज़ तैय्यार करने की ओर है।

हवाई जहाज़—भावी युद्ध मुख्यतः हवाई जहाज़ों का युद्ध होगा, इसमें किसी को भी सन्देह नहीं रहा। अबीसीनिया, स्पेन और चीन के युद्ध में हवाई जहाज़ों की परीक्षा हुई है, और इन युद्धों से संसार में सेनापतियों ने कई नये पाठ सीखे हैं, उन तजुर्बों का फ़ायदा उठाकर वे ज़ोर शोर से युद्ध की तैय्यारी में लगे हैं।

१६३७ में यूरोप में २५ और ३० हज़ार के दर्मियान हवाई जहाज़ थे। १६३८ के आरम्भ में यह संख्या दुगनी हो गयी है। इनकी बनावट में भी तरक्की की जा रही है।

हवाई आक्रमण के लिये यह आवश्यक है कि जहाज़ ज्यादा से ज्यादा बम और तोपें लाद कर ज्यादा से ज्यादा दूर जाकर शत्रु पर बम वर्षा कर सकें और बिना कहीं ठहरे वापस आ सकें। अब हाल ही में जो बम वर्षा करने वाले जहाज़ बने हैं, वे ५०० मील तक मार करके सुरक्षित वापस लौट सकते हैं। वे १५० से २८० और ज्यादा से ज्यादा ३०० मील प्रति घंटा की चाल से चल सकते हैं। इनका वज़न ३०० टन है। १५० फीट के पंख हैं और काफ़ी संख्या में वे बड़ी बड़ी तोपें लाद सकते हैं।

जर्मनी के पास ४०० मील तक मार करने वाले जहाज़ हैं और वह यूरोप में किसी भी पड़ोसी पर आसानी से हमला कर सकता है। उसका उद्देश्य तीन हज़ार जहाज़ तैय्यार रखने का है। परन्तु स्पेन के युद्ध में जर्मनी के जहाज़ ज्यादा अच्छे साबित नहीं हुए, उसके जहाज़ों की निस्बत रूस, इटली और अमेरिका के बने हुए जहाज बहुत मजबूत और उपयोगी साबित हुए हैं।

रूस के पास इस समय हवाई शक्ति बहुत ज्यादा है। आज कल सब देश अपनी युद्ध सामग्री का निर्माण अत्यन्त गुप्त रीति से कर रहे हैं और अपनी योजनाओं का पता किसी को लगने नहीं देते—इसलिये देशों में मुकाबला करना तो कठिन है, पर इतना कहा जा सकता है कि रूस की हवाई शक्ति संसार में प्रथम श्रेणी की है।

हवाई जहाज़ों की सहायता से सेना और रसद पहुँचाने की अक्सर युद्ध में ज़रूरत होती है। अबीसीनिया युद्ध में ऐसे स्थानों पर जहाँ पहाड़ियों के खराब रास्तों से गाड़ियों में रसद और अन्य सामान ढोने में अधिक वक्त लग जाता, इटली ने हवाई ज़हाजों के ज़रिये सामान पहुंचाया। ऐसे स्थानों पर प्रायः जहाज़ों के उतरने के लिये मैदान भी नहीं होते, इसलिये हवाई ज़हाज से सामान नीचे पहुंचाने के तरीके निकाले गये हैं। हाल ही में रूस की सेना ने एक नकली लड़ाई में हिस्सा लिया, जिसमें १२००

सैनिक, १८ तोपें, १५० मशीनगनें १०० मील प्रति घंटे की चाल से युद्ध भूमि में हवाई जहाज़ों पर ले जाये गये सिर्फ़ ८ मिनट में सब के सब "पैराशूटों" के ज़रिये उतारे गये। 'पैराशूट' एक प्रकार का छाता होता है और उस के जरिये मनुष्य और अन्य चीजें आसानी से नीचे उतर सकती हैं। हवाई जहाजों से पैराशूटों के ज़रिये ये सामान ही नहीं, पूरे के पूरे हस्पताल, माँस के लिये सैकड़ों पशु गाय और बकरे भी इन्हीं के ज़रिये नीचे उतार दिये गये। यह सब काम ८ मिनट में कर लेना कम आश्चर्य की बात नहीं। रूस में इस समय लगभग ७० हजार व्यक्ति पैराशूट से उतरना सीख चुके हैं और यह कार्य प्रायः प्रत्येक सैनिक को सिखाया जा रहा है। परन्तु स्पेन युद्ध में पैराशूट बहुत कामयाब नहीं हुए और हवा में पैराशूट के उतरने वाला आसानी से शत्रु की गोलियों का शिकार बना दिया जाता है।

रूस के पास इस समय हवाई शक्ति सम्भवतः यूरोप में सबसे अधिक है। इसके पास ३५०० जहाज हैं और शीघ्र ४ हजार हो जायंगे। स्पेन युद्ध में ये जहाज अत्यन्त सफल हुए हैं। इटली के पास १५०० और १८ सौ के दर्मियान हवाई जहाज हैं। इस समय वह २२० मील प्रति घंटा की चाल से ५०० मील तक मार करने वाले जहाज़ तैयार कर रहा है। इससे वह लिबिया से एलैग्जेंड्रिया तक ही नहीं, पोर्ट सईद और दक्षिणी यूनान तक मार कर सकेगा, परन्तु इटली का देश चौड़ाई में छोटा है और

समुद्र तट लम्बा है, इसलिये पड़ोसी शत्रु के लिये उसके देश में किसी भी स्थान पर घुस कर हमला करना बहुत आसान है। फ्रांस की निस्बत इटली की भौगोलिक स्थिति हवाई हमले के ज्यादा अनुकूल है

फ्रांस पहले हवाई शक्ति में बहुत आगे था, पर अब पीछे रह गया है। उसे पुराने सब जहाज़ों को तोड़ फोड़ कर नये ढंग से बनाना पड़ा है, उसके पास १४ सौ से ज्यादा आधुनिक ढंग के जहाज़ नहीं हैं इंगलैंड के पास प्रोग्राम शुरू करने से पहले ८८० जहाज़ थे। अबीसीनिया और भूमध्यसागर में इटली की हलचलों को देख कर उसके कान खड़े हुए। १६३६ के अन्त में उसके पास ११ सौ जहाज़ हो गये, परन्तु इनमें अधिकांश हिन्दुस्तान आदि साम्राज्य के देशों में पड़े हैं। इंगलैंड में कुल ६०० जहाज़ हैं। प्रोग्राम के अनुसार १६३७ के अन्त तक १७५० हवाई जहाज़ हो जाने चाहिये थे —पर इस में विलम्ब हो गया और अब १६३८ में वह शीघ्रातिशीघ्र अपनी कमी को पूरा करना चाहता है।

जापान के पास १६३६ में ८६० जहाज़ थे। अब वह एक हज़ार मील उड़ाने वाले जहाज तैयार कर रहा है, १६३८ मे वह १४०० तक संख्या पहुँचाने की आशा रखता है।

हवाई जहाज़ों पर चलाने की बन्दुकें—इन्हें 'एंटीएयर क्रांफ़्टगन' कहते हैं। पिछले महायुद्ध के दिनों में यह नहीं थीं। परन्तु अब इन 'गनों' का इस्तेमाल बहुत सफल रहता है। एक

कतार में कई तोपें आपस में बिजली द्वारा सम्बन्धित होती हैं, और एक तोप के चलाने से सब तोपें आप से आप गोलियों की वर्षा शुरू कर देती हैं। इस धारावाही गोलाबारी का एक जाल-सा आसमान में बन जाता है, जिसे पार करके शत्रु के जहाज़ आगे नहीं जा सकते और क्योंकि आसमान में वे एक जगह खड़े भी नहीं हो सकते। इसलिए उन्हें पीछे को मुड़ना पड़ता है। पीछे मुड़ते ही उन पर दूसरी धारा छोड़कर पीछे का रास्ता भी बन्द कर दिया जाता है और इस प्रकार जहाज़ को गोलियों की मार से नष्ट कर के गिरा दिया जाता है।

हवाई आक्रमण से रक्षा के लिये 'गनें' अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई हैं। स्पेन में इनकी परीक्षा बहुत सफल हुई है, और इस से हवाई जहाज़ों की भयंकरता कुछ कम प्रतीत होने लगी है। हमारे देश की सरहद पार के युद्ध में भी वहां के लोग अपनी बन्दूकों के निशानों से ही अंग्रेज़ी जहाज़ों को निकम्मा कर देते रहे हैं।

हवाई जहाज़ों को मशीनगनों की मार से बचाने के लिये उनके आसपास बादल छोड़े जाते हैं, ताकि वह दिखाई न दें इस के लिये बहुत बड़े सर्चलाइट लगाये हैं, जिनकी रोशनी बहुत ही तेज़ होती है, इसके द्वारा ६ हज़ार गज़ दूर तक के हवाई जहाज़ दिखाई दे जाते हैं।

एक ऐसा यन्त्र निकाला गया है जो हवाई जहाज़ के शब्द को दूर ही से सुनकर उसकी स्थिति का ठीक ठीक पता देता है।

जिस शब्द को हमारे कान नहीं सुन सकते, उसे यह यन्त्र सुन लेता है। इस के मुक़ाबिले में हवाई जहाजों की मोटरों में ऐसे यंत्र लगाये गये हैं जो उनका शोर बंद कर के उन्हें चुपचाप काम करने को मज़बूर करते हैं। पर मोटरें चुप हो जाँय, वैज्ञानिक चुप बैठने वाले कब थे ? उन्हों ने अब ऐसा यन्त्र ईजाद किया है, जो हवाई जहाज़ की मोटर से निकली हुई गर्मी की किरणों का अनुभव करके उन्हीं की सहयाता से हवाई जहाज़ की स्थिति बतला देता है।

एक प्रकार के हवाई 'टारपीडों' भी निकले हैं। जो बिना किसी आदमी के स्वयं हवा में उड़ेंगे भी। बहुत अधिक ऊंचाई पर उड़ते हुए जहाज़ इन्हें बेतार की शक्ति से चलाएंगे। ये एक प्रकार के भयंकर बम होंगे। इस प्रकार के दो सौ उड़ते हुए टारपीडो को १५-२० ऊपर उड़ते हुए जहाज काबू में रख सकते हैं।

रूस ने बैलूनों में बांध कर बहुत बड़े बड़े जाल लटका दिए हैं, जो शत्रु के हवाई जहाजों को फाँस लेंगे।

टैंक—पिछले महायुद्ध में चलते फिरते क़िलों का आविष्कार हुआ था। टैंक चलते-फिरते किले हैं। अत्यन्त मोटी चादर से मढ़े हुए मोटी चमड़ी वाले इन महाकाय चलते फिरते प्राणियों पर न गोली का असर होता है न बमों का। फिर ये अत्यन्त ऊबड़ खाबड़ जगह पर भी बेखटके चले जाते हैं। पुराणों में महाकाय असुरों की कथाएँ हम पढ़ते हैं, जिनके जिस्म

की खाल इतनी मोटी थी कि तीरों का उन पर असर ही न होता था, और लम्बे लम्बे तीर खाल में ही कहीं घुस कर गायब हो जाते थे। ये टैंक महाकाय दानव ही हैं। ये १८—२० मील प्रति घंटा के हिसाब से चलते हैं। फ्रांस और रूस आजकल ७०—८० टन के बड़े बड़े टैंक बना रहे हैं। ऐसे भी आविष्कार किये जा रहे हैं कि टैंक भी बिना किसी आदमी की सहायता से सिर्फ बेतार से चलाए जांय। पीछे कई सौ मील पर बैठा व्यक्ति "बेतार का तार" हिलायेगा—और टैंक को इच्छित दिशा में चलाएगा। यदि ऐसा हो गया तो भविष्य में लड़ाइयां इंसानों की न रह कर मशीनी दानवों की लड़ाइयां बन जांयगी।

एएटींटैंक—पर टैंकों की चमड़ी को छेदने के लिये भी गोलियां निकली हैं। २५—३० मिलीमीटर मोटी चादर को आसानी से ये गोलियाँ चीर कर अन्दर घुस जाती हैं। अब तो इनसे बचने के लिये ५५ मिलीमीटर की चादर मढ़ी जाय—पर इससे वजन ज्यादा बढ़ जायगा। टैंकों का पीछा करने वाली गाड़ियों पर 'एंटीटैंक गनें' रखी रहती हैं। हमारे देश में जंगली हाथियों को कैद करने के लिये खन्दकें खोदने का रिवाज़ पुराना चला आया है। इन महाकाय टैंकों को पकड़ने के लिये भी खन्दकें खोदी जाती हैं जो ऊपर से दिखाई नहीं देतीं—मगर ऊपर पैर धरते ही यह महाकाय प्राणी खन्दक में गिर कर शत्रु के काबू में पड़ जाती है।

तोपखाना—युद्ध के सामान में तोपखाना तो बहुत पुराना अस्त्र है। आजकल की तोपें बहुत दूर तक सौ सौ मील से भी दूर की मार करती हैं और अब 'रैकेटों' के ज़रिये तो ५०० मील तक की दूरी पर गोले दागने का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। इस का अर्थ है कि लाहौर में बैठा हुआ तोपची दिल्ली तक बहुत आसानी से गोले दाग सकेगा।

युद्ध के ज़माने में जब जमनी की 'बिगबर्था' नामी तोप ने ७५—८० मील की दूरी से पेरिस पर गोले फैंके थे तो बहुत आश्चर्य किया गया था। अब सौ दो सौ मील पर गोला फैंका जा सकेगा। इसमें गोलों की विशेषता है, तोप की नहीं। नये ढंग के गोले बनाए गये हैं जो अत्यन्त वेग से १५—२० मील जाते हैं इतनी दूर जा कर खुद फट जाते हैं। अन्दर से और गोला निकलता है जो पहले गोले के फटने के ज़ोर से और १५—२० मील आगे जाता है। इसके अन्दर से एक तीसरा गोला निकलता है—जो फिर आगे जाता है। इस प्रकार गोला आगे ही आगे बढ़ता जाता है और लक्ष्य तक पहुँचकर भयंकर जनसंहार आरम्भ कर देता है।

रासायनिक युद्ध—रासायनिकों का ध्यान नई नई ज़हरीली गैसें तय्यार करने की ओर है। सरकारें करोड़ों रुपया प्रयोगशालाओं पर खर्च कर रही हैं। 'ल्यूसाइट' नामक गैस की तीन बूंदें शरीर पर पड़ने से मनुष्य मर जायगा! 'फ़ोसजीन'

से दम घुट कर मर जायगा-चूंकि एक बार फेंफड़ों में पहुंचते ही वह फेंफड़ों को हमेशा के लिये बेकार कर देगी। 'मस्टड' तरल गैस हवा से भारी होने के कारण ज़मीन पर ओस की तरह बैठ जाती है। इसी तरह मनुष्य की घात में बैठी रहती है। पास से मनुष्य के गुज़रते ही उसके कपड़ों में आग लग जायगी और बदन की गर्मी पाकर गैस बन जायगी। इस गैस से आंखें सूज जायंगी, सारे शरीर पर फफोले पड़ जायंगे।

गैसों से बचने के लिए नकाब बनाये जा रहे हैं, पर "ब्लूक्रास" नामक गैस नकाब में से भी घुस जाती है। ज़ोर से छींक और उलटी लाती है। मनुष्य को इस प्रकार नकाब उतारने के लिए मज़बूर करके बेहोश भी कर देती है। इसी समय ऊपर से दूसरी गैसों के बम बरसते हैं। और बेहोशी में ही मनुष्य का प्राणान्त हो जाता है।

(३)

हवाई आक्रमण और उससे रक्षा

आक्रमण से तीन प्रकार के खतरे हैं। जिनसे रक्षा के उपाय सोचे जा रहे हैं। हवाई जहाज़ों से बहुत ज़ोर से फटने वाले बम शहरों पर बरसाये जांयगे—जो शहरों को काफ़ी नुक्सान पहुंचायेंगे। इन से रक्षा का अभी तक कोई आसान उपाय नहीं, क्योंकि यदि इन बमों की मार से बचने के लिये रक्षागृह बनाने हों तो उन पर खर्च बहुत आता है। इंगलैंड के

गृहमन्त्री ने इङ्गलैण्ड में इस खर्चे का अनुमान १५०,००,००,००० पौंड बतलाया था। इस सम्बन्ध में इतना ही सम्भव है कि कुछ सार्वजनिक रक्षागृह बनाये जाँय और जनता को अपने लिये रक्षा-गृहों के निर्माण को प्रोत्साहित किया जाय। इस प्रकार के बमों की थोड़ी संख्या के लिए ही हवाई जहाज़ों में स्थान होता है और हवाई जहाज़ों के आते ही, जितना लोग तितर बितर हो जांय, उतना ही वे सुरक्षित रहेंगे। पुराने ज़माने में शहर तंग बनाये जाते थे, ताकि शत्रु की फौजें शहर में घुसें तो तंग गलियों में घुमते हुए उन पर हमला किया जा सके। आजकल हवाई जहाज़ों से बचने के लिये घनी आबादियों को बिखेरा जा रहा है।

दूसरे प्रकार के बम आग लगाने वाले होते हैं। इनके कारण नगर के नगर क्षण भर में सब ओर से जल उठेंगे। बमों में एक 'थर्माइट' नामक पदार्थ भरा होता है जिसके जलने से ३००० डिग्री की गर्मी पैदा होती है और जो चीज़ पास हो, झट जल जाती है। एक हवाई जहाज़ में इतने बम रखे जा सकते हैं जो १५० जुदा-जुदा स्थानों पर आग लगा सकें। इन बमों की लगायी हुई आग को बुझाने में पानी के इंजन असफल रहते हैं, जब तक बम का मसाला सारा जल न जाय। इसके लिये प्रथम तो मकानों की दीवारें और छतें ४ इञ्च मोटी कंक्रीट और सीमेंट की तह से ढकी जा रही हैं। सूखा रेत छिड़कने से भी आग

बुझायी जा सकती है। पानी से यह आग और भड़कती है। अतः जगह जगह सूखे बालू से भरे बक्स रखे जा रहे हैं।

सबसे अधिक भय ज़हरीली गैस के बमों से है। इसके लिये ख़ास तरह की नकाबें तैय्यार करके लोगों को बांटी जा रही हैं। यह सब प्रकार की गैसों से रक्षा करने के लिये काफ़ी हैं। सिर्फ़ जलाने वाली गैस—जिसके लगने से बदन पर फफोले और छाले पड़ जाते हैं और शरीर में विष घुस जाने से तीव्र-यातना होती है, से ये नकाबें भी रक्षा नहीं कर सकतीं। ब्रिटेन जनता को नकाबें बांट रहा है।

इंग्लैण्ड प्रति सप्ताह ५ लाख नकाबें तैयार कर रहा है। एक नकाब की कीमत २ शिलिंग ६ पैंस है। सेना के उपयोग के लिये जो बढ़िया क़िस्म की नकाबें तैयार की जाती हैं। वे ज्यादा महंगी पड़ती हैं। जर्मनी नकाबें बांटने का खर्चा बर्दाश्त नहीं करना चाहता। इटली में इंश्योरैंस कम्पनियाँ अपने पालिसी होल्डरों को मुफ़्त नकाबें बाँट रही हैं।

गैसों से बचने के लिये विशेष प्रकार के रक्षा-गृह भी तैयार हो रहे हैं, जिनमें ८ हज़ार तक आदमी आकर आश्रय लेसकते हैं।

पशुओं और घोड़ों, कुत्तों आदि के लिये भी नकाब बने हैं, पर बिलकुल गोदी के बच्चों—शिशुओं की समस्या कठिन है।

यह स्मरण रखना चाहिये कि ये सब उपाय खतरे को कम करते हैं, बिलकुल हटा नहीं देते। नगरों की रक्षा की कई

पेचीदा समस्याएं हैं, जिनका हाल सोचने के लिये सैनिक रक्षा-विभाग व्यग्र हैं। कुछ अर्सा हुआ इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री श्री बाल्डविन ने कहा था, "हम कितना ही कुछ करें, हवाई जहाज़ों के इन हमलों से पूरी तरह रक्षा पाना असम्भव है।"

(४)

आधुनिक युद्ध नीति

जब श्री बाल्डविन के कथनानुसार हवाई आक्रमण से पूरी रक्षा सम्भव ही नहीं, तो क्यों न पहले ही शत्रु पर भयङ्कर हवाई आक्रमण करके उसे इस योग्य ही न रखा जाय कि वह हमारे शहर पर हमला कर सके। इसलिये "आक्रमण सब से अच्छी रक्षा है" (Immediate offence is the best defence) यह आजकल की युद्धनीति बन रही है।

जर्मन जेनरल लुडेन्डोर्फ़ एक सैनिक विशेषज्ञ की हैसियत से अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के मालिक हैं। आपके कथनानुसार आधुनिक युद्ध, घोषणा किए वगैर जब लड़ने का फैसला किया जाय उसके साथ ही आक्रमण कर दिया जाय और बिना कुछ कहे, सुने या पूछे हवाई जहाज़ शत्रु के बड़े बड़े नगरों, हवाई अड्डों युद्ध सामग्री के कारखानों और समुद्री बेड़ों पर एकाएक भयङ्कर बमवर्षा शुरू कर दें। स्थल सेना दूसरे रोज़ तक तैयार होकर कूच कर सकती है। पर पहला आक्रमण ही शत्रु को सन्धि के लिये मजबूर कर सकता है और स्थल सेना को शायद फिर

बैरकों में ही भेज देना पड़े, पर इसका यह अर्थ नहीं कि बड़ी सेनाएँ व्यर्थ हैं। लुडेन्डार्फ़ का विचार है कि अब भी "विजय बड़ी संख्या पर निर्भर है" (Victory lies in the big battalions) परन्तु दूसरे लोगों का ख्याल है कि बड़ी सेनाएं, रेलवे स्टेशनों, सड़कों, पुलों वग़ैरह पर एकत्र होकर शत्रु के हवाई जहाज़ों का आसानी से निशाना बन जायंगी। जितनी बड़ी सेना होगी, राष्ट्र को उसके भोजन वग़ैरह के लिए उतनी ही परेशानी करनी पड़ेगी और ज्यादा खर्च बर्दाश्त करना पड़ेगा। परन्तु इस बात में श्री लुडेन्डार्फ भी सहमत हैं कि भविष्य में राष्ट्रों के भाग्य का निपटारा करने वाले युद्ध न तो ज़मीन पर लड़े जाँयगे और न पानी पर, बल्कि हवाई जहाज़ों द्वारा शत्रु के नगरों पर भीषण बम वर्षा द्वारा लड़े जाँयगे।

हवाई आक्रमण को इतना महत्व तो दिया जा रहा है, परन्तु स्पेन के युद्ध का तजुर्बा बतलाता है कि हवाई जहाज़ों की शक्ति का कुछ ग़लत अन्दाज़ा लगाया जा रहा है। 'एन्टीएयर-क्राफ़्ट' तोपें बहुत हद तक उन्हें निकम्मा कर देती हैं।

जर्मनी के युद्ध विद्या विशारद "आक्रमण नीति" (Offence) के हामी हैं, परन्तु फ्राँस सुरक्षा (Defence) को अधिक महत्व देता है।

फिर भी किसी तरह की इन्तज़ार तो युद्ध में आत्महत्या के समान होगी। पुराने ज़माने की लड़ाइयों में अगर बहादुरी काम देती थी, तो आजकल की लड़ाई में फुर्ती काम देती है।

(५)

युद्ध विरोधी आन्दोलन

(Pacifism)

यों तो पिछले महायुद्ध के दिनों में भी सम्पूर्ण राष्ट्रों में ऐसे व्यक्ति और गिरोह थे जो युद्ध का विरोध कर रहे थे, और उस मूर्खतापूर्ण नरसंहार का नाम देते थे। इङ्गलैण्ड में मज़दूर दल के नेता श्री रामजेमैक्डानल्ड और दूसरे कई लोग युद्ध विरोधी आन्दोलन के कारण दण्डित भी हुए। परन्तु उस समय इन लोगों की संख्या बहुत कम थी। युद्ध के बाद लोगों ने कुछ समय तक युद्ध की निरर्थकता को खूब अनुभव किया। परन्तु राष्ट्रों की सरकारें एक और महायुद्ध लड़ने की तय्यारी में लगी रहीं। अब जबकि युद्ध-संकट बिलकुल निकट दिखाई दे रहा है, और युद्धों के नये नये भयंकर तरीकों ने जनता के हृदय में भय संचार कर दिया है, शांति रक्षा का युद्ध विरोधी आन्दोलन बहुत ज़ोर से उठा है। जो राष्ट्र इस समय तक युद्ध की पर्याप्त तय्यारी न होने के कारण लड़ाई से बचने के लिये उत्सुक हैं, वे भी परोक्ष रीति से इस आन्दोलन को प्रोत्साहित कर रहे हैं।

इस आन्दोलन के संचालकों का कथन है कि युद्ध और हिंसामय उपायों द्वारा संसार में शान्ति स्थापित नहीं हो सकती क्योंकि साधनों के समान ही परिणाम होता है। वे युद्ध रहित समाज की रचना करना चाहते हैं, इसलिये "सामूहिक रक्षा"

(Collective Security) अन्तर्राष्ट्रीय पुलिस, और आर्थिक बहिष्कार आदि के उपायों को भी वे अच्छा नहीं समझते।

१९३४ में श्री आर. एल. शेप्पर्ड ने लोगों से एक प्रतिज्ञापत्र भरवाना शुरू किया—"मैं युद्ध विरोधी हूं और कभी युद्ध में मदद नहीं दूँगा"। इस प्रतिज्ञा-पत्र पर बड़ी भारी संख्या में लोगों ने दसखत कर दिये। इन दसखत करने वालों की एक यूनियन (Peace Pledge Union) बनाई गई। १९३७ के अन्त में इसके १,४०,० ० मैंबर थे। जिन में २५ स्त्रियां थीं।

जब जापान ने चीन पर हमला किया, और उधर स्पेन में गृह युद्ध शुरू हुआ तब भी इस यूनियन ने अहस्तक्षेप नीति का समर्थन किया और जापान के माल का बहिष्कार करने का विरोध किया, क्योंकि इस के मत में युद्ध में उभयपक्ष में किसी के पक्ष में भी एक दफा हो जाने पर स्वयं युद्ध फंसने का भय रहता है। इस नीति से नाराज़ हो कर कुछ सदस्य यूनियन से हट गये।

कुछ ईसाई चर्च भी इस आन्दोलन के समर्थक हैं, और उन्हों ने अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति रक्षा संघ की रचना की है।

जार्ज लांसबरी ने "शान्ति के दूत" के नाम से आन्दोलन शुरू किया है। वह खुद हिटलर और मुसोलिनी से जा कर मिले। जेकोस्लोवेकिया, पोलैण्ड और आस्ट्रिया के प्रेज़िडेण्टों और प्रधान मन्त्रियों तथा

रूसवल्ट, श्री ब्लम और वानज़ीलैण्ड से भी मिले। उनका उद्देश्य यह था कि इन सबकी सहमति से एक कॉंफ्रेंस बुलाई जाय जिस में सब राष्ट्रों के आर्थिक सम्बन्धों को बेहतर बनाने और उन की आर्थिक कठिनाइयाँ दूर करने के लिये कोई व्यवहारिक योजना तैयार की जाय। यह उद्देश्य बहुत सफल नहीं हुआ।

पार्लियामैंट के युद्ध विरोधी सदस्यों ने एक कॉंफ्रेंस बुला कर एक नया राष्ट्रसंघ (League of Nations) की योजना बनाने का प्रयत्न किया।

एक रचनात्मक प्रयत्न यह भी हो सकता है कि संसार के राष्ट्रों में परस्पर प्रेमभाव बढ़ाने के लिये राष्ट्रीय विपत्तियों में अन्य देशों के स्वयंसेवक जाकर सहायता किया करें। इस के लिए 'शान्ति रक्षक अन्तर्राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ' (International Volunteers for Peace) बना है। इस संघ के स्वयं-सेवकों ने बिहार के भूकम्प के अवसर पर भी अपने स्वयं-सेवक भेजे थे।

अमेरिका में "युद्ध विरोधी संघ" के १५,००० सदस्य हैं। कनाडा, आयर्लैंड और ब्रिटिश उपनिवेशों में भी यह आन्दोलन जारी है।

"अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध विरोधी संघ" की एक कांफ्रेस जुलाई १९३७ में कोपनहेगन में हुई, जहाँ यह बताया गया कि यह संघ ६८ देशों में कार्य कर रहा है। इस संघ के ४०० सदस्य युद्ध

विरोधी आन्दोलन के कारण—जर्मन, पोलैण्ड, फ्रांस, रूस, इटली, बल्गेरिया आदि देशों में कैद थे। क्योंकि मध्य यूरोप के इन देशों में युद्ध विरोधी आन्दोलन की इजाजत नहीं दी जाती।

भारतवर्ष में भी काँग्रेस की ओर से युद्ध विरोधी आंन्दोलन चल रहा है। महात्मा गाँधी और पंडित जवाहरलाल नेहरू इस आन्दोलन के प्रमुख नेता हैं। महात्मा गांधी के लेखों का संसार के अन्य देशों के लोगों पर भी प्रभाव है। हाल ही में भारत सरकार ने सेना में भर्ती के विरुद्ध आन्दोलन को रोकने के लिये कानून बनाया है। अंग्रेज़ी में इस विषय पर बहुत साहित्य प्रकाशित हुआ है। इंगलैंड के दार्शनिक श्री आलडुअस हक्सले (Aldous Huxley) और अन्य लेखकों ने कई किताबें अहिंसावाद के समर्थन में लिखी हैं।

———

ग्यारहवां अध्याय

महिला जागृति और महिला आन्दोलन

समाज में स्त्रियों की स्थिति में समय समय पर परिवर्तन होते रहे हैं। ज्यों ज्यों माननीय अधिकारों की सीमाएं बढ़ती गई हैं, स्त्रियों की अधिकार सीमा भी विस्तृत होती गयी है। जब जब उदार, क्रांतिकारी या तर्कप्रधान विचारों का प्रचार हुआ, स्त्रियों के अधिकार बढ़ गये जब प्रतिगामी विचार प्रचलित हुए तो अधिकार भी कम हो गये, १८६८ में जर्मन सोशलिस्ट 'कुगेकमान' को आधुनिक वैज्ञानिक साम्यवाद के प्रसिद्ध संस्थापक कार्लमार्क्स ने एक पत्र लिखा था, जिस में कहा था कि 'कोई समाज सामाजिक विकास और उन्नति की किस सीढ़ी पर है, इसे यदि नापना हो तो यह देखना चाहिए कि उस समाज में स्त्रियों की स्थिति और उनके अधिकार क्या हैं।"

अत्यन्त प्राचीनकाल में जब समाज में वृद्ध-तन्त्र था - अर्थात् परिवार का वृद्ध-गृहपति ही सब कुछ था, और सारी सम्पत्ति का भी वही स्वामी था, उस ज़माने में स्त्री की स्वतन्त्र स्थिति या हैसियत कुछ भी नहीं थी। प्राचीन बेबीलोन में स्त्री कारोबार कर सकती थी, जायदाद रख और बेच सकती थी। यूनानी लेखकों ने मिश्र की स्त्रियों की स्वतन्त्रता का वर्णन किया है। यूनान में स्त्री बाप भाई पति आदि के आधीन थी, जो उसे बेच भी सकते थे। सोलन ने इस प्रथा को हटा दिया। स्पार्टा में औरतें शासन कार्य करती थीं और मर्द लड़ते थे। ज़मीन जायदाद सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी भी स्त्रियां होती थीं। एथेन्स में स्त्रियों के स्कूल नहीं थे, परन्तु स्पार्टा में स्त्रियों को व्यायामशालाओं में भी दाखिल कर लिया जाता था। वहाँ उनके लिये पृथक् स्कूल भी थे। प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो का विचार था कि जहाँ तक राज्यकार्य का सम्बन्ध है, पुरुष तथा स्त्रियों की प्रकृति में कोई भेद नहीं है, इसलिए जो अधिकार और कर्तव्य पुरुषों के हैं, वही स्त्रियों के भी होने चाहिएं। परन्तु अरस्तू का यह विचार नहीं था। उसकी राय में पुरुष को प्रकृति ने श्रेष्ठ बनाया है, और शासन करने के लिये पैदा किया है। पैरीक्लिस का विचार है कि स्त्री का सम्मान करना चाहिए, उन्हें तारीफ़ करके खुश भी रखना चहिये, पर सामाजिक अधिकारों में उन्हें हिस्सा बाँटने की इजाज़त न होनी चाहिए। भारत में भी हम

स्त्रियों के सम्बन्ध में कई प्राचीन लेखकों में इस प्रकार का विचार भेद देखते हैं। रोमसाम्राज्य के ज़माने में स्त्रियों की स्वतन्त्रता बहुत बढ़ गयी थी, परन्तु जब ईसाइयत का ज़माना आया तो उनकी सब स्वतन्त्रता छिन गयी।

अधिकांश कट्टर धर्मवादियों की तरह ईसाई धर्मवादियों के भाव भी स्त्रियों के प्रति बहुत बुरे थे। टर्टुलियन के शब्दों में "स्त्री शैतान के घर का दरवाज़ा है" उसका सहवास मनुष्य को पाप के गढ़े की ओर ले जाता है और उसकी छाया से भी बच कर रहने में भलाई है।—यह हीन विचार ईसाइयत के साथ सर्वत्र यूरोप में फैल गये और रोमन काल की स्वतन्त्रता स्त्री से छीन ली गयी। इस प्रवृत्ति के बिलकुल बराबर अपने देश में हम बौद्धों के ज़माने में इसी प्रवृत्ति को देखते हैं। बौद्धों से पहले स्त्रियाँ बहुत स्वतन्त्र थी—यज्ञों में बराबर पुरुषों के साथ बैठती थीं और उनके बगैर यज्ञ सम्पूर्ण नहीं समझा जाता था। जहाँ बौद्ध धर्म ने मानव हित आदि के कई अत्यन्त उदार और सार्वभौम विचार संसार को दिये, वहाँ जीवन के प्रति अत्यन्त वैराग्य वृत्ति और सन्यास वृत्ति के कारण स्त्रियों के प्रति अत्यन्त अवज्ञा के भाव उत्पन्न कर दिये। महात्मा बुद्ध स्त्री और पुत्र के जंजाल को त्याग कर ही 'बुद्ध' बन सके थे, इसलिये समझा गया कि स्त्री ही परम कल्याण के मार्ग में बाधक है। इस हीन भावना ने समाज में स्त्री की स्थिति को गिरा

दिया। और सामाजिक क्रिया-कलाप और दूसरे कामों में उसका सहचरी का दर्जा छिन गया था।

'फ्यूडलिज्म' या सामन्तशाही के ज़माने में तो वे बिलकुल दासियां ही बन गयीं। जर्मन कानून के अधीन स्त्री बिलकुल अपने पति के अधीन थी। विवाह पवित्र बन्धन है, इसलिये तलाक़ की आज्ञा नहीं। इस समय स्त्री परिवार में बिलकुल उपेक्षित अवस्था में चली गयी उसकी शिक्षा-दीक्षा और संस्कृति तो कुछ थी ही नहीं।

आधुनिक पूंजीवाद के युग से पहले स्त्री आर्थिक कार्यों में तो भाग लेतीं थीं, परन्तु अपने लिये नहीं, बल्कि परिवार की आमदनी बढ़ाने के लिए। उदाहरण के लिये कपड़े बुनने के व्यवसाय पर स्त्री का एकाधिकार था। इङ्गलैंड में उन्हें कुछ अधिक स्वतन्त्रता मिल गयी थी और वे लेनदेन, साहुकारा और दुकानदारी का काम करने में आज़ाद थीं। फ़ौज के लिये उन्हें कपड़े तैयार करने के ठेके भी दिये जाते थे। मगर पूंजीवाद का युग आने पर ग़रीब श्रेणी की स्त्रियाँ तो कारखानों में मेहनत मज़दूरी करने लगीं—क्योंकि कारखानों ने धीरे धीरे उनका कपड़े का व्यवसाय तबाह कर दिया था, और दूसरा कोई तरीका गुजारे का न था, परन्तु धनी वर्ग की स्त्रियाँ बिलकुल निठल्ली हो गयीं। जीवन और रहन-सहन में यह भेद आ जाने के कारण दोनों की सामाजिक स्थिति में भी फर्क आ गया। श्रमी श्रेणी की औरतों

पर परिवार की आमदनी निर्भर थी—इसलिए परिवार में उनकी ताकत, उनकी पूछताछ और सन्मान ज्यादा हो गया। परिवार के नियन्त्रण से आज़ादी मिलजाने और कारखानों में दूसरों से मेल जोल बढ़जाने से उनका जीवन का दृष्टिकोण भी बदला—दृष्टिकोण में कुछ भौतिकवाद का अंश अधिक आ गया।

फ्राँस की राज्य क्रांति के ज़माने में 'समानता' की आवाज़ उठायी गयी, और इस समानता में स्त्री की समानता भी शामिल थी। परन्तु जब १७८९ को राष्ट्र सभा (National Assembly) में स्त्रियों के एक गिरोह ने स्त्रियों के अधिकारों की घोषणा करने को कहा, तो यह प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया। रूसो का विचार था कि स्त्री की शिक्षा दीक्षा की उपयोगिता और आवश्यकता उसी सीमा तक है जहां तक कि वह पुरुष के लिए लाभदायक है। इंगलैंड में बैंथम समुदाय ने तो स्त्रियों के लिए कुछ न किया, परन्तु प्रसिद्ध समाजवादी (सोशलिस्ट) राबर्ट आवेन के शिष्य विलियम थाम्सन ने "मानव जाती के एक आधे अंग की दूसरे आधे अंग से अपील" के नाम से १८२५ में एक पुस्तक लिखी। १८३१ की "श्रमियों के राष्ट्रीय संघ" ने सब बालकों को मताधिकार दे देने की मांग की, जिस में स्त्रियों को भी शामिल किया। जानस्टुअर्ट मिल ने १८६७ के "सुधार बिल" में स्त्रियां के लिए मताधिकार का संशोधन पेश किया, परन्तु यह बहुमत से गिर गया। मिल ने "औरतों की

गुलामी' (Subjection of Women) नामक पुस्तक लिखी, जो सारी दुनियां में बड़े चाव के साथ पढ़ी गयी और सब देशों में स्त्रियों की स्वतन्त्रता का आन्दोलन शुरू हुआ।

इंगलैंड में १८६७ में "स्त्रियों का मताधिकार संघ" स्थापित हुआ। २० वीं सदी के आरम्भ में वहां इस आन्दोलन ने बहुत ज़ोर पकड़ा। सार्वजनिक प्रदर्शन किये गये। १६०३ एमेलाइन पैंखर्स्ट नामी महिला के नेतृत्व में स्त्रियों ने मिल कर भूख हड़तालें की। श्रीमती पैंखर्स्ट के साथ उन की लड़की क्रिस्टाबेल भी थी। १६०७ में इंगलैंड में स्त्रियों को म्युनिसिपल चुनावों में भाग लेने का अधिकार मिल गया। परन्तु आन्दोलन बहुत जोर से जारी रहा।

यूरोप में फ्रांस की क्रान्ति समाप्त होने पर स्त्रियों की स्वतन्त्रता की मांग भी दब गयी। १८४८ में फ्रांस का विधान बनाने वाली कमेटी के सामने स्त्रियों को मताधिकार देने का प्रश्न लाया गया, पर इसे किसी ने न माना। १८७०—७१ के पेरिस की स्त्रियों ने भी एक क्रांति-दल संगठित किया। १८७६ में फ्रांस के सामाजवादियों की कांफ्रेंस में स्त्रियों के समान अधिकारों का समर्थन किया गया, जो उसके बाद समाज वादीदल का सिद्धांत बना रहा।

जर्मनी में १८४८ में लुईस 'ओटोपीटर्स' ने, जो क्रांतिकारी आन्दोलन में भाग ले रहा था, अपने प्रोग्राम में

स्त्रियों की स्वतन्त्रता को भी रखा। जर्मनी के समाज वादियों ने बहुत बाद में स्त्रियों के अधिकारों का समर्थन किया। १८६६ में जर्मन समाजवादियों की एक कान्फ्रेंस में सब नागरिकों के लिये समान मताधिकार की मांग की गयी, पर इन अधिकारों में स्त्रियों का हिस्सा न था। जर्मनी में १६०८ तक जर्मन सरकार स्त्रियों के राजनीतिक आन्दोलन को कुचलती रही।

२० वीं सदी के प्रथम दशक में लेनिन के अनुयायी साम्यवादियों ने अपने दल की पुष्टि की और स्त्रियों के अधिकार की घोषणा की। लेनिन ने स्त्रियों की दासता का अन्त करना अपने प्रोग्राम का आवश्यक अंग बनाया और पूँजीवाद के शोषण का अन्त करने के लिये इसे बहुत आवश्यक कहा।

अमेरिका में १७८७ में यह सवाल राज्यों की अपनी मर्ज़ी पर छोड़ा गया। ज़ैफ़र्सन स्त्रियों को अधिकार देने का विरोधी था। उसका कथन था कि लोकतन्त्र से स्त्रियों को बिलकुल अलहदा रखा जाय, नहीं तो लोकतन्त्र का नैतिक पतन हो जायगा। औरतें यदि सार्वजनिक सभाओं में पुरुष के साथ बैठने लग गयीं तो अनर्थ हो जायगा। १८४८ में न्यूयार्क में एक सभा बनी जिसने स्त्रियों की कानूनी अयोग्यताओं और मताधिकार न देने के खिलाफ़ आवाज़ उठायी। आर्थिक क्षेत्र में आवाज़ उठी कि श्रमी स्त्रियों को, जब वे पुरुषों के बराबर काम करें तो उनके बराबर ही मजदूरी मिलनी चाहिये।

युद्ध के बाद—युद्ध से पहले स्त्रियां युद्ध-विरोधी आंदोलन में प्रमुख थीं, पर सब देशों में उन्होंने युद्ध में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। युद्ध के दिनों में यदि स्त्रियां सहायता न करतीं और राष्ट्र रत्ता के बहुत से काम सम्भाल न लेतीं, तो इंगलैंड और उसके साथी राष्ट्रों को एक भारी मुसीबत का सामना करना पड़ता। कई लोगों का तो यहाँ तक कहना है कि जर्मनी की हार का एक कारण यह भी था कि उसे अपने यहाँ की स्त्रियों से वैसी सहायता नहीं मिली। युद्ध के दिनों में स्त्रियों ने जिस खूबी के साथ राष्ट्र प्रबन्ध को चलाया, उसने उनकी योग्यता के और सार्वजनिक कार्यों में कुशलता के सम्बन्ध में सब लोगों की धारणाएँ बदल दीं। स्त्रियों ने नियन्त्रण भी पूरा कायम रखा जिसके टूट जाने का पहले अधिकांश लोगों को खतरा था। इंगलैंड की स्त्रियों की सहायता और सहानुभूति प्राप्त करने के लिये प्रधान मंत्री आस्क्विथ ने, जो पहले हमेशा स्त्रियों के अधिकारों का विरोधी रहा था, १९१७ में एक बिल पेश किया जिस में किसी हद तक स्त्रियों को मताधिकार दिया गया था। परन्तु १९२९ के बाद जाकर इंगलैंड में स्त्रियों को पुरुषों के बिलकुल बराबर मताधिकार मिले।

प्रेज़िडेण्ट विलसन भी जो पहले स्त्रियों को मताधिकार देने का विरोधी था, अब इक देने के पक्ष में हो गया और उसने १९१८ में जो मताधिकार का सुधार पेश करवाया उसे "युद्ध

जीतने के लिये अत्यावश्यक" बतलाया। यह १६२० में पास होकर अमेरिका में कानून बन गया।

जर्मनी के नये 'वीमर' विधान में स्त्रियों को समान अधिकार दिये गये। फिनलैण्ड में १६०६ में मताधिकार मिल गया था।

सोविएट रूस ने १६१७ में स्त्रियों को सब तरह पुरुषों के बराबर अधिकार दिये। फ्राँस में युद्ध के बाद, चेम्बर आफ़ डिपुटोज़ स्त्रियों के मताधिकार की सिफारिश करता रहा, पर वहाँ की सीनेट इसे रद्द करती रही। १६२५ में पेरिस की म्युनिसिपेलिटी के लिये १ स्त्रियों का चुनाव वहाँ की आदालत ने इसी आधार पर रद्द कर दिया कि उन्हें कहीं भी चुनाव के लिये खड़े होने का अधिकार नहीं है। इटली में फासिस्ट नेता स्त्रियों का सार्वजनिक कार्यों और राजनीतिक में हिस्सा लेना पसन्द नहीं करते। १६३१ में स्पेन के लोकतन्त्र ने स्त्रियों को अधिकार दे दिये।

एशिया में—एशिया में इस समय सब कहीं स्त्रियों की स्थिति ऊँची हो रही है। इस्लामी देशों में इस्लाम के कानून के अनुसार स्त्रियों को जायदाद के अधिकार प्राप्त हैं, जो ईसाइयों के कानून में प्राप्त नहीं हैं। परन्तु वहाँ बहु-विवाह और पर्दे की प्रथा उनकी दासता का कारण बने हुए हैं। टर्की में १६०८ में स्त्रियों ने अपना संगठन बनाया। कमालपाशा

ने सब दासता के बन्धन काट दिये और १६२५ में जो कानून बना उसके अनुसार उन्हें सब अधिकार समानरूप से प्राप्त हो गये। शहरों में अधिकांश स्त्रियाँ पर्दा उतार रही हैं और बहु-विवाह की प्रथा बन्द करदी गई है। देहातों में पर्दा अभी है। फारस और अफगानिस्तान यद्यपि इस विषय में बहुत पीछे हैं, परन्तु वहाँ शहरी कुलीन घराने की स्त्रियों को छोड़ कर, बाकी देहातों की स्त्रियाँ पुरुषों के साथ हर काम में हिस्सा बंटाती है और खुली घूमती हैं। आम लोगों में पर्दा नहीं है परन्तु अब इन देशों में भी बहुत जल्दी उन्नती हो रही है। मिश्र में 'कासिम अमीन' के लेखों ने स्त्रियों के अधिकारों की ओर लोगों का ध्यान खींचा। १६१६ में वहाँ स्त्रियों ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध क्रांति में प्रमुख भाग लिया और जब नए विधान में उन्हें मताधिकार न मिला तो उन्हों ने इस बात का विरोध किया।

भारत में महिला जागृति का आंदोलन एक जीवित आँदोलन है, यद्यपि दुनियाँ भर के देशों की तरह यहाँ भी योग्य नेतृत्व का अभाव है। यह आँदोलन अभी कुछ कुलीन और धनी वर्ग की स्त्रियों तक सीमित है, यद्यपि जागृति का प्रभाव देशव्यापि हैं। योग्य नेतृत्व इस जागृति को एक अच्छे आन्दोलन के रूप में सङ्गठित करके एक शक्ति पैदा कर सकता हैं। ब्रिटिश सरकार ने सिवाय शिक्षा सम्बन्धी कुछ कामों के स्त्रियों के लिये अन्य कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं किया भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन स्त्रियों के अधिकारों का समर्थक है, और मुसलमान भी जो

अन्य राजनीतिक मामलों में अपना कुछ न कुछ भिन्न मत रखते हैं स्त्रियों के अधिकारों के विरोधी नहीं हैं।

चीन में १९२२-२६ में क्रांतिकारियों ने स्त्रियों के अधिकारों का समर्थन किया। चिआंगकाई शेक, जिनके हाथ में राष्ट्र की बागडोर है, स्त्रियों के अधिकारों के बहुत समर्थक नहीं। यद्यपि स्वयं उनकी स्त्री राज्यकार्यों में उन का पूरा हाथ बंटाती है, और वह अभी चीन जापान युद्ध के आरम्भ में युद्धमन्त्री के पद पर रही है और स्वयं उनकी युद्ध भूमि में सेना संचालक भी रही है।

जापान में बौद्ध और कनफ्यूसियस मत स्त्रियों की हीनी स्थिति के लिये ज़िम्मेवार हैं। १८९८ में वहां कुछ कानून भी बने "शिनफुजिन कुकाई" —(नव-महिला संघ) और बाद में 'श्रम स्त्री सघ' ने, जो १९२१ में कायम हुआ—कई दफ़ा पूर्ण राजनीतिक, कानूनी, आर्थिक और शिक्षा सम्बन्धी अधिकारों की मांग की। १९२६ में वहां अधिक लोगों को मताधिकार दिया गया—पर स्त्रियां फिर भी वंचित रहीं। वहां की सरकार औरतों के आन्दोलन का दमन करती रहती है।

सामाजिक अधिकार—राजनीतिक क्षेत्र के अतिरिक्त सामाजिक क्षेत्र में स्त्रियां जायदाद में उत्तराधिकार, विवाहित स्त्रियों के लिये स्वतन्त्र नागरिक के अधिकार, कारखानों में काम करते हुए विशेष पुरुषों के समान वेतन और छुट्टी आदि के अधिकारों की मांग कर रही हैं।

बच्चों को रखने के अधिकार भी पुरुषों के बराबर होने चाहिये। इस के अतिरिक्त शराब-बन्दी, वेश्याप्रथा का विनाश, सन्तान सीमाबन्धन कानून और गर्भ के लिये बीमे का सरकार की ओर से प्रबन्ध, कारखानों के कानून में उचित परिवर्तनों की भी मांग हो रही है।

उनके अधिकारों की मांग के जवाब में दूसरी तरफ से यह कहा जाता है कि वे प्रायः अधिकारों का इस्तेमाल ही नहीं करतीं। इङ्गलैंड की पार्लमैंट का तर्जुबा है कि वे प्रायः उसी पक्ष में वोट देती हैं, जिसमें उनके पति होते हैं। जो स्वतन्त्रता राय देती हैं वे प्रायः अनुदार दल (कसर्वेटिव पार्टी) की राय देती हैं। वैसे भी वे कम चुनी जाती हैं।

जर्मनी में नाज़ीवाद के आगमन से राजनीतिक क्षेत्र स्त्रियों के लिये फिर बन्द हो गया। क्योंकि वर्तमान जर्मन राष्ट्र नेताओं के मत में उनका मुख्य काम "श्रमियों और योद्धाओं को उत्पन्न करना" है। इसके बिलकुल विपरीत सोविएट रूस का सिद्धान्त है कि समाजवाद तब तक भली भांति चल ही नहीं सकता, जब तक स्त्रियां मर्दों का साथ पूरी तरह न दें। वहां पर स्त्रियां ऊँचे पदों पर हैं। औरतों की फ़ौज भी बनायी गयी थी—परन्तु बाद में कुछ कठिनाइयां देखकर तोड़ दी गयी। कम्युनिस्ट पार्टी में और कम्युनिस्ट कांग्रेस में स्त्रियां प्रमुख भाग लेती हैं। १९३१ की कांग्रेस में १६ फ़ी सदी स्त्री सदस्याएं थीं। अब संख्या और भी ज्यादा है।

शिक्षा में समानता—१९वीं सदी में लड़कियों की शिक्षा का आरम्भ हुआ। १८५० में अमेरिका में लड़के लड़कियों की सहशिक्षा की प्रथा का आरम्भ हुआ। परन्तु यूरोप के रोमन कैथोलिक देशों में सहशिक्षा का सख्त विरोध हुआ। इसलिये लड़कियों के पृथक स्कूल जारी किये गये। यद्यपि इनकी पाठविधियां प्रायः वही होती हैं जो लड़कों के स्कूलों में। परन्तु लड़कियों के स्कूलों की पढ़ाई का 'स्टैंडर्ड' बहुत नीचा रहता है और लड़कियों का सांसारिक ज्ञान (General Knowledge) बहुत कम होता है।

जर्मनी में १९०१ तक लड़कियां मैट्रिक पास नहीं कर सकती थीं। १९३४ में जर्मनी की नाज़ी सरकार ने नियम कर दिया है कि जर्मन यूनिवर्सिटियों में जितने कुल विद्यार्थी दाखिल हों उनको संख्या के १० फ़ीसदी से ज्यादा स्त्रियां दाखिल न की जांय।

सोविएट रूस में सब स्कूल कालेज खुले हैं। १९३२ में वहां व्यावसायिक स्कूलों में कुल विद्यार्थियों की संख्या का २८.९ फीसदी स्त्रियां थीं। १९३४ में डाक्टरी पढ़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या ४ लाख ८० हज़ार थी। जिसका ७४ फ़ीसदी स्त्रियां थीं। इस प्रकार वहां स्त्रियों को सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त हैं। परन्तु सोविएट सरकार स्त्रियों के पृथक सङ्गठन के विरुद्ध है और उन्हें पुरुषों से पृथक कोई संघ बनाने की इजाज़त नहीं देती—

क्योंकि इससे स्त्री पुरुष की भिन्नता बढ़ती है, जो कि समानता के अधिकार में बाधक है।

भारत में नए सुधारों से लगभग ६० लाख स्त्रियों को मताधिकार मिल गया है (१६१६ के विधान में करीब लगभग ३ लाख को मताधिकार था) स्त्रियों के मुकाबले में मर्द वोटरों की संख्या लगभग २ करोड़ ६० लाख है। संघ की व्यवस्थापिका सभा में उन्हें २५० में से ६ और कौन्सिल में १५० में से ६ सीटें देने की व्यवस्था की गयी है।

बारहवां अध्याय

आधुनिक भाषाएँ और साहित्य

(१)

संसार की भाषाएं

अन्दाज़ा लगाया गया है कि संसार में सब मिलकर २७९६ मुख्य-मुख्य भाषाएं बोली जाती हैं। कुछ मुख्य भाषाओं की सूची तथा उनमें से प्रत्येक के बोलने वालों की संख्या नीचे दी जाती है।

संसार की मुख्य-मुख्य भाषाएं और उन्हें बोलने वालों की संख्या—

	बोलने वालों की संख्या
अमेरिका (इंडियन)	५,००,०००
अरबी	२,५०,००,०००
आस्ट्रेलियन मूल निवासियों की भाषा	१५०,०००
बास्क (पश्चिमी पिरेनीज़ प्रर्वत शृङ्खला की घाटियों में बोली जाने वाली अनार्य भाषा	५००,०००
बङ्गाली	५,००,००,०००
बलगेरियन	४५०००००
बर्मी	७००००००
चीनी (अनेक भेद)—	४३०००००००
ज़ेच	८५,००,०००
डेनिश, नार्वे और स्वीडिश	१२००००००
द्राविड़ भाषाएं	६, ५०,००,०००
डच	१०००००००
अंग्रेज़ी	१८०००००००
एस्किमो	३००००
एस्पेरेण्टो	१०००००
फ़िनिश	३००००००
फ्रेंच	४५००००००

गेलिक (आयरिश और स्काटिश)	६०००००
जर्मन भाषा	८,०००,०००
जिप्सी	५००००००
ग्रीक	५५०००००
हिन्दी	१३,००,००,०००
हङ्गरियन (मगयार)	२०००००००
इटालियन	४०००००००
जापानी	५५००००००
मलाया	१००००००
पोलिनेशियन	५०००००००
फारसी	१०००००००
पोलिश	३०००००००
पोर्चुगीज़	३७००००००
पश्तो	५००००००
रूमानियन	१६००००००
रूसी	८५००००००
सियामी	५००००००
सिंहली	३००००००
स्पेनिश	६५००००००
टर्किश	७००००००
वेल्श	२००००००

उपर्युक्त भाषाओं में से अंग्रेज़ी में ७ लाख शब्द हैं, जिनमें

से लगभग ३ लाख ऐसे हैं, जिनका आम साहित्य में प्रयग नहीं होता। जर्मन कोष के अनुसार जर्मन भाषा में ३ लाख शब्द हैं। फ्रेंच में २१० हज़ार, रूसी भाषा में १४० हज़ार इटालियन (रोमन) भाषा में १४० हज़ार शब्द हैं।

(२)

अन्तर्राष्ट्रीय भाषाएं

इस ज़माने में मानव जाति एक दूसरे के इतना अधिक सम्पर्क में आ गयी है कि भाषाओं का भेद अखरता है, और प्रति दिन कई व्यावहारिक अड़चनें पैदा होती हैं। इसलिए कुछ भाषा विशेषज्ञों ने अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं के आविष्कार किए हैं।

१८७६ में जर्मन विद्वान जोहान श्लेयर ने वोलापक भाषा का आविष्कार किया। १८८७ में वार्सा निवासी डाक्टर जेमेनोफ़ ने 'एस्पेरेंटो' का आविष्कार किया। १८८८ में स्पेलिन भाषा और १८६० में "सोंडोलिंग" का आविष्कार हुआ। १८६३ में जर्मनी के यूजेन हैंज़लर ने 'यूनिवर्सल' का आविष्कार किया। १६०७ में भाषा शास्त्रियों की एक अन्तर्राष्ट्रीय सभा ने "इडो" नामी भाषा का आविष्कार किया।

इन सब आविष्कारों में प्रथम प्रयत्न नई भाषा के नियम सादे रखने की ओर है। परन्तु यह स्पष्ट है कि अन्तर्राष्ट्रीय भाषाएं भी इतनी संख्या में निकल आई हैं, और सम्भव है अन्य भाषाओं की तरह ये भी भाषाओं की संख्या वृद्धि मात्र करें।

यदि संकुचित पक्षपात पर मनुष्य विजय पा सके तो यह कोई कठिन बात नहीं कि सब से अधिक प्रचलित भाषा में आवश्यक-सुधार करने के बाद उसे सार्वभौम भाषा का पद दे दिया जाय। परन्तु अभी इसमें सफलता की शीघ्र आशा दिखाई नहीं देती।

(३)

'नोबेल' पुरस्कार

आलफ़र्ड नोबेल स्वीडन का एक वैज्ञानिक भी था, जिसने 'डिनेमाईट'का आविष्कार किया था। अपने पीछे बहुत सा-धन छोड़ कर वह १८९६ में मरा। उसने वसीयत की थी कि उसके धन से जो सूद मिले उससे कुछ पुरस्कार संसार के विशेष व्यक्तियों को दिए जाँय। सूद की आमदनी पाँच भागों में बाँट दी जाती है—रसायन शास्त्र (कैमिस्ट्री) भौतिक शास्त्र (फ़िज़िक्स) चिकित्सा (फिज़िओलोजी) साहित्य और शान्ति। १९०१ में पहला इनाम दिया गया था, १९१३ में ठाकुर रवीन्द्रनाथ को साहित्य का 'नोबेल' पुरस्कार उनकी "गीतांजलि" पुस्तक पर मिला और १९३० में श्री सी० वी० रमन को फ़िज़िक्स का इनाम मिला। भारतीयों में अब तक ये दो महानुभाव ही पुरस्कार के हकदार बने हैं। उत्तम साहित्य लिखने के कारण जिन महानुभावों को यह पुरस्कार मिली है उनमें से कुछ प्रमुख के नाम ये हैं—

रुडियार्ड किपलिंग, रोमारोलां, अनातोले फ्राँस, जार्ज बर्नार्डशा, यीट्स, थामस मान, सिंक्लेयर लुइस, हैनरी बर्गसन, एटिक एक्सेल कार्ल फ़ेट, रवीन्द्रनाथ गाल्सवर्दी, लूगी पीरांडेलो।

(४)

पुस्तकालय

पुस्तकालयों का रिवाज बहुत पुराना है। प्राचीन समय में किताबों का संग्रह मन्दिरों में किया जाता था। प्राचीन असीरिया में मिट्टी के १ से १२ वर्ग इंच तक की तख्तियों पर चित्र-लिपि में लिखी हुई पुस्तकों का एक बहुत बड़ा पुस्तकालय मिला है, जिसमें १० हज़ार पुस्तकें थीं और बाकायदा उनके सूचीपत्र आदि थे। यह एक सार्वजनिक पुस्तकालय था। इस प्रकार के पुस्तकालय प्राचीन मिश्र, रोम और कुस्तुनतुनिया में भी थे। आजकल छापे की वजह से साहित्य की उन्नति अत्यधिक है और संसार में बड़े बड़े पुस्तकालय हैं।

इङ्गलैण्ड के ब्रिटिश म्यूजियम में ३२ लाख छपी हुई और ५६ हज़ार हस्तलिखित पुस्तकें हैं। १७५३ से इस समय तक ३१२६ अखबारों की फ़ाइलें रखी हैं। इंग्लैण्ड की 'पेटेन्ट आफ़िस लायब्रेरी' में भी २ लाख २० हज़ार पुस्तकें हैं। नेशनल आर्ट लायब्रेरी में डेढ़ लाख पुस्तकें और ढाई लाख फ़ोटोग्राफ़ हैं। साइन्स 'म्यूज़ियम' (वैज्ञानिक पुस्तकालय) में एक लाख ७० हज़ार पुस्तकें हैं। इंडियन आफ़िस' के पुस्तकालय में एक लाख ३० हज़ार पुस्तकों के अतिरिक्त १५ हज़ार हस्तलिखित पुस्तकें भी हैं। इन पुस्तकालयों के अतिरिक्त शिक्षा केन्द्रों और कालेजों के अपने बड़े बड़े पुस्तकालय हैं। 'ट्रिनीटी कालेज' के

पुस्तकालय में एक लाख छपी हुई और दो हज़ार हस्तलिखित पुस्तकें हैं। लंडन की युनिवर्सिटी के पुस्तकालय में तीन लाख किताबें हैं। कई पुस्तकालय व्याख्यानों का भी प्रबन्ध करते हैं। फ्रांस का "बिब्लियोथिक नैशनल" दुनियां में सबसे अधिक सुन्दर पुस्तकालय है। १६२७ में इसमें ४४ लाख छपी पुस्तकें, १ लाख २२ हज़ार हस्तलिखित और २ लाख ४८ हज़ार मैडल आदि थे। जर्मनी अपने पुस्तकालयों के लिए विख्यात है। बर्लिन की "फ्रेडरिक विलियम लायब्रेरी" २१ लाख अच्छे चुने हुये ग्रन्थ और ५६८१० हस्त लेख हैं।

भारतवर्ष में इन सब के मुकाबले में पुस्तकालय बहुत कम हैं। कलकत्ता की 'इम्पीरियल लायब्रेरी' में सिर्फ १ लाख ५२ हज़ार पुस्तकें हैं। रायलएशियाटिक सोसायटी बंगाल के पुस्तकालय, में जो १७८४ में कायम हुआ था, एक लाख ३५ हज़ार छपी हुई और २० हज़ार हस्तलिखित पुस्तकें हैं। इसकी बम्बई शाखा में (१८०४ में स्थापित) १ लाख छपी और दो हज़ार हस्तलिखित पुस्तकें हैं।

लाहौर की यूनिवर्सिटी लायब्रेरी में ५४ हज़ार पुस्तकें हैं। राजा तन्जौर का पुस्तकालय १६वीं सदी में कायम हुआ था और उसमें १८ हज़ार बहुत चुने हुए ग्रन्थ देवनागरी, नन्दीनागरी, तेलगू, मलयालम, बंगाली, पञ्जाबी और काश्मीरी भाषा में हैं। ८ हज़ार ग्रन्थ ताड़पत्रों पर लिखे हुए रखे हैं।

(५)

समाचारपत्र

समाचारपत्र आज की दुनियां की जान हैं। दुनियां का सब से पुराना समाचारपत्र "पीकिंग-गजेट" है, यह लगातार एक हज़ार साल से निरन्तर प्रकाशित हो रहा है। इस समाचारपत्र के ५०० से अधिक सम्पादक प्राणदण्ड पा चुके हैं। चीनियों को छापे के तरीके का बहुत प्राचीन काल से ज्ञात था। इंग्लैंड में पहले पहल १६२० में "वीकलीन्यूज" के नाम से पहला अंग्रेज़ी अखबार प्रकाशित हुआ। रूटर की संवाद एजेन्सी १८४० में कायम हुई। हिन्दुस्तान में पहला समाचार पत्र ७० जनवरी १७८० को 'बंगाल गज़ेट' के नाम से निकला। १७६१–१७६६ में बिना मुकद्दमा चलाये कई अंग्रेज़ पत्र सम्पादकों को हिन्दुस्तान से निर्वासित किया गया।

१८३२—१८३३ में पेरिस में अखबार रेशम पर छपते थे। स्पेन में एक पत्र 'लैम्प' के नाम से निकलता था, जो एक विशेष प्रकार की फ़ास्फोरस मिश्रित स्याही से छापा जाता था, जो रात को भी चमकती थी और अन्धेरे में भी पढ़ा जा सकता था।

संसार में समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता का आदर्श तो सब स्वीकार करते हैं, परन्तु उनकी स्वाधीनता बहुत सीमित है। आजकल राष्ट्रों के परस्पर वैमनस्य और संकुचित राष्ट्रीयता के कारण सब देशों में समाचारपत्रों को सरकार के इशारों पर चलना पड़ता है।

तेरहवां अध्याय

मानव समाज प्रगति की राह पर

ईसा से लगभग छः सौ वर्ष पहले चीन में एक बड़ा दार्शनिक महापुरुष हो गुज़रा है। इस महापुरुष का नाम था लाओज़ेट् (La-ot-ze)। इसका दर्जा चीन के प्रसिद्ध धर्मप्रवर्तक कनफ़्यूशियस के बराबर था। उसके समय में संसार के अन्य देशों की तरह चीन में भी सभ्यता का सूर्य अपने पर था। चीनी लोग जंगलों को साफ़ करके उन्हें हरे भरे खेतों में तबदील कर रहे थे, और एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिये सड़कें और पुल बनाने उन्हों ने अभी सीखे ही थे। इस प्रकार चीन में यह "नयी सभ्यता" दिन प्रति दिन उन्नति पर थी। चीन के इस महान दार्शनिक ने चीन में फैलती हुई इस "नयी सभ्यता" के विरुद्ध बहुत ज़ोर से आवाज़ उठायी, और चीनियों से अपनी "प्राचीन सर्वोच्च सभ्यता" के आदर्श पर चलते रहने की

प्रेरणा की। उसने सड़कों और पुलों की "नवीन बुराई" का विरोध करते हुए चीनियों से कहा "वह समय कैसा अच्छा था, जब सब लोग शान्ति से जङ्गलों में जीवन बिताते थे। कन्द मूल और वन्यफल खाकर अपना गुज़ारा कर लेते थे।" उसने चीनियों को बतलाया कि उनकी 'नयी सभ्यता' विषमय है और वह शीघ्र ही उनके पतन और विनाश का कारण बनेगी।

चीनियों पर उसकी इस चेतावनी का असर न हुआ। उसकी अन्य बहुत-सी शिक्षाओं को मान कर उसे अपने ज़माने का पैगम्बर मान लिया। परन्तु इस 'चेतावनी' पर ध्यान न दिया। सभ्यता ने उन्नति की रफ़्तार जारी रखी और आने वाली सदियों में चीन अपनी सभ्यता और विद्वत्ता के लिए विश्वविख्यात हो गया।

हर ज़माने में प्रत्येक देश में ऐसे विचारक हुआ करते हैं, जो अपने जीवनकाल में अपने ज़माने की प्रगतिशील प्रवृत्तियों का घोर विरोध किया करते हैं। मनुष्य जाति की निरन्तर बहने वाली प्रगति की धारा के आन्तरिक रहस्यों और कारणों को भली भाँति समझने में असमर्थ होने के कारण वे लोगों को बार बार "पुनः प्राचीन युग की ओ" का उपदेश दिया करते हैं। उन्हें संसार का भविष्य सदा अन्धकारपूर्ण और भूत सदा उज्वल और रौशन दिखाई देता है। आज तक हज़ारों कोशिशें की गयीं, परन्तु मानव जाति की प्रगति की लहर को रोका नहीं जा सका।

पिछले पृष्ठों में हमने 'आज की दुनियां' की एक हल्की-सी झलक देखी। 'आज की दुनीयां' बहुत ही शीघ्र 'कल की दुनीयाँ' हो जायेगी। ज़माना इस तेज़ रफ़्तार से बदल रहा है। संसार का इतिहास हमें बतलाता है कि दुनियां इसी तरह सिलसिलेवार परिवर्तनों की राह में से गुज़र कर निरन्तर एक दिशा में बढ़ती चली जा रही है। ज़रा गहराई से देखने पर हम उन सूक्ष्म धाराओं का कुछ अनुभव करते हैं, जो मानव जाति को चला रही हैं, और ये धाराएं हमें किस लक्ष्य की ओर ले जा रही हैं, इसे भी हम अनुभव कर सकते हैं। मानव इतिहास संसार के दीर्घकाल के इतिहास का एक छोटा-सा पन्ना प्रतीत होता है। जहां संसार का इतिहास अरबों साल पुराना है, वहां मनुष्य जाति का इतिहास अभी कुछ लाख साल से अधिक पुराना नहीं — और मानव सभ्यता का आरम्भ तो कुछ हज़ार साल पहले ही हुआ है। प्रकृति के साथ निरन्तर युद्ध करते, और एक-एक करके प्रकृति के किले फतह करते, आज मनुष्य वर्तमान स्थिति पर पहुँचा है, जहां से उसका पीछे लौट सकना असम्भव दिखाई देता है। जिस दिन मनुष्य ने प्रकृति से युद्ध छेड़ा था, उसने अच्छा किया अथवा बुरा, परन्तु जब वह एक बार यह जंग छेड़ चुका, तो उसके लिये इसे बन्द करके पीछे मुड़ना असम्भव हो गया है। भले ही कुछ व्यक्तियों के लिये यह मुमकिन हो जाय कि वे "आदम" के पापों का प्रायश्चित्त करते हुए "बुद्धि-वाद' को सदा के लिये नमस्कार करके वर्तमान सभ्यता की

तरक्की से 'तोबह' करें और दुनियां से उपराम हो कर जंगल में जा बैठें, पर सारी दुनियां के लिये न तो यह सम्भव है और न अभीष्ट ही। आज मनुष्य अपनी तरक्की से खुश है, अपनी कामयाबी पर फूला हुआ है और भविष्य में अपने उन्नति के चरम लक्ष्य की खोज में है। उसे इस मार्ग से हटाने का प्रयत्न व्यर्थ है।

एक प्रबल लहर के वेग में समस्त मानव जाति बड़े वेग के साथ बह रही है इस वेग के सामने वे ताकतें कैसी छोटी, कैसी तुच्छ और कैसी व्यर्थ दिखाई देती हैं, जो आज भी भिन्न मज़हब, भिन्न सभ्यता और भिन्न संस्कृत के नाम पर मनुष्य की तरक्की के आस पास कृत्रिम दीवारें खड़ी करना चाहती हैं। 'मनुष्य' के पुराण-विश्वरूप और महान जीवन के सामने ये ताकतें सिसकती हुई मालूम होती हैं, जो कुछ समय पश्चात् भूत हो जायेगी। वह समय दूर नही, जब मनुष्य अपनी प्रगति की आवश्यकताओं और अन्तः प्रेरणाओं से मजबूर हो कर इन संकुच दायरों से बाहर निकल आयगा। इसमें सन्देह नहीं कि अभी सब कौमें अपने पुराने ईर्षा द्वेष और वैमनस्य के भावों से सर्वथा मुक्त नहीं हुई। अभी हमें रह रह कर कौमों की परस्पर युद्ध के लिए ललकारें चुनौतियां, और युद्धभेरियों की गगनभेदीं तुमुल ध्वनियां सुनाई देती हैं, अब भी पद-दलित और पीड़ा से कराहते हुए मनुष्य समाज के रोम रोम से निकल कर आता हुआ हाहाकार हमारे हृदय को विचलित और भयभीत बना देता है। अभी

सम्पूर्ण मनुष्य जाति की शिक्षा-दीक्षा ऐसी और इतने परिणाम में नहीं हुई कि वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण से काम ले सके। परन्तु 'आज की दुनियाँ' का रुख और समय की लहरों का बहाव उसी तरफ़ है और निकट भविष्य में ही मनुष्य मानवता के ऊंचे आदर्श को अपनाने वाला है। विभिन्नताएँ धीरे-धीरे दूर हो रही हैं। फ़सिस्ट और नाज़ी साम्राज्यवादी और उग्र राष्ट्रवादी, मज़हबी दीवाने और संप्रदायवादी, ये सब मौजूदा ज़माने के मानव समुदाय की वास्तविक भावनाओं के प्रतिनिधि नहीं। एक तेज़ धारा का वेग जब इन बाधाओं को ज़ोर से मार्ग से दूर फैंक देता है, तो किनारे पर, जहां धारा का वेग कम होता है, ये कुछ भंवरों और घुमरघेरों के रूप में उलटी दिशा में चलना आरम्भ कर देते हैं, पर इनकी इस गति का प्रधान धारा पर कोई असर नहीं होता और न इन पीछे जाने वाली किनारे की निर्बल धाराओं से कोई मुख्य धारा की दिशा का ही अन्दाज़ा लगाता है। संसार के इतिहास के युद्ध, परस्पर संघर्ष, घृणा, अत्याचार और असहिष्णुता की कहानियों से भरे हुये पृष्ठों के भीतर से 'मानवीय एकता' के लक्ष्य के लिये तड़पती हुई मनुष्य की आत्मा आज हमें स्पष्ट नज़र आ रही है।

इति

हिंदी भूषण परीक्षा की सहायक पुस्तकें

भारतवर्ष के इतिहास की प्रश्नोत्तरी

(दूसरा भाग)

[ले०—ला० सोमदत्त सूद, अध्यापक कन्या-महाविद्यालय, जालंधर]

इस पुस्तक में प्रो० वेदव्यास और प्रो० गुलशनराय के भारतवर्ष के इतिहास के आधार पर वास्कोडिगामा के भारत-प्रवेश से लेकर आज तक का भारतवर्ष का इतिहास प्रश्न और उत्तर के रूप में दिया गया है। मूल्य ।=)

हिन्दी साहित्य के इतिहास की प्रश्नोत्तरी

[श्री गोपाल शरण व्यास]

इस पुस्तक में हिन्दी साहित्य का सारा इतिहास प्रश्न और उत्तर के रूप में समझाया गया है। परीक्षा में पूछे जाने वाले प्रायः सभी प्रश्न इसमें आ गये हैं।

भारतवर्ष के इतिहास का चार्ट (वर्तमान युग)

इसमें भारत का वर्तमान युग का इतिहास दिया गया है। मूल्य ≡)

हिन्दी भवन, अनारकली, लाहौर

हिंदी भूषण परीक्षा की सहायक पुस्तकें

लोकोक्तियाँ और मुहावरे

[ले०—डा० बहादुरचंद शास्त्री एम. ए., एम. ओ. एल., डी. लिट्.]

लोकोक्तियों और मुहावरों का ठीक ठीक प्रयोग जानने के लिए डा० बहादुरचंद्र कृत "लोकोक्तियाँ और मुहावरे" नामक पुस्तक खरीदिए। इसमें लोकोक्तियाँ और मुहावरों के अर्थ तथा उनको अपने वाक्यों में किस तरह प्रयोग किया जाता है, यह सब भली भाँति दिखाया गया है। मू० ॥) मात्र।

सरल-पत्र-लेखन

(ले०—श्री केशवप्रसाद शुक्ल विशारद)

इसमें घरेलू पत्र, व्यवहारिक पत्र, निमन्त्रण पत्र और अर्जी आदि लिखने का ढंग बड़ी सरल भाषा में समझाया गया है। पत्र लिखना सीखने के लिए सर्वोत्तम पुस्तक। हिन्दी मिडिल, हिन्दी-रत्न, हिन्दी-भूषण और मैट्रिक के प्रत्येक विद्यार्थी के पास यह पुस्तक ज़रूर होनी चाहिए। मू० ।) मात्र।

अभिषेक नाटक की कुंजी

(ले०—ला० रामकृष्ण शास्त्री, हिन्दी प्रभाकर)

इसमें अभिषेक नाटक के अंकों की कथा का संक्षेप, कठिन शब्दों और सब पद्यों के अर्थ, प्रधान पात्रों का चरित्र-चित्रण और नाटक-संबंधी परिभाषाएँ दी गई हैं। पुस्तक लेते समय श्री रामकृष्ण शास्त्री हिन्दी-प्रभाकर तथा हिन्दी भवन का नाम ध्यान से देख लें। मूल्य ।)॥

हिंदी भवन, अनारकली, लाहौर